भारत का भूगोल

कक्षा 10 के लिए पाठ्यपुस्तक

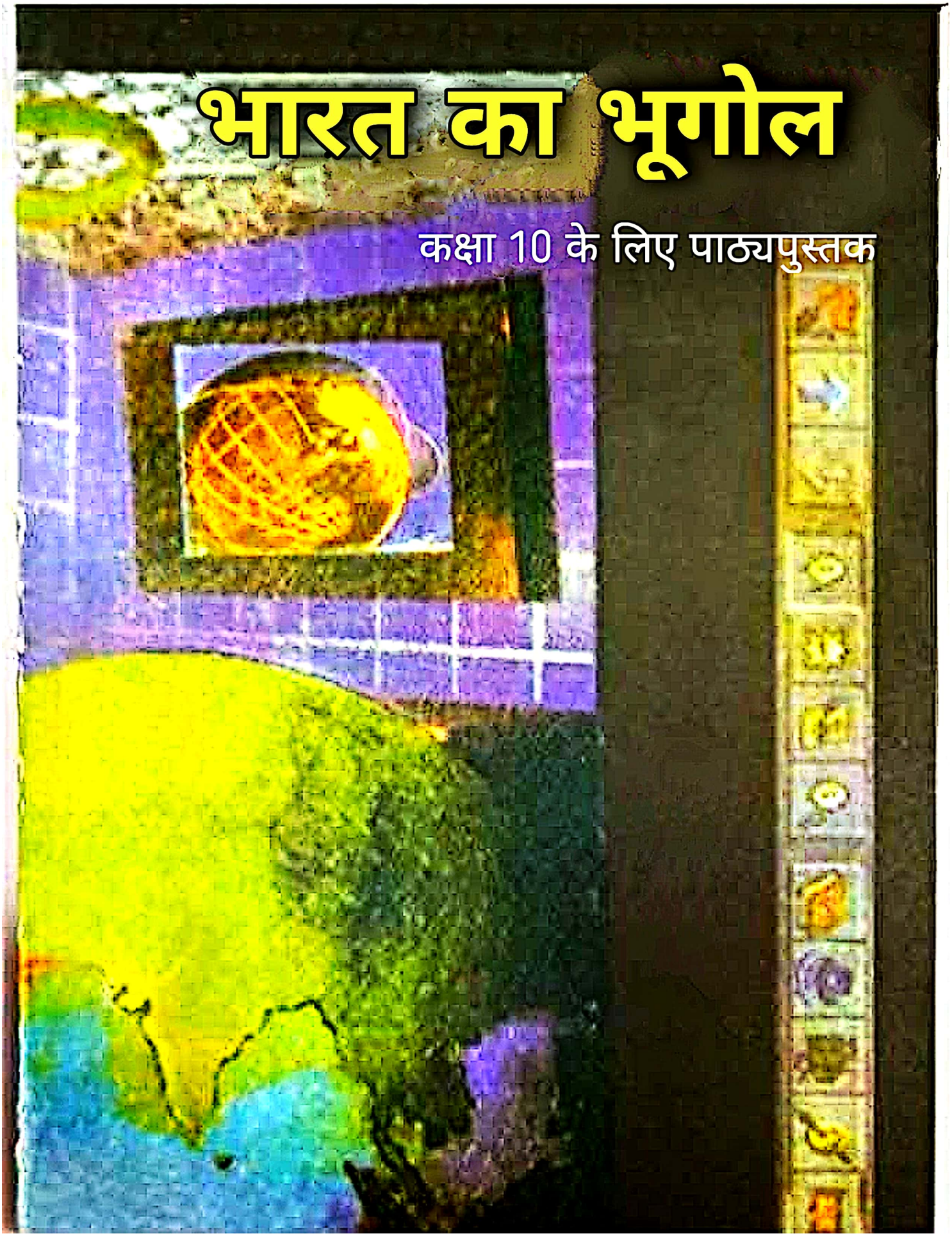

भारत का भूगोल

कक्षा 10 के लिए भूगोल की पाठ्यपुस्तक

भालचंद्र सदाशिव पारखे

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

आमुख

"भारत का भूगोल" 10+2 शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत कक्षा 10 के लिए निर्मित भूगोल की पाठ्यपुस्तक है। यह "भारत : आर्थिक भूगोल" नामक पाठ्यपुस्तक का पूर्णतः संशोधित रूप है, जिसका प्रथम संस्करण 1990 में प्रकाशित हुआ था। यद्यपि इस पुस्तक के बाद के संस्करणों में गौण परिवर्तनों को समाविष्ट किया गया था, विभिन्न क्षेत्रों में हुए परिवर्तनों और विकास को देखते हुए, इस पुस्तक का पूर्ण संशोधन बहुत दिनों से अपेक्षित था। प्रस्तुत पुस्तक और इसका पूरक खंड "पर्यावरण बोध" जो कक्षा 9 के लिए निर्मित है, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा माध्यमिक कक्षाओं के लिए विकसित भूगोल के पाठ्यक्रम पर आधारित है। इस पाठ्यक्रम का विकास राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को ध्यान में रखते हुए किया गया था। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति और "कार्यक्रम योजना" में दिए कुछ केंद्रिक शिक्षाक्रम क्षेत्रों जैसे "पर्यावरण की सुरक्षा", "वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास" तथा "लिंगों की समानता" का समुचित समावेश इस पुस्तक की विषय-वस्तु में किया गया है।

मनुष्य-पर्यावरण अंतर्क्रियाओं के विश्व-प्रारूपों का समुचित ज्ञान और समझ प्राप्त करने के बाद, विद्यार्थी इस स्तर पर अपने देश की आर्थिक प्रगति के स्थानिक और कालिक आयामों का अध्ययन और विश्लेषण करने के लिए पूर्णतः सक्षम हैं। इससे उन्हें समसामयिक मुद्दों और समस्याओं को विवेकपूर्ण तरीके से समझने के लिए आवश्यक एक व्यापक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता मिलेगी।

सामान्य शिक्षा के अंग के रूप में भूगोल शिक्षण के व्यापक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक में व्यावहारिक दृष्टिकोण को अपनाया गया है। अतएव मूल संकल्पनाओं की समझ एवं कुशलताओं के विकास पर बल दिया गया है। "करने के द्वारा सीखने" को बढ़ावा देने के लिए क्रियाकलापों का चयन ध्यानपूर्वक किया गया है, जिससे विद्यार्थियों में आवश्यक भौगोलिक कुशलताओं जैसे "मानचित्रों और आरेखों को पढ़ना और उनकी व्याख्या करना", "आंकड़ों का अभिकलन, दृश्यरूप में प्रदर्शित करना एवं उनका विश्लेषण", "शाब्दिक सूचनाओं को दृश्यरूप में और दृश्य सूचनाओं को शाब्दिक रूप में परिवर्तित करना" आदि के विकास में सहायता मिलेगी। पुस्तक में दिए गए तथ्य और सूचनाएँ स्वयं में साध्य नहीं हैं अपितु वे साधन के रूप में उपयोग करने के लिए हैं।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् प्रो. भालचंद्र सदाशिव पारख का आभारी है, जिन्होंने बहुत अल्प समय में इस पुस्तक का नया संशोधित संस्करण तैयार किया है। इस पुस्तक के मानचित्र और आरेख बनाने के लिए हम "कार्टोग्राफिक सर्विसेज़" के श्री संजीव कुमार के भी कृतज्ञ हैं।

इस पुस्तक का हिंदी संस्करण सामाजिक विज्ञान और मानविकी शिक्षा विज्ञान में प्रो. सविता सिन्हा द्वारा किया गया है। श्री मो. अख्तर हुसैन और डॉ. मो. शैलुल हक़ ने इस पुस्तक को अंतिम रूप देने और प्रकाशित करने के विभिन्न चरणों पर सहायता की है। उनके योगदान के लिए हम उनके आभारी हैं।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् इस पुस्तक के किसी भी पहलू पर उसमें सुधार लाने की दृष्टि से प्राप्त टिप्पणियों और सुझावों का स्वागत करेगी।

जगमोहन सिंह राजपूत
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
अप्रैल 2000

विषय-सूची

खंड एक : भौतिक विन्यास 1

अध्याय 1 भौतिक लक्षण 3
अध्याय 2 जलवायु 19

खंड दो : हमारे प्राकृतिक संसाधनों का आधार 37

अध्याय 3 वनस्पति, जीव-जन्तु तथा मृदा 39
अध्याय 4 भूमि उपयोग तथा जल संसाधन 51
अध्याय 5 खनिज तथा शक्ति के संसाधन 64

खंड तीन : कृषि और उद्योग 83

अध्याय 6 कृषि 85
अध्याय 7 उद्योगों का विकास 111

खंड चार : भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखाएँ 129

अध्याय 8 व्यापार, परिवहन तथा संचार 131

खंड पाँच : मानव संसाधन का विकास 155

अध्याय 9 मानव-संसाधन आधार 157

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ:

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

M. Gandhi

ध्यान दें

क्र. सं.	पृष्ठ	कॉलम	पंक्ति संख्या	मुद्रित शब्द/वाक्य	संशोधित पंक्ति
1.	ii	1	5	डॉ. मो. शैलुल	डॉ. मो. शैनुल
2.	5	1	15	सात है?	आठ है?
			19	इनकी संख्या 7 है।	इनकी संख्या 6 है।
3.	7	1	9	सन् 1865 में स्वेज़ नहर...	सन् 1869 में स्वेज नहर..
4.	10		मानचित्र	भारत उपहाद्वीप भौतिक उच्चावच	भारत उपमहाद्वीप - प्रायद्वीपीय खंड
5.	12	1	21	उत्तर प्रदेश और नेपाल	उत्तरांचल
			26	प्रदेश में तिब्बत-हिमालय सड़क पर शिपकीला है।	प्रदेश में सतलुज घाटी में शिपकीला दर्रा है।
		2	7	उत्तर प्रदेश के कुमांयु	उत्तरांचल के कुमांयु
6.	14	1	12	गंगा नदी लगभग 1900 किलोमीटर लंबी है।	गंगा नदी लगभग 2500 किलोमीटर लंबी है।
7.	16	2	15	भारत का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी यहीं स्थित है।	भारत का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी यहीं के बैरन द्वीप में स्थित है।
			26	इस प्रायद्वीप की पृथकता	इस उपमहाद्वीप की पृथकता..
8.	17		प्र.2(ग)	हिमाद्री और शिवालिक	पश्चिमी हिमालय और पूर्वी हिमालय
			प्र.3(क)	दो प्राचीन भूखंडों के बीच स्थित विस्तृत संकरा और उथला समुद्र	भूवैज्ञानिक काल में दो प्राचीन भूखंडों के बीच स्थित विस्तृत लंबा और उथला समुद्र
9.	18		प्र.7(छ)		नीलगिरी पर्वत
10.	20		स्वंय करने के लिए 3 (अ)	दो महीने	दो स्थान
			3 (ट)	दो महीने	दो स्थान
11.	24	2	3	(लगभग 20° द और 140° प.)	(लगभग 18° द. और 149° प.)
			6	(12° उ.द. और 131° पू.)	(12° 30' द और 131° पू.)
12.	25	2		ग्रीष्म ऋतु 1st, 5th, आखरी पंक्ति के ऊष्मा को उष्ण पढ़ें।	
13.	36		प्र.7(ग)	50 सें.मी. से कम वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र	20 सें.मी. से कम वार्षिक वर्षा होने वाले क्षेत्र
14.	42	1	3	पश्चिमी बंगाल के मैदानों	पश्चिमी घाट के वर्षा वाले ढालों, पश्चिम बंगाल के मैदानों
15.	44	1	24	टुइयां तोते (पैराकोट)	टुइयाँ तोते (पैराकीट)
		2	17	(क) नंदा देवी (उत्तर प्रदेश)	(क) नंदा देवी (उत्तरांचल)

16.	48	1	23	...तथा पीले रंगों की अनेक आभाएँ दिखाई पड़ती हैं। रंग की आभाओं वाली लाल	....तथा शेल दक्षिण-पूर्वी आधे भाग पर लाल और पीले मिट्टी पाई जाती है।
17.	49		प्र.3	पर्वतीय प्रदेशों की ऊंचाई से संबंधित वनस्पति...	हिमालयी प्रदेश में ऊंचाई के अनुसार वनस्पति...
18.	62		प्र.1(क)	कृषि योग्य.....	प्रति व्यक्ति कृषि योग्य....
19.	63		प्र.4(ख)	शुद्ध बोया गया क्षेत्र और बोया गया क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र और बोया गया कुल क्षेत्र
20.	66	11 – –		...अलावा मध्यप्रदेश के रायपुर सारणी 5.3 सारणी 5.2 और 5.3 अलग से दी गई है।	....अलावा छत्तीसगढ़ के रायपुर सारणी 5.4
21.	68	1 2	20 13	बिहार, गुजरात... बिहार के हजारीबाग, गया और मुंगेर जिलों से आता है।	झारखंड, गुजरात.... हजारीबाग (झारखंड), गया और मुंगेर(बिहार) जिलों से आता है।
22.	71	2	18	सतपुड़ा पर्वत श्रेणी तथा मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ के	सतपुड़ा पर्वत श्रेणी तथा छत्तीसगढ़ के.....
23.	72	1	10	बिहार, उड़ीसा...	....झारखंड, उड़ीसा....
24.	76	1	11	हमारे परमाणु खनिज का भंडार बिहार के....	हमारे परमाणु खनिज का भंडार झारखंड के.....
25.	113	1	2	बिहार में झरिया....	झारखंड में झरिया....
26.	119	2	17	जब 1907 में बिहार के जमशेदपुर,...	जब 1907 में बिहार (अब झारखंड) के जमशेदपुर...
27.	120	2	1	केन्द्रीयकरण पश्चिमी बंगाल बिहार; उड़ीसा तथा मध्यप्रदेश..	केंद्रीयकरण पश्चिमी बंगाल, झारखंड, उड़ीसा तथा छत्तीसगढ़...
28.	126	2	11	..मध्य एशिया के देशों को किया गया।	...पश्चिम एशिया एवं अफ्रीका के देशों को किया गया।
29.	144	2	12,16	कांधला	कांधला
30.	146	1	22	इसका स्थल रूद्र पोताश्रय...	इसका स्थल रूद्ध पोताश्रय....
31.	161	2	13	हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश का उत्तराखंड	हिमाचल प्रदेश एवं उत्तरांचल

32. 158 सारणी 9.2 का 7 वां बिन्दू तीसरा कॉलम 846.3 को 844.3 पढ़ें।

संपूर्ण पुस्तक के लिए पढ़ें –

1. भारत की नई राज्य सीमाओं के लिए चित्र 1.1 का संशोधित मानचित्र
2. कलकत्ता को कोलकाता
3. दक्षिण/दक्षिण-पूर्वी बिहार को झारखंड
4. पूर्वी मध्य प्रदेश को छत्तीसगढ़
5. बिहार के सिंहभूम को झारखंड के सिंहभूम

पृष्ठ-66

सारणी 5.2

खनिजों एवं खनिज ईंधनों के उत्पादन की प्रवृत्तियाँ (1950-51) से (1997-98)

खनिज/खनिज ईंधन	1950-51	1997-98
लौह अयस्क (करोड़ टन)	0.30	7.15
बाक्साइट (करोड़ टन)	0.01	0.58
कोयला (करोड़ टन)	3.23	31.90
पेट्रोलियम (करोड़ टन)	0.03	3.39
प्राकृतिक गैस (अरब घन मीटर)	--	25.0

पृष्ठ-67

4. बड़े-बड़े बाँधों के गुण और दोषों पर अन्तर्राष्ट्रीय बहसें होती रही हैं। अतः बड़े बाँधों के बारे में अध्ययन करने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गई। इसके अनुसार बड़े बाँधों की संख्या बढ़ रही है। सारणी 5.3 में इनसे संबंधित उपयुक्त आंकड़े दिए गए हैं। ये सभी बाँध 10 मीटर से अधिक ऊँचें हैं। इस सारणी का अध्ययन कीजिए और उसके नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

सारणी 5.3

देश	बड़े बाँध	
	नवीन स्थिति	निर्माणाधीन
चीन	85	311
जापान	11	140
कोरिया	2	125
भारत	48	76
सं० राज्य अमेरिका	30	55
इटली	0	37
ट्यूनीसिया	16	28
अल्जीरिया	6	27
ईरान	1	76
फ्रांस	8	12
ब्राज़ील	4	12

(i) उन देशों के नाम बताइए जिनमें भारत से अधिक बड़े बाँध हैं।

(ii) क्षेत्रफल में भारत से छोटे किन देशों में अधिक बाँध हैं?

(iii) बड़े बाँधों के पक्ष-विपक्ष में दी गई दलीलें मालूम कीजिए।

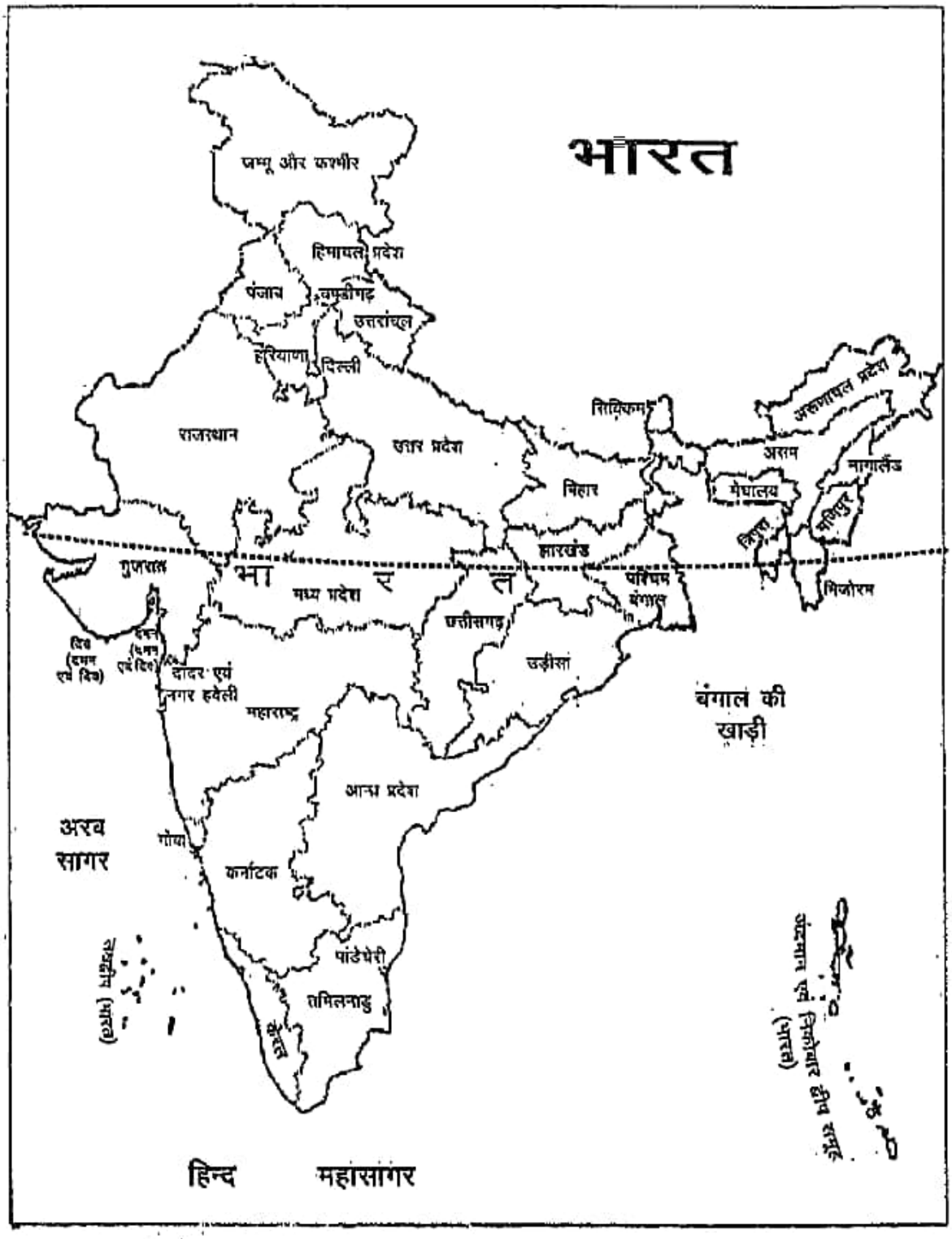

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 2001
- भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
- आंतरिक विवरण की शुद्धता का दायित्व प्रकाशक का है।
- समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गए बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
- चण्डीगढ़, पंजाब तथा हरियाणा के प्रशासी मुख्यालय चण्डीगढ़ में हैं।
- अरुणाचल प्रदेश, असम, मेघालय की अन्तर्राज्यीय सीमाओं का मानचित्र में अंकन "उत्तरपूर्वी क्षेत्र" के राज्य के पुनर्गठन अधिनियम 1971 के अनुसार किया गया है। किन्तु इनका प्रमाणीकरण अभी किया जाना है।
- भारत की बाहरी सीमाएँ व तटरेखाएँ भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा प्रमाणित रिकॉर्ड/मास्टर प्रति के अनुरूप हैं।
- उत्तरांचल और उत्तर प्रदेश, झारखंड और बिहार, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश की राज्यीय सीमाएँ जो इस मानचित्र पर दिखाई गई हैं, वे संबंधित सरकारों द्वारा प्रमाणित नहीं हैं।

चित्र 1.1 भारत — राजनैतिक

भारत गणतंत्र में 28 राज्य और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली को लेकर 7 केन्द्र शासित प्रदेश हैं। राज्य और अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की भिन्नता आप कैसे पहचानते हैं?

खंड एक

भौतिक विन्यास

हमारे देश के भौतिक विन्यास अर्थात् (i) स्थिति तथा आकार, (ii) संरचना तथा उच्चावच, और (iii) जलवायु की दशाओं ने हमारी सभ्यता के विकास, विश्व के प्रति हमारे दृष्टिकोण तथा भारतीय मानस के मूल लक्षणों को एक आधार प्रदान किया है। इस खंड को "भौतिक लक्षण" तथा "जलवायु" के दो अध्यायों में विभाजित किया गया है। इन भौतिक लक्षणों तथा जलवायु के आधार पर भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास की गति का मूल्यांकन तथा बोध हो सकता है।

ये अध्याय सामान्य रूप से भारतीय उपमहाद्वीप तथा विशेष रूप से भारतीय संघ की मूलभूत एकता को उजागर करते हैं। इससे भारत के भू-आकृतिक विभागों की पूरकता स्पष्ट होती है। भारत की स्थिति तथा इसके पर्वतों के अध्ययन द्वारा मानसूनों से प्रभावित इसकी जलवायु को समझना सरल है। पर्वतों से घिरे इस भारत देश में मानसून की नाटकीय गतिविधियाँ चलती रहती हैं। विविधता से भरी हमारी इस भारत भूमि को मानसून पवनें जलवायु की एकता प्रदान करती हैं। देश के भौतिक विन्यास की पृष्ठभूमि में अगले खंड के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन तथा बोध हो सकेगा।

अध्याय 1

भौतिक लक्षण

भारत एक विशाल देश है। इसका क्षेत्रफल 32.8 लाख वर्ग किलोमीटर है। इतने विस्तार वाला होते हुए भी इसका राजनीतिक अस्तित्व सुगठित है। यह संसार का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इसमें बहुत-सी विविधताएँ हैं। विभिन्न प्राकृतिक दशाओं में बहुभाषा-भाषी, भिन्न-भिन्न धर्मानुयाई, शहरी एवं ग्रामीण लोग साथ-साथ स्नेहपूर्वक रहते हैं। वास्तव में इसकी यह विविधता ही इसकी यथार्थ शक्ति का अजस्त्र स्रोत है। आगामी पृष्ठों में हम इसी का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

सीखने के अनेक तरीके हैं। उनमें स्वयं करके सीखने का तरीका सबसे अच्छा है। इस प्रकार जब आप किसी परिणाम या निष्कर्ष पर पहुँचेंगे तो आपको कुछ सीखने की खुशी मिलेगी। इस दृष्टि से यहाँ और अगले अध्यायों में दिए गए क्रियाकलाप बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे।

स्वयं करने के लिए

भारत के विषय में आप पहले से ही काफी कुछ जानते हैं। प्रस्तावित क्रियाकलाप आपके ज्ञान को पुष्ट करने में सहायक होंगे। इससे आप आगे दिए गए पाठ्य-सामग्री को समझने के लिए तैयार हो जाएँगे। मूल तथ्यों की जानकारी तथा प्रारंभिक अध्ययन निम्नलिखित बातों तक सीमित हैं—(i) स्थिति तथा आकार, और (ii) अंतर्राष्ट्रीय सीमाएँ।

स्थिति तथा आकार

1. भारत की मुख्य भूमि के दक्षिणी छोर का अक्षांश ज्ञात कीजिए।
2. भारतीय संघ के दक्षिणतम बिन्दु तथा दक्षिण छोर में कितने अंशों का अंतर है, यह ज्ञात कीजिए।
3. भारत के उत्तरी छोर का अक्षांश ज्ञात कीजिए।
4. देश के उत्तर से दक्षिण के कुल विस्तार की गणना कीजिए : (i) अक्षांशों में, और (ii) किलोमीटर में। प्रति अक्षांश दूरी लगभग 111 किलोमीटर है।
5. कच्छ में स्थित भारत के पश्चिमी सिरे का देशांतर ज्ञात करके लिखिए।

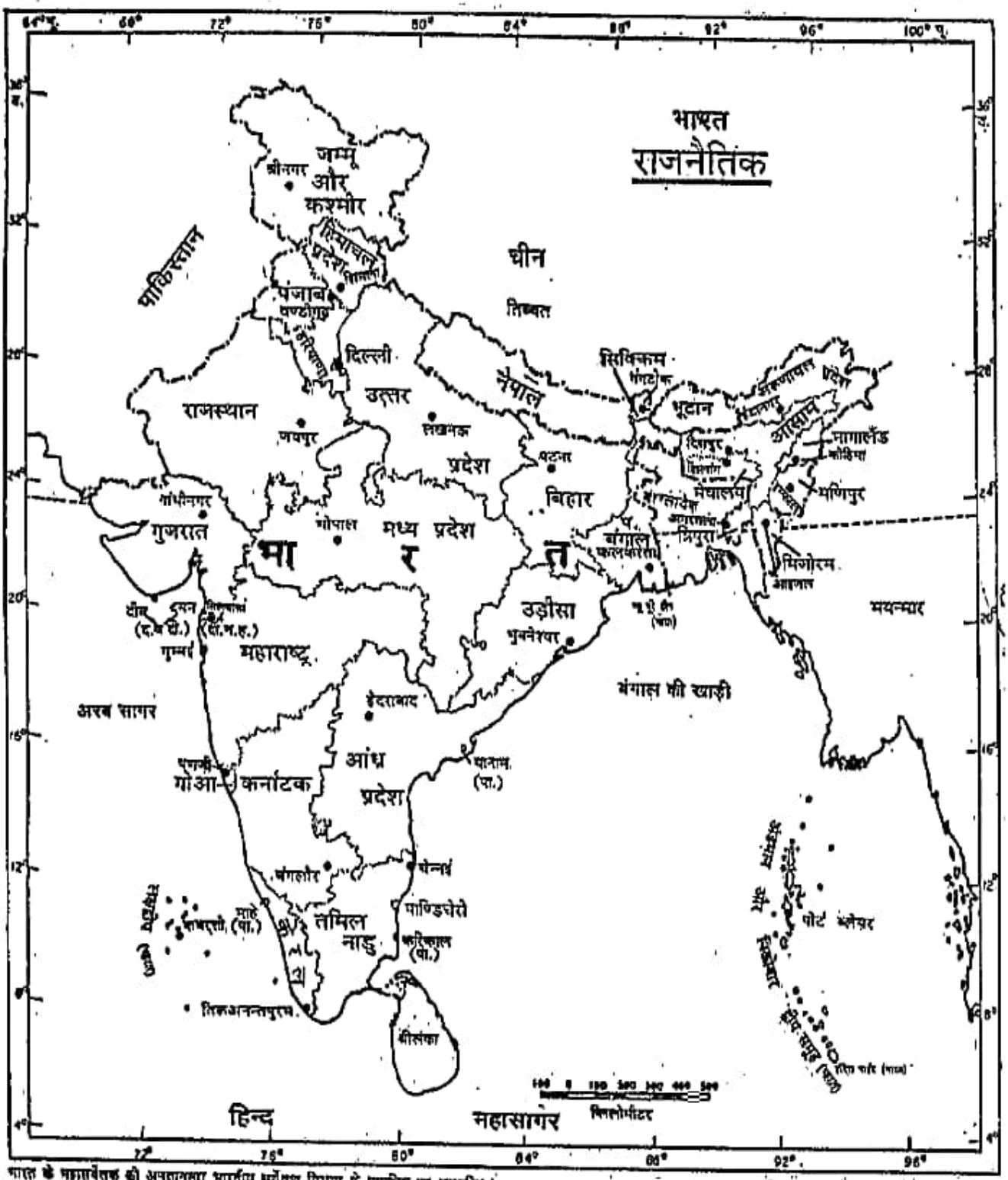

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 1.1 भारत—राजनीतिक

भारत गणतंत्र में 25 राज्य और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली को लेकर 7 केंद्र शासित प्रदेश हैं। राज्य और अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की भिन्नता आप कैसे पहचानते हैं ?

6. अरुणाचल में स्थित भारत के पूर्वी छोर का देशांतर ज्ञात कीजिए।
7. भारत से बड़े 6 देशों की सूची बनाइए। भारत के क्षेत्रफल की तुलना चीन के क्षेत्रफल से कीजिए।

अंतर्राष्ट्रीय सीमाएँ

1. (i) पाकिस्तान, (ii) चीन, (iii) म्यांमार (बर्मा), और (iv) बांग्लादेश की सीमाओं को छूने वाले राज्यों को चार वर्गों में विभाजित कीजिए। उदाहरणार्थ उन राज्यों को एक वर्ग में रखिए जिनकी सीमाएँ पाकिस्तान से मिलती हैं। इसी तरह अन्य शेष वर्ग बनाइए।
2. उत्तर से लेकर दक्षिण तक अरब सागर के तट पर स्थित राज्यों और केन्द्र-शासित प्रदेशों के नाम लिखिए। क्या उनकी संख्या सात है ?
3. इसी तरह दक्षिण से उत्तर तक बंगाल की खाड़ी के तट पर स्थित राज्यों और केन्द्र-शासित प्रदेशों की सूची बनाइए। क्या इनकी संख्या 7 है ?
4. तीन सागरों पर स्थित स्थान का नाम लिखिए। इन सागरों के नाम भी बताइए।
5. (i) अरब सागर, तथा (ii) बंगाल की खाड़ी में स्थित अपने देश के द्वीप समूहों के नाम लिखिए।

अब विचार कीजिए

1. क्या कारण है कि देश का उत्तर-दक्षिण विस्तार (किलोमीटर में) पूर्व-पश्चिम विस्तार की तुलना में अधिक है जबकि इसका अक्षांशीय और देशांतरीय विस्तार (अंश में) समान है ?
2. भारत के सबसे पूर्वी तथा सबसे पश्चिमी क्षितिज पर सूर्योदय के समय में कितना अंतर है ?
3. विषम संख्या वाली 82°30' पूर्वी मध्याह्न रेखा को भारत की मानक मध्याह्न रेखा क्यों चुना गया है ? क्या इसका कोई संबंध ग्रीनविच समय से है ?
4. पश्चिम में अहमदाबाद में तथा पूर्व में कलकत्ते में तो मध्याह्न का सूर्य, वर्ष में दो बार ठीक सिर के ऊपर चमकता है, लेकिन दिल्ली में नहीं। इसका क्या कारण हो सकता है ?
5. क्या कारण है कि कन्याकुमारी में दिन और रात की अवधि में विशेष अंतर का अनुभव नहीं होता, जबकि कश्मीर में ऐसा नहीं है?
6. ज्ञात कीजिए कि हमारे सबसे पूर्व में स्थित राज्य अरुणाचल प्रदेश का नाम सार्थक कैसे है ?

भारत ग्लोब पर

विषुवत वृत के उत्तर में स्थित होने के कारण भारत उत्तरी गोलार्द्ध के अंतर्गत आता है। कर्कवृत (23°30' उ.) देश को लगभग दो समान भागों में विभाजित करता है। इसका दक्षिणी आधा भाग जिसमें प्रायद्वीपीय भारत सम्मिलित है, उष्ण कटिबंध में आता है। उत्तरी आधा भाग जिसकी प्रकृति लगभग महाद्वीपीय है, उपोष्ण कटिबंध में है।

प्रधान मध्याह्न रेखा के पूर्व में स्थित होने के कारण भारत पूर्वी गोलार्द्ध में भी आता है। पूर्वी गोलार्द्ध पर एक दृष्टि डालने से इसकी केन्द्रीय स्थिति स्पष्ट हो जाती है। भारत एशिया महाद्वीप के दक्षिण मध्य प्रायद्वीप में है। एशिया संसार में सबसे बड़ा तथा

चित्र 1.2 संसार में भारत की अवस्थिति
यूरेशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया के संदर्भ में भारत की अनुकूल अवस्थिति देखिए। क्या कारण है कि संसार के तीसरे बड़े महासागर का नाम अपने देश के नाम पर है?

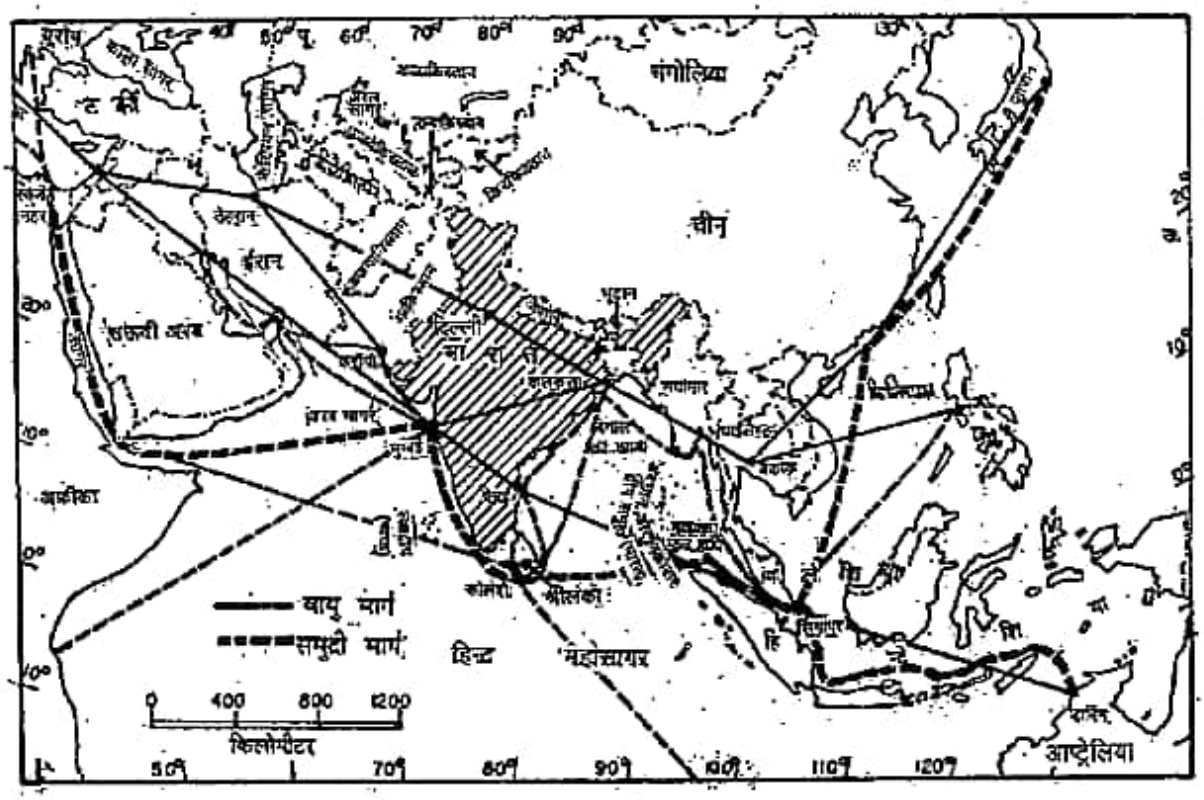

चित्र 1.3 व्यापार और वाणिज्य के अंतर्राष्ट्रीय महामार्ग पर भारत की स्थिति
अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मार्ग पर भारत की स्थिति देखिए।

सबसे अधिक जनसंख्या वाला महाद्वीप है। भारत की ऐसी स्थिति के अपने आर्थिक लाभ हैं। प्राचीन काल में अपनी स्थिति के कारण भारत ने पश्चिम में अरब देशों के साथ-साथ दक्षिण-पूर्व एशिया एवं सुदूर पूर्व के देशों के साथ भी सांस्कृतिक तथा अन्य प्रकार के संबंध स्थापित किए।

हिंद महासागर के शीर्ष पर भारत की केंद्रीय स्थिति को देखिए। इसके पश्चिम में अफ्रीका तथा पश्चिम एशिया के देश स्थित हैं। सन् 1865 में स्वेज नहर के खुलने से भारत और यूरोप के बीच की दूरी 7000 किलोमीटर कम हो गई है। भारत के दक्षिण-पूर्व और पूर्व में क्रमशः दक्षिण-पूर्व और पूर्व एशिया के देश स्थित हैं।

संसार के पूर्व और पश्चिम दिशाओं में जाने वाले व्यापारिक मार्गों पर भारत की स्थिति बहुत ही अनुकूल है। पूर्व और दक्षिण पूर्व एशिया तथा आस्ट्रेलिया को जाने वाले समुद्री मार्ग हिन्द महासागर से होकर गुजरते हैं। भारत, यूरोप, उत्तर अमेरिका तथा दक्षिण अमेरिका से स्वेज नहर तथा आशा अंतरीप, दोनों ही मार्गों के द्वारा जुड़ा है।

भारतीय उपमहाद्वीप

एशिया के उच्चावच मानचित्र को देखते ही शेष एशिया से भारतीय उपमहाद्वीप की अलग पहचान एकदम पता लग जाती है। यह एक सुस्पष्ट भौगोलिक इकाई है जहाँ एक विशिष्ट संस्कृति का विकास हुआ है। इसके बहुत बड़े भाग पर दो सौ वर्षों से अधिक एक ही विदेशी शासन रहा। इसका बहुत अधिक प्रभाव इस पर पड़ा है। भारतीय उपमहाद्वीप में आज के देश हैं — उत्तर-पश्चिम में पाकिस्तान, केंद्र में भारत, उत्तर में नेपाल, उत्तर-पूर्व में भूटान तथा पूर्व में बांग्लादेश। भारत की सीमा इन सभी देशों से मिलती है। परन्तु इनमें से किसी की सीमा एक दूसरे से नहीं मिलती है। भारत, पाकिस्तान तथा बांग्लादेश में गणतंत्र है। नेपाल तथा भूटान में राजतंत्र है। हिंद महासागर में स्थित द्वीपीय राष्ट्र श्रीलंका और मालदीव हमारे दक्षिणी पड़ोसी हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप की कहानी

लाखों वर्ष पूर्व हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उच्चावच के वर्तमान लक्षणों का विकास हुआ है। शैलों की विभिन्न परतों में वनस्पति तथा प्राणियों के सुरक्षित अवशेषों के द्वारा शैलों की आयु का पता लगाया जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप के शैलों में लिखी इस कहानी को भू-वैज्ञानिकों ने टुकड़े-टुकड़े जोड़कर पूरा किया है।

यह कहानी हमें लाखों-करोड़ों वर्ष पहले भूविज्ञानी अतीत में ले जाती है। उस काल की दुनिया आज की दुनिया से भिन्न थी। जहाँ आज हिमालय और भारत के उत्तरी मैदान हैं, वहाँ कभी *टेथिस* नाम का सागर था। दो विशाल भूखंडों से घिरा यह एक लंबा और उथला सागर था। इसके उत्तर में "लॉरेशिया" तथा दक्षिण में "गोंडवाना लैंड" नाम के दो भूखंड थे। टेथिस सागर भारत और म्यांमार (बर्मा) की वर्तमान सीमा से लेकर पश्चिम में दक्षिण अटलांटिक महासागर की गिनी की खाड़ी तक विस्तृत था। इसमें पश्चिम एशिया तथा अफ्रीका के उत्तर-पूर्वी तथा मध्य भाग सम्मिलित थे। लाखों वर्षों तक इन दो भूखंडों का अपरदन होता रहा तथा अपरदित पदार्थ कंकड़, पत्थर, मिट्टी, गाद आदि टेथिस सागर में जमा होते रहे।

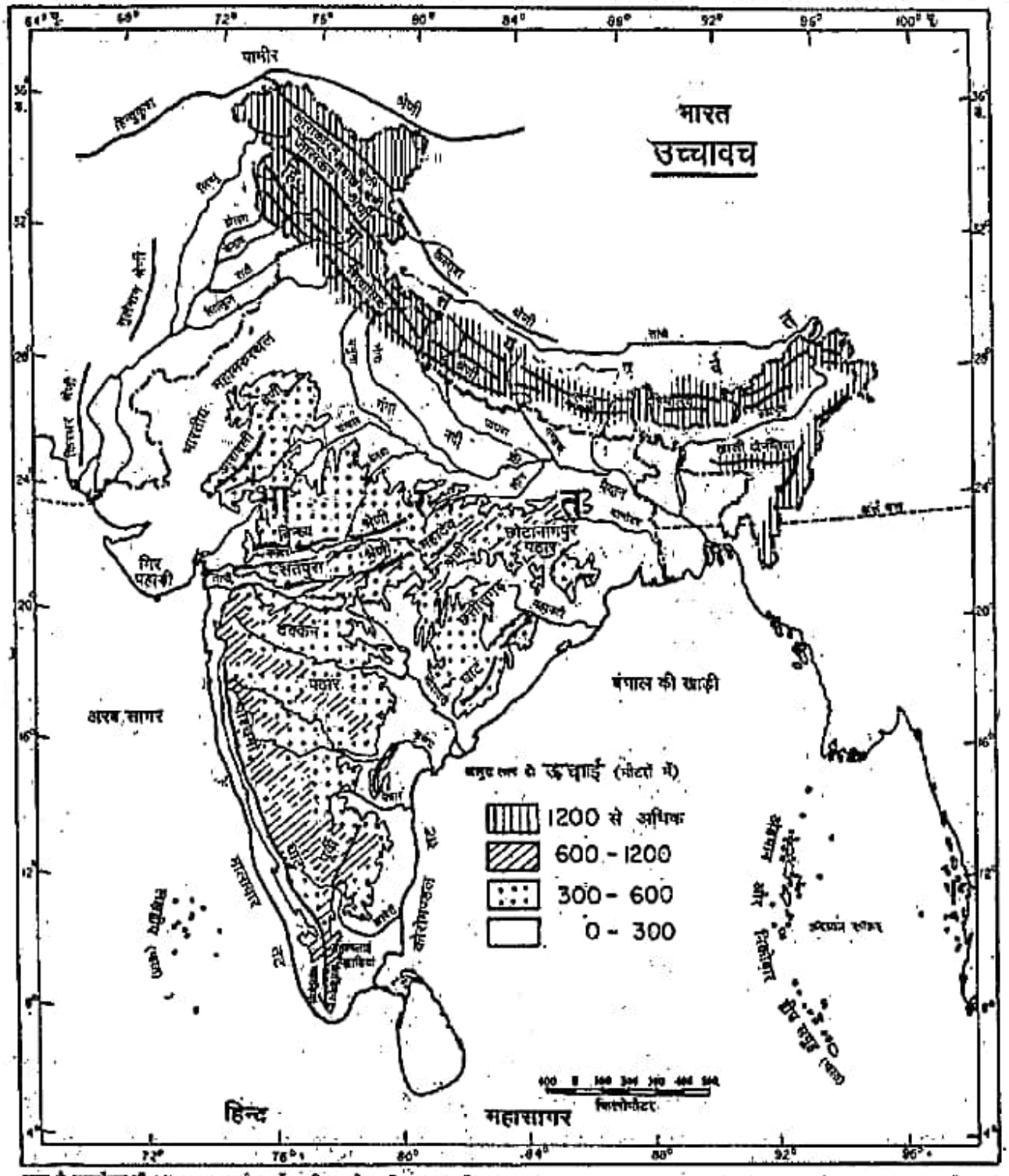

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अंतर्राज्य सीमाएँ, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित हैं, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दीर्घ अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 1.4 भारत—भौतिक लक्षण

भारत के प्रमुख भौतिक विभागों को देखिए। अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियों को देखिए। इन दोनों में से कौन-सा जल-निकास क्षेत्र बड़ा है ?

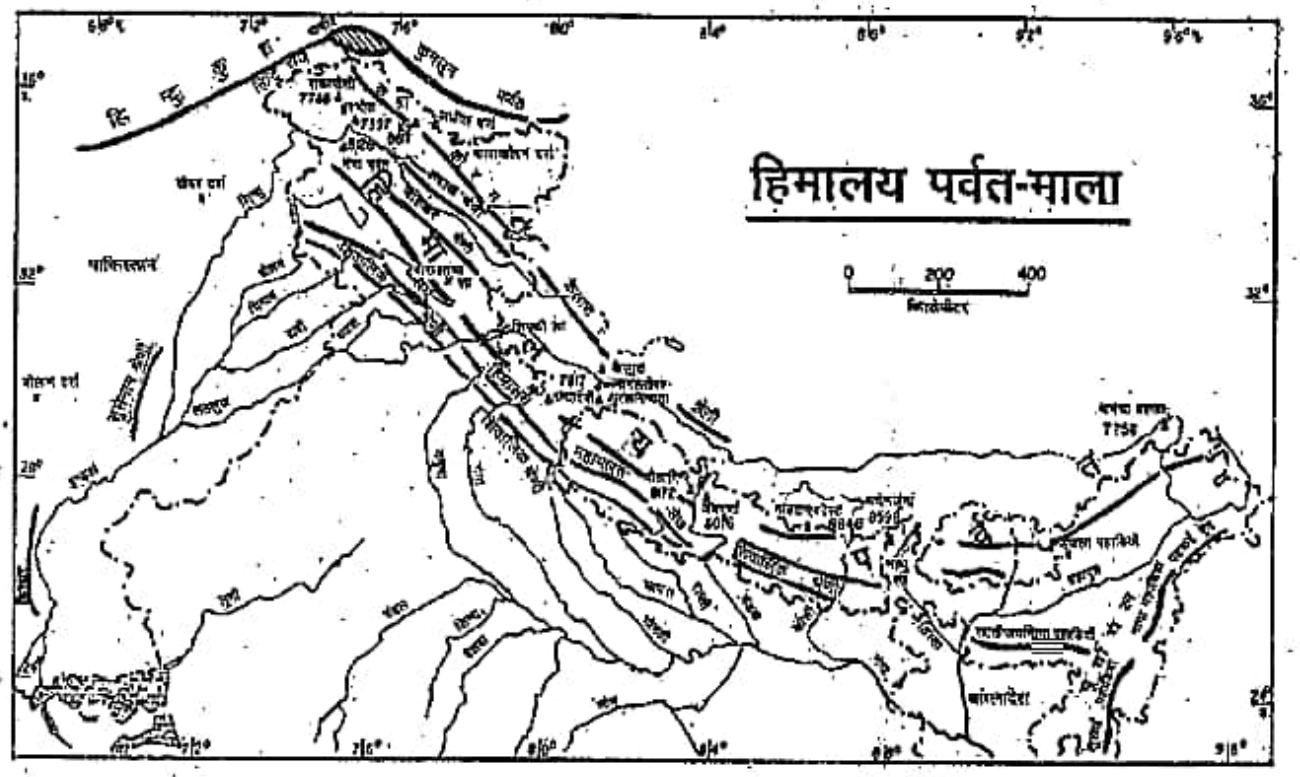

चित्र 1.5 हिमालय पर्वतमाला

भारतीय उपमहाद्वीप और शेष एशिया के बीच स्थित इस प्राकृतिक अवरोध ने इस क्षेत्र में शांति और समृद्धि को बढ़ावा दिया, जिससे इसकी अपनी एक विशिष्ट संस्कृति विकसित हुई। क्या आप समझते हैं कि हिमालय अब भी पहले की ही भांति सुरक्षा प्रदान करता है ?

कालांतर में दक्षिणी भूखंड का एक हिस्सा धीरे-धीरे उत्तर की ओर खिसका। इससे उत्तर के महाद्वीप प्लेट के विरुद्ध भारी क्षैतिज दबाव (संपीड़न) पड़ा। परिणामस्वरूप यह सिकुड़ने लगा तथा इसमें जमी मिट्टी आदि की परतों में (वलय) मोड़ पड़ने लगे। यह वलय पहले द्वीपों की एक शृंखला के रूप में उभरे और फिर लाखों वर्षों में विशाल वलित पर्वत श्रेणियों का निर्माण हुआ। इन्हीं में से आज का हिमालय भी है।

हिमालय की ऊँचाई बढ़ने के साथ-साथ उस पर नदियाँ तथा अनाच्छादन के दूसरे कारक सक्रिय हो गए। पर्वत प्रदेश को अपरदित करने के साथ-साथ उनके द्वारा भारी मात्रा में गाद हिमालय के दक्षिण में स्थित गर्त में जमा किया गया। इसी के परिणामस्वरूप भारत और पाकिस्तान में फैले उत्तरी मैदानों या गंगा सिन्धु के मैदानों की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मपुत्र नदी ने भी इसी प्रकार भारत के उत्तरी-पूर्वी

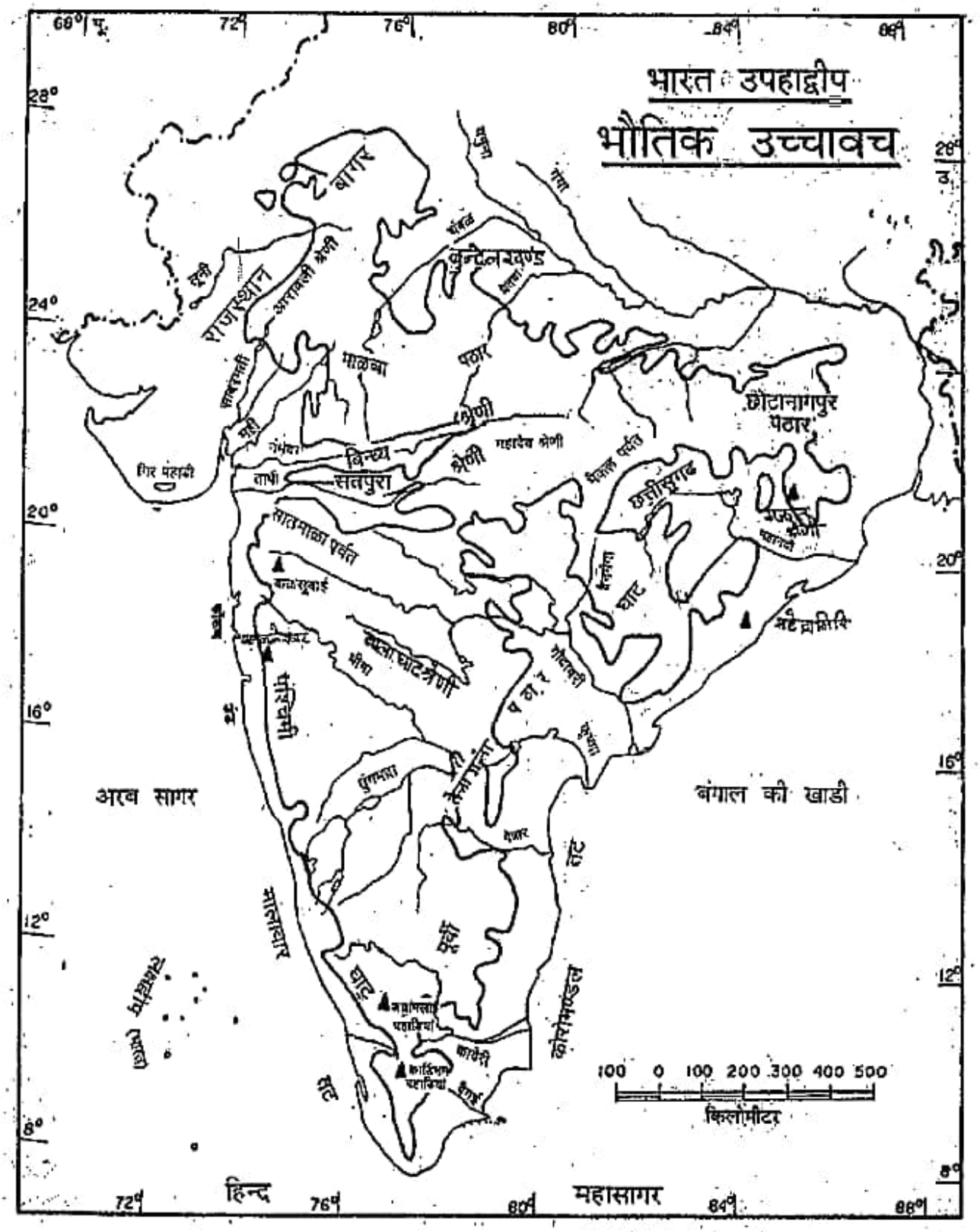

चित्र 1.6 प्रायद्वीपीय भारत

प्रायद्वीपीय खंड के त्रिकोणीय आकृति को देखिए। उन तीन पहाड़ी शृंखलाओं के नाम बताइए जिनके मध्य से नर्मदा और तापी नदियाँ बहती हैं। इस प्रदेश के प्रमुख शिखरों के नाम लिखिए।

भाग और बांग्लादेश में मैदानों का निर्माण किया। मानचित्र में गंगा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा को ध्यान से देखने पर आपको इस बात के संकेत अवश्य मिल जाएंगे कि यह प्रक्रिया आज भी निरंतर चल रही है तथा भूमि भाग धीरे-धीरे सागर में बढ़ता जा रहा है और सागर पीछे खिसक रहा है।

प्रमुख भू-आकृतिक विभाग

दो प्राचीन भूखंडों के टकराने के परिणामस्वरूप एक सुगठित भारतीय उपमहाद्वीप का निर्माण हुआ। भारत को पाँच भू-आकृतिक विभागों में बाँटा जाता है — (1) उत्तर में विशाल पर्वतों की प्राचीर, (2) उत्तरी मैदान, (3) विशाल प्रायद्वीपीय पठार, (4) तटीय मैदान, और (5) भारतीय द्वीप।

उत्तर में विशाल पर्वतों की प्राचीर

मध्य एशिया में स्थित पामीर ग्रंथि पामीर पठार का एक भाग है। यह पठार संसार की छत कहलाता है। इस ग्रंथि से अनेक पर्वत-श्रेणियाँ निकलती हैं। इनमें से एक कुनलुन है, जो पूर्व की ओर तिब्बत में चली जाती है। दूसरी पर्वत-श्रेणी कराकोरम कश्मीर में प्रवेश कर दक्षिण पूर्व की ओर बढ़ती है। इसी में अकसाइचिन का पठार है। पूर्व में और आगे चलकर तिब्बत में इसी को कैलाश के नाम से जाना जाता है। कराकोरम अपनी स्थिति के कारण "दर्रा" एक ऊँची श्रेणी है, इसका 'खास' महत्त्व है। इसी में संसार की दूसरी सबसे ऊँची पर्वत चोटी या शिखर 'के२' स्थित है। यह "दर्रा" अब विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण बन गया है। इस भाग में विशाल हिमानियाँ हैं। हिमानी, ठोस बर्फ और हिम की खिसकती हुई नदियाँ हैं। बाल्टोरो तथा सियाचीन इस क्षेत्र की प्रमुख हिमानियाँ हैं।

कराकोरम के दक्षिण में दो समान्तर पर्वत-श्रेणियाँ हैं। ये लद्दाख और ज़ास्कर के नामों से विख्यात हैं। कैलाश शिखर के निकट सिन्धु नदी के उद्गम को देखिए। यह कैलाश पर्वत-श्रेणी तथा अन्य श्रेणियों को टेढ़े-मेढ़े पार करती हुई भारत में प्रवेश करती है। कश्मीर में यह लद्दाख और ज़ास्कर पर्वत-श्रेणियों के मध्य दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम दिशा में बहती है।

उत्तर में सिन्धु नदी पर गंगा पर्वत की स्थिति को देखिए। हिमालय पर्वत श्रेणी पश्चिम में सिन्धु से लेकर पूर्व में ब्रह्मपुत्र तक फैली है। इन दो सीमाओं के बीच इसकी आकृति एक चाप के समान है और इसकी लंबाई 2500 किलोमीटर है। हिमालय की चौड़ाई में अंतर है। पश्चिम में यह 400 किलोमीटर तथा पूर्व में 150 किलोमीटर चौड़ा है। इस प्रकार कश्मीर में यह अधिक चौड़ा है जबकि पूर्व की ओर इसकी चौड़ाई घटती जाती है। परन्तु हिमालय के पूर्वी आधे भाग की ऊँचाई पश्चिम के आधे भाग से अधिक है।

हिमालय नवीन वलित पर्वत है। सामान्यतः इसमें तीन स्पष्ट पर्वत-श्रेणियाँ हैं, जो एक-दूसरे के समान्तर फैली हैं। सबसे उत्तरी पर्वत-श्रेणी सबसे ऊँची है। इस श्रेणी को सर्वोच्च हिमालय या हिमाद्री कहते हैं। हिमालय के सर्वोच्च शिखर इसी श्रेणी में हैं। एवरेस्ट शिखर या सागरमाथा संसार का सर्वोच्च शिखर है। इसकी ऊँचाई 8848 मीटर है। यह नेपाल में है। कांचनजुंगा हिमालय का दूसरा सबसे ऊँचा पर्वत शिखर है। यह भारत के सिक्किम राज्य में स्थित है। कश्मीर में नंगा पर्वत तथा उत्तर प्रदेश में नंदा देवी हिमालय के दो अन्य प्रमुख शिखर हैं। पूर्व में एक अन्य प्रमुख शिखर नामचा बरवा है जिसके पास से ब्रह्मपुत्र नदी बहती है। इसी स्थान पर ब्रह्मपुत्र नदी तथा पर्वत श्रेणियों की दिशा

अचानक बदल जाती है और वे दक्षिण की ओर मुड़ जाती हैं।

सर्वोच्च हिमालय के दक्षिण में मध्य या लघु हिमालय है। इसे हिमाचल श्रेणी कहते हैं। सभी प्रमुख पर्वतीय नगर जैसे डलहौजी, धर्मशाला, शिमला, मसूरी, नैनीताल और दार्जिलिंग इसी पर्वत-श्रेणी पर हैं। कश्मीर की पीरपंजाल श्रेणी तथा जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में फैला धौलाधर श्रेणी, मध्य हिमालय के ही भाग हैं। नेपाल की महाभारत श्रेणी भी इसी का अंग है।

हिमालय की दक्षिणतम श्रेणी को बाह्य हिमालय या शिवालिक श्रेणी कहा जाता है। हिमालय के पश्चिमी अर्द्ध भाग में यह श्रेणी बहुत अधिक स्पष्ट है। यह पर्वत-श्रेणी ज्वालोढ़ अवसादों से बनी है। इसकी शैलें ठोस नहीं हैं। इस भाग में प्रायः भूकंप आते हैं और भूस्खलन होता है। मृदा अपरदन सबसे अधिक हिमालय की इस सर्वाधिक युवा श्रेणी में होता है।

हिमालय पर्वत-श्रेणी को पश्चिम पूर्व दिशा में भी वर्गीकृत करते हैं। जम्मू-कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश में फैले हिमालय के भाग को पश्चिमी हिमालय भी कहते हैं। उत्तर प्रदेश और नेपाल में यह मध्य हिमालय के नाम से जाना जाता है। पश्चिम बंगाल, सिक्किम, भूटान तथा अरुणाचल प्रदेश में यह पूर्वी हिमालय के नाम से प्रसिद्ध है।

हिमालय में अनेक महत्त्वपूर्ण "दर्रे" भी हैं। हिमाचल प्रदेश में तिब्बत-हिमालय सड़क पर शिपकी ला है। सिक्किम का दर्रा नाथुला कहलाता है। इससे होकर भारत से तिब्बत की राजधानी ल्हासा तक सड़क मार्ग जाता है। पूर्व में और आगे अरुणाचल प्रदेश में बोमडिला नामक दर्रा है। वायु परिवहन के इस युग में हिमालय अलंघ्य नहीं रह गया है।

हिमालय अपनी सुन्दर और रमणीक घाटियों के लिए विश्व विख्यात है। सारे संसार के पर्यटक इन घाटियों के सौंदर्य की छटा निहारने यहाँ आते रहते हैं। कश्मीर घाटी ऐसी ही प्रसिद्ध घाटी है। इसे पृथ्वी का स्वर्ग भी कहा जाता है। हिमाचल प्रदेश में कुलु और कांगड़ा अन्य प्रमुख घाटियाँ हैं। उत्तर प्रदेश के कुमांयू हिमालय की दून घाटियाँ भी प्रसिद्ध हैं। ये सभी घाटियाँ फलों के बागों के लिए भी विख्यात हैं।

हिमालय से अनेक बड़ी-बड़ी नदियाँ निकलती हैं। वे उत्तरी मैदान में बहती हुई, अरब सागर या बंगाल की खाड़ी में गिर जाती हैं। यहाँ एक सर्वाधिक रोचक तथ्य यह है कि भारतीय उपमहाद्वीप की तीन प्रमुख नदियाँ सिन्धु, सतलुज तथा ब्रह्मपुत्र हिमालय के उस पार से निकलती हैं। इन नदियों का उद्गम क्षेत्र तिब्बत में कैलाश और मानसरोवर के निकट है। सिन्धु और सतलुज पश्चिम दिशा में और ब्रह्मपुत्र जो इस प्रदेश में साँगपो के नाम से जानी जाती है, पूर्व दिशा में बहती है। ये नदियाँ काफी लंबी दूरी तक हिमालय के समान्तर बहने के बाद फिर दक्षिण की ओर मुड़ जाती हैं। ये हिमालय की पर्वत-श्रेणी को काटते हुए अद्भुत महाखड्डों (गार्ज) का निर्माण करती हैं और इनमें होते हुए बहने के बाद उत्तरी मैदान में पहुँच जाती हैं। हिमालय पार की इन नदियों ने सिद्ध कर दिया है कि हिमालय पूर्णरूप से जल विभाजक नहीं है। यही नहीं, इससे यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हिमालय की उत्पत्ति और उसके ऊँचे उठने से पहले ही ये नदियाँ विद्यमान थीं। इसीलिए हिमालय को पार करते समय ये नदियाँ इतने विशाल महाखड्ड या कैनयन बना सकीं। महाखड्ड को अंग्रेजी के "I"

अक्षर की आकृति की घाटी भी कहते हैं, क्योंकि नदियों के दोनों किनारे दीवार की भाँति खड़े ढाल वाले होते हैं। जब हिमालय ऊपर उठ रहा था तब ये नदियाँ अपनी घाटियों को गहरा करने में लगी थीं।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि ब्रह्मपुत्र हिमालय की पूर्वी सीमा बनाती है। भारत की पूर्वी सीमा पर फैले पर्वतों को पूर्वांचल कहते हैं। ये पर्वत हिमालय की भाँति विशाल नहीं हैं। ये मध्यम ऊँचाई के पर्वत हैं। इन पर्वतों के अंतर्गत उत्तर की पटकाई बुम और नागा पहाड़ियाँ तथा दक्षिण की मिज़ो पहाड़ियाँ आती हैं। मध्य में ये पहाड़ियाँ पश्चिम की ओर मुड़ती हुई मेघालय में भारत-बांग्लादेश की सीमा के साथ फैली हैं। यहाँ इन्हें पूर्व से पश्चिम की ओर जैन्तिया, खासी और गारो के नाम से जाना जाता है।

उत्तरी मैदान

भारत का उत्तरी मैदान उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार से निकलने वाली नदियों द्वारा लाई हुई बारीक गाद से बना है। ऐसी मिट्टी को जलोढ़क कहते हैं। इसीलिए इस समतल भूमि को जलोढ़ मैदान कहते हैं। यदि आप गंगा ब्रह्मपुत्र के डेल्टा पर दृष्टि डालें तो आपको पता चलेगा कि नदियों द्वारा निक्षेपण की क्रिया आज भी निरन्तर चल रही है। उत्तरी मैदान को दो नदी तंत्रों में विभाजित किया जाता है। पश्चिम में सिंधु नदी तंत्र तथा पूर्व में गंगा-ब्रह्मपुत्र का नदी तंत्र है। लेकिन भारत के उच्चावच मानचित्र को देखने पर इन दो नदी तंत्रों के मध्य जल-विभाजक का कार्य करने वाला कोई स्पष्ट भौतिक लक्षण दिखाई नहीं पड़ता।

सिन्धु द्रोणी

सिन्धु द्रोणी का अधिकतर भाग भारत के जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्यों में है। सिन्धु नदी की लंबाई लगभग 2900 किलोमीटर है। सतलुज, व्यास, रावी, चिनाव और झेलम इसकी प्रमुख सहायक नदियाँ हैं। मानचित्र में देखिए कि ये नदियाँ सिन्धु नदी में मिलने से पहले कैसे एक-एक करके एक-दूसरे में मिल जाती हैं। सिन्धु नदी के मैदान का ढाल बहुत मंद है। इस मैदान का विस्तार दक्षिण पश्चिम में अरब सागर तथा उत्तर-पूर्व में पश्चिमी हिमालय के गिरिपाद के मध्य 1200 किलोमीटर का है। इस पूरी दूरी में मैदान के ढाल में लगभग 300 मीटर की ही गिरावट आती है। नदियों ने इस मैदान को बहुत उपजाऊ बना दिया है। यहाँ सिंचाई के लिए नहरों का जाल संसार में सबसे सघन है।

गंगा द्रोणी

गंगा की हिमालय में दो शीर्ष नदियाँ हैं—भागीरथी और अलकनंदा। दोनों देवप्रयाग के पास मिलती हैं और इनकी संयुक्त धारा यहाँ से गंगा के नाम से बहती है। गंगा हरिद्वार के पास उत्तर भारत के मैदान में प्रवेश करती है। यमुना इससे इलाहाबाद में मिलती है। यमुना में दक्षिण की ओर से चंबल, सिंद, बेतवा और केन नामक सहायक नदियाँ मिलती हैं। ये सभी नदियाँ मैदान में प्रवेश करने से पूर्व मालवा के पठार से होते हुए बहती हैं। दक्षिण के पठार से आकर सीधे गंगा में मिलने वाली एक मात्र बड़ी नदी सोन है। आगे बढ़कर पूर्व में दामोदर नदी गंगा (हुगली) में आकर मिलती है। यह छोटानागपुर के पठार का जल बहाकर लाती है। इलाहाबाद के बाद गंगा से मिलने वाली हिमालय की

कुछ नदियाँ पश्चिम से पूर्व की ओर इस प्रकार हैं – गोमती, घाघरा, गंडक और कोसी। गंगा नदी तंत्र हरियाणा, दक्षिण-पूर्वी राजस्थान, उत्तरी मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा बिहार राज्यों के जल का अपवहन करता है। अंबाला नगर सिन्धु और गंगा नदी तंत्र के मध्य स्थित है। उत्तर-पश्चिम में अंबाला से लेकर पूर्व में सुन्दरवन तक इस मैदान का विस्तार 1800 किलोमीटर से अधिक है। हरियाणा से लेकर बांग्लादेश तक इसके कुल विस्तार में लगभग 300 मीटर का ही ढाल है। नदियों के टेढ़े-मेढ़े या विसर्पाकार प्रवाह से यह स्पष्ट पता चल जाता है कि यह मैदान कितना समतल है। गंगा नदी लगभग 1900 किलोमीटर लंबी है।

ब्रह्मपुत्र घाटी

ब्रह्मपुत्र का उद्गम स्थल भी तिब्बत में सिन्धु और सतलुज के उद्गम के निकट ही है। यह नदी बड़ी भारी मात्रा में जल बहाकर लाती है। ब्रह्मपुत्र की लंबाई सिन्धु से कुछ अधिक है लेकिन इसका अधिकतर भाग तिब्बत में है। तिब्बत में यह हिमालय के समान्तर बहती है जहाँ इसका नाम साँगपो है। नामचा बरवा (7757 मी.) शिखर के पास यह जूड़े के पिन की आकृति की तरह तीखा मोड़ लेती है। यहाँ इसने 5500 मीटर गहरा महाखड्ड बनाया है। क्या यह अविश्वसनीय नहीं है ? इस स्थान पर तथा अरुणाचल प्रदेश में यह दिहांग नाम से जानी जाती है। लोहित, दिहांग तथा दिबांग के संगम के बाद इसका नाम ब्रह्मपुत्र पड़ता है। विशाल जलराशि के साथ-साथ यह भारी मात्रा में गाद भी बहाकर ले जाती है। बांग्लादेश के उत्तरी भाग में इसका नाम जमुना है। मध्य भाग में गंगा से मिलने के बाद इसे पद्मा कहते हैं। दक्षिण में मुख्य धारा से मेघना आकर मिलती है और इनकी संयुक्त धारा मेघना कहलाती है।

गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा

यह संसार का सबसे बड़ा तथा सबसे तेजी से बढ़ने वाला डेल्टा है। काफ़ी मात्रा में जल सुलभ होने के साथ-साथ यह सबसे उपजाऊ भी है। गंगा और ब्रह्मपुत्र अपने निचले भाग में अनेक वितरिकाओं में बंट जाती है। ढाल के मंद होने के कारण नदियों की गति बहुत धीमी हो जाती है तथा धारा के मध्य में जलोढ़ मृदा के द्वीप बन जाते हैं। सामने आए अवरोधों को पार करते समय नदी और अधिक धाराओं में बंटती जाती है। इस क्रम की पुनरावृत्ति होती रहती है तथा इस प्रकार एक डेल्टा की विशेष आकृति का निर्माण होता है। डेल्टा का निचला भाग जहाँ ज्वार भाटे के समय समुद्र का जल ताजे पानी के साथ मिलता रहता है, दलदली है।

विशाल प्रायद्वीपीय पठार

उत्तर के नवीन तथा वलित पर्वतों एवं इनके दक्षिण में फैले अपेक्षाकृत नवीन मैदानों के अध्ययन के बाद आइये अब थोड़ा और दक्षिण की ओर बढ़ें। उत्तरी मैदानों के दक्षिण में भारत का विशाल प्रायद्वीपीय पठार विस्तृत है। यह भारतीय उपमहाद्वीप का सबसे प्राचीन भाग है। वास्तव में इस भूभाग के उत्तर तथा उत्तर पूर्व की दिशाओं में निरंतर तथा धीरे-धीरे खिसकने के परिणामस्वरूप ही "टेथिस" सागर के स्थान पर हिमालय और उत्तरी मैदानों की उत्पत्ति हुई। प्रायद्वीपीय पठार को दो भागों में विभाजित किया जाता है – मध्यवर्ती उच्चभूमियाँ तथा दक्कन का पठार।

मध्यवर्ती उच्चभूमियाँ

प्रायद्वीपीय भूभाग के उत्तरी भाग को मध्यवर्ती उच्चभूमियाँ कहते हैं। पर वास्तव में यह बहुत ऊँचा नहीं है। यह भाग कठोर आग्नेय तथा कायान्तरित शैलों का बना हुआ है। पश्चिम की ओर बहने वाली नर्मदा नदी ने इस भूखंड को दो भागों में विभाजित कर दिया है।

उत्तरी भाग की एक सीमा पर विंध्याचल तथा उसके पूर्वी विस्तार हैं। उत्तर-पश्चिम में यह अरावली पर्वत-श्रेणी से घिरा है। वैसे तो इस पठारी भाग का विस्तार अरावली के पश्चिम में भी है, लेकिन वहाँ यह राजस्थान के बालू और पथरीले मरुस्थल से ढका है। ये बहुत ही पुराने वलित पर्वत के भाग हैं। उत्तर तथा उत्तर पूर्व की ओर यह उच्च भूमि धीरे-धीरे गंगा के मैदान में विलीन हो जाती है। इस भूभाग को मालवा का पठार कहते हैं। यह पठार पश्चिम में काफी चौड़ा है तथा पूर्व की ओर तंग होता जाता है। इसके पूर्वी भाग को दक्षिण उत्तर प्रदेश में बुंदेलखंड तथा बघेलखंड के नाम से पुकारते हैं। दक्षिण बिहार में यह छोटानागपुर के पठार के नाम से जाना जाता है। यमुना और गंगा की दक्षिण से आने वाली सहायक नदियाँ इसका जल बहाकर ले जाती हैं।

दक्कन का पठार

विंध्याचल पर्वत-श्रेणी से प्रायद्वीप के दक्षिणी छोर के मध्य दक्कन का पठार विस्तृत है। इसकी आकृति त्रिभुज के समान है। उत्तर में इसकी चौड़ाई सबसे अधिक है। दक्कन के पठार की उत्तरी सीमा पर विंध्याचल पर्वत-श्रेणी तथा इसका पूर्वी विस्तार अर्थात् महादेव पहाड़ियाँ, कैमूर पहाड़ियाँ और मैकाल शृंखला है। इसके पश्चिम में पश्चिमी घाट है। पश्चिम की ओर इनका बहुत ही खड़ा ढाल है। यह पर्वत-श्रेणी उत्तर से दक्षिण अरब सागर के समान्तर फैली है। पश्चिमी घाट के कई स्थानीय नाम हैं। महाराष्ट्र और कर्नाटक में इसे सह्याद्रि कहते हैं। दक्षिण में आगे चलकर तमिलनाडु में यह नीलगिरि के नाम से विख्यात है। दक्षिण में और आगे बढ़कर केरल तथा तमिलनाडु की सीमा पर इसे अन्नामलाई और कार्डेमम पहाड़ियों के नाम से पुकारा जाता है। दक्कन के पठार की ऊँचाई पश्चिम में अधिक है। पूर्व में बंगाल की खाड़ी की ओर इसका ढाल कम होता जाता है। पश्चिमी घाट का दक्षिणी भाग अपेक्षाकृत ऊँचा है। अनाईमुदी इसका सर्वोच्च शिखर है। समुद्रतल से इसकी ऊँचाई 2695 मीटर है। तमिलनाडु में स्थित उदगमंडलम् (ऊटी) दक्षिण भारत का प्रसिद्ध पर्वतीय नगर है।

दक्कन के पठार का पूर्वी किनारा पश्चिमी किनारे की अपेक्षा कम स्पष्ट है। इसे पूर्वी घाट के नाम से पुकारा जाता है। वास्तव में इसे महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी आदि नदियों ने काट दिया है। इस प्रकार अलग-अलग पहाड़ियाँ बन गई हैं। पूर्वी घाट के भी अनेक स्थानीय नाम हैं।

दक्कन के पठार के उत्तर-पश्चिमी भाग के विषय में जानना आवश्यक है। इसका निर्माण ज्वालामुखीय उद्गार से निर्मित आग्नेय शैलों से हुआ है। प्राचीन काल में पृथ्वी की आंतरिक हलचलों के कारण यहाँ भूपृष्ठ में अनेक दरारें पड़ गईं। इन दरारों में से लावा ऊपर निकल आया तथा भूपृष्ठ पर काफी क्षेत्र में फैल गया। इस प्रक्रिया को पूरा होने में करोड़ों वर्ष लग गए। ऐसा अनुमान है कि यहाँ जितना लावा निकला है उससे एक हिमालय का निर्माण हो सकता है। भूवैज्ञानिकों

का मत है कि लावा प्रवाह की इस प्रक्रिया का हिमालय की उत्पत्ति से निकट का संबंध है।

प्रायद्वीपीय भूभाग की अधिकतर नदियाँ पूर्व की ओर बहकर बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। लेकिन नर्मदा और तापी दो ऐसी नदियाँ हैं जो इनके विपरीत दिशा में पश्चिम की ओर बहती हुई अरब सागर में जा मिलती हैं। ये दोनों नदियाँ संकरी और लंबी घाटियों में से होकर बहती हैं। नर्मदा नदी के उत्तर में विंध्याचल पर्वत-श्रेणी तथा दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत-श्रेणी है। सतपुड़ा के दक्षिण में तापी नदी है। कहा जाता है कि ये नदी घाटियाँ पुरानी भू-भ्रंश घाटियाँ हैं। ये नदियाँ संकरे ज्वारनदमुख के द्वारा समुद्र में मिलती हैं।

तटीय मैदान

दक्कन के पठार के पूर्व और पश्चिम में तटीय मैदान फैले हैं। पश्चिम तटीय मैदान का विस्तार गुजरात से केरल तक है। अरब सागर की तटीय पट्टी को उत्तरी भाग में कोंकण तथा गोआ के दक्षिण में मालाबार के नाम से पुकारते हैं। इस तट पर अनेक ज्वारनदमुख हैं जिनमें गुजरात में नर्मदा और तापी के ज्वारनदमुख प्रमुख हैं। इस तट पर मुंबई और मार्मागोआ जैसे अनेक गहरे प्राकृतिक पोताश्रय हैं। इसके दक्षिणी भाग में अनेक खारे पानी की झीलें हैं जिन्हें लैगून या पश्चजल कहते हैं। उनके मुख पर बालूभित्ति या रोधिकाएँ हैं। यह तट अपने शांत पश्चजलों के लिए प्रसिद्ध है। बंगाल की खाड़ी के तट के साथ फैले मैदान पश्चिमी तटीय मैदानों की अपेक्षा अधिक चौड़े और समतल हैं। पूर्वी तट पर स्थित चार डेल्टाओं की स्थिति ढूँढ़िए तथा उनके नाम भी बताइए। डेल्टा प्रदेशों को छोड़कर तटीय पट्टियाँ चट्टानी हैं। इन्हें छोटी-छोटी तेज प्रवाह वाली नदियों ने बहुत काट-छाँट दिया है।

भारतीय द्वीप

केरल तट के पश्चिम में लक्षद्वीप स्थित है। इसमें छोटे-छोटे अनेक द्वीप हैं। इनका निर्माण अल्पजीवी सूक्ष्म प्रवाल जीवों की सतत और शान्त प्रयत्नों के द्वारा हुआ है। ये प्रवाल जीव उथले एवं कोष्ण कीचड़ जल में ही भली-भाँति पनपते हैं। इनमें से अनेक द्वीपों की आकृति घोड़े की नाल या अँगूठी के समान है। इन्हें एटॉल या प्रवालद्वीप वलय कहते हैं। लक्षद्वीप के विपरीत अंदमान तथा निकोबार द्वीप समूह के द्वीप बड़े और संख्या में अधिक हैं। भारतीय मुख्य भूमि के लिए सुरक्षा की दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व है। ये बंगाल की खाड़ी में डूबी हुई पहाड़ियों की शृंखला पर स्थित हैं। इनमें से कुछ की उत्पत्ति ज्वालामुखी के उद्गार से हुई है। भारत का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी यहीं स्थित है।

ऊपर वर्णित भारत के भू-आकृतिक विभाग एक दूसरे के पूरक हैं। प्रायद्वीपीय भू-खंड अचल हैं। इसकी सामग्री से उत्तरी मैदान तथा हिमालय का निर्माण हुआ है। यह भारी उद्योगों को आधार प्रदान करने वाले खनिजों का भंडार है। उत्तरी पर्वत, जल के प्रमुख स्रोत हैं। ये पर्वत भारतीय उपमहाद्वीप को हजारों किलोमीटर की दूरी से घेरे हुए हैं। उत्तर का मैदान सघन जनसंख्या का क्षेत्र है। यह पूरे देश के लिए अनाज का भंडार है। कुछ हद तक घिरे होने के कारण इस प्रायद्वीप की पृथकता ने यहाँ के लोगों की एकरूपता को सुदृढ़ बनाने में सहायता की है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए —
   (क) भारतीय उपमहाद्वीप में कौन-कौन से देश हैं ?
   (ख) शैलों की आयु का पता कैसे लगाया जाता है ?
   (ग) हिमालय को नवीन वलित पर्वत क्यों कहते हैं ?
   (घ) पूर्वांचल में कौन-कौन सी पर्वत-शृंखलाएँ सम्मिलित हैं ?
   (ङ) उत्तरी मैदान में कौन-कौन से नदी तंत्र हैं ?
   (च) भारतीय उपमहाद्वीप का सबसे प्राचीन भू-भाग कौन-सा है ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए —
   (क) डेल्टा और ज्वारनदमुख
   (ख) पश्चिमी घाट और पूर्वी घाट
   (ग) हिमाद्री और शिवालिक
3. प्रत्येक के लिए एक पारिभाषिक शब्द दीजिए —
   (क) दो प्राचीन भूखंडों के बीच स्थित विस्तृत संकरा और उथला समुद्र
   (ख) हिम और बर्फ के धीरे-धीरे खिसकने वाली नदियाँ
   (ग) किसी पर्वत-शृंखला में कोई घाटी, जिसमें से होकर मार्ग आर-पार जाता है
   (घ) अंग्रेजी में "I" की आकृति वाली घाटी जिसमें नदी के दोनों ओर दीवार की भाँति खड़े ढाल हों
   (ङ) जलोढ़ से निर्मित समतल निम्नभूमियाँ।
4. उत्तरी मैदानों के निर्माण का वर्णन संक्षेप में कीजिए।
5. दक्कन के पठार का विवरण दीजिए।
6. भारत के प्रमुख भू-आकृतिक विभाग कौन से हैं ? तटीय मैदानों तथा भारतीय द्वीप समूहों का संक्षिप्त विवरण लिखिए।

मानचित्र कार्य

7. भारत के रेखा मानचित्र में निम्नलिखित दिखाइए—
   (क) कराकोरम का एक प्रसिद्ध शिखर
   (ख) ज़ास्कर तथा कैलाश पर्वत श्रेणियाँ
   (ग) भारत में हिमालय का सर्वोच्च शिखर

(घ) नाथुला तथा बोमडिला दर्रे
(ङ) सिन्धु, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र नदियाँ
(च) छोटानागपुर का पठार

अध्याय 2

जलवायु

भारत में जलवायु की विविध दशाएँ पाई जाती हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान में और एक ऋतु से दूसरी ऋतु में तापमान और वर्षण में भारी अंतर है। ग्रीष्म ऋतु में पश्चिमी मरुस्थल में इतनी गर्मी पड़ती है कि

स्वयं करने के लिए

1. सारणी 2.1 में दस प्रतिनिधि स्थानों के औसत माध्य मासिक तापमान तथा औसत मासिक वर्षा दिया गया है। इसका अध्ययन करके प्रत्येक स्थान के तापमान और वर्षा के आरेख बनाइए। इन आरेखों को देखकर आपको इन स्थानों के तापमान और वर्षा के अंतर का तुरंत पता चल जाएगा। यहाँ एक आरेख उदाहरण के लिए दिया गया है। क्या आप इसके अध्ययन से अपने देश की जलवायु की भिन्न दशाओं के बारे में कोई सामान्य अनुमान लगा सकते हैं ? हमें आशा है कि इन्हें जानकर आपको बड़ी प्रसन्नता होगी। निम्नलिखित अभ्यास कीजिए।
2. दस स्थानों को तीन भिन्न क्रमों में लिखिए--
   (क) विषुवत वृत्त से उनकी दूरी के क्रम में
   (ख) समुद्रतल से उनकी ऊँचाई के क्रम में।

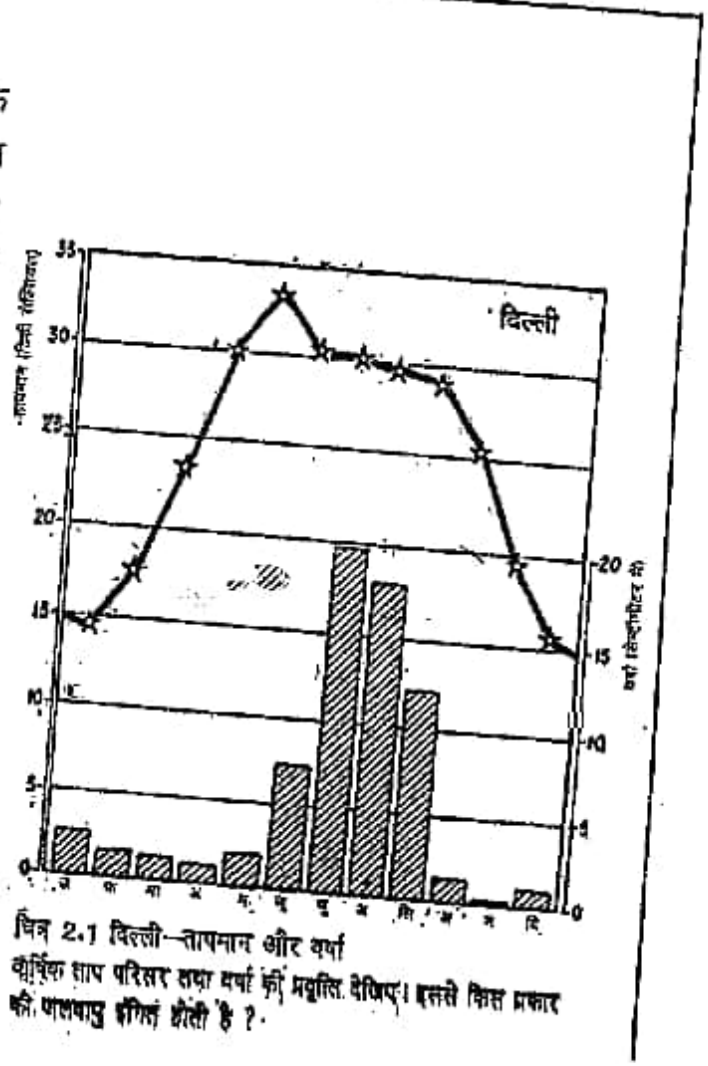

चित्र 2.1 दिल्ली—तापमान और वर्षा
वार्षिक ताप परिसर तथा वर्षा की प्रवृत्ति देखिए। इससे किस प्रकार की जलवायु इंगित होती है ?

सारणी 2.1

भारत के कुछ स्थानों के तापमान तथा वर्षा संबंधी आँकड़े

(औसत-मासिक तापमान सेल्सियस अंशों में, औसत वर्षा सेंटीमीटरों में)

स्थान		अक्षांश	ऊँचाई (मीटरों में)	जन.	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्तू.	नवंबर	दिसंबर	वार्षिक वर्षा
बंगलौर	° से.	12°58′ उ.	909	20.5	22.7	25.2	27.1	26.7	24.2	23.0	23.0	23.1	22.9	18.9	20.2	
	सें.मी.			0.7	0.9	1.1	4.5	10.7	7.1	11.1	13.7	16.4	15.3	6.1	1.3	88.9
मुंबई	° से.	19° उ.	11	24.4	24.4	26.7	28.3	30.0	28.9	27.2	27.2	27.2	27.8	27.2	15.0	
	सें.मी.			0.2	0.2	–	–	1.8	50.6	61.0	36.9	26.9	4.8	1.0		183.4
कलकत्ता	° से.	22°34′ उ.	6	19.6	22.0	27.1	30.1	30.4	29.9	28.9	28.8	28.9	27.6	23.4	19.7	
	सें.मी.			1.2	2.8	3.4	5.1	13.4	29.0	31.1	33.4	25.3	12.7	2.7	0.4	162.5
दिल्ली	° से.	29° उ.	219	14.4	16.7	23.3	30.0	33.3	33.3	30.0	29.4	28.9	25.6	19.4	15.6	
	सें.मी.			2.5	1.5	1.3	1.0	1.8	7.4	19.3	17.8	11.9	1.3	0.2	1.0	67.0
जोधपुर	° से.	26°18′ उ.	224	16.8	19.2	26.6	29.8	33.3	33.9	31.3	29.0	29.1	27.0	20.1	14.9	
	सें.मी.			0.5	0.6	0.3	0.3	1.0	3.1	10.8	13.1	5.7	0.8	0.2	0.2	36.6
चेन्नई	° से.	13°9′ उ.	7	24.5	25.7	27.7	30.4	33.0	32.5	31.0	30.2	29.8	28.0	25.9	24.7	
	सें.मी.			4.6	1.3	1.3	1.8	3.8	4.5	8.7	11.3	11.9	30.6	35.0	13.9	128.6
नागपुर	° से.	21°9′ उ.	312	21.5	23.9	28.3	32.7	35.5	32.0	27.7	27.3	27.9	26.7	23.1	20.7	
	सें.मी.			1.1	2.3	1.7	1.6	2.1	22.2	37.6	28.6	18.5	5.5	2.0	1.0	124.2
शिलांग	° से.	24°34′ उ.	1461	9.8	11.3	15.9	18.5	19.2	20.5	21.1	20.9	20.0	17.2	13.3	10.4	
	सें.मी.			1.4	2.9	5.6	14.6	29.5	47.6	35.9	34.2	30.2	18.8	3.8	0.6	225.3
तिरुवनंतपुरम	° से.	8°29′ उ.	6	26.7	27.3	28.3	28.7	28.6	26.6	26.2	26.2	26.5	26.7	26.6	26.5	
	सें.मी.			2.3	2.1	3.7	10.6	20.8	35.6	22.3	14.6	13.8	27.3	20.6	7.5	181.2
लेह	° से.	34° उ.	3506	-8.3	-7.2	-0.6	6.1	10.0	14.4	17.2	16.1	12.2	6.1	0.0	-5.6	
	सें.मी.			1.0	0.8	0.8	0.5	0.5	0.5	1.3	1.3	0.8	0.5	–	0.5	8.5

(ग) निकटतम समुद्र से उनकी दूरी के क्रम में

3.

	प्रथम	*द्वितीय*
(क) सर्वाधिक वर्षा वाले दो स्थान		
(ख) दो शुष्कतम स्थान		
(ग) सर्वाधिक समान जलवायु वाले दो स्थान		
(घ) जलवायु में अत्यधिक अंतर वाले दो स्थान		
(ङ) दक्षिण-पश्चिमी मानसून को अरब सागर वाली शाखा के द्वारा सर्वाधिक प्रभावित दो स्थान		
(च) दक्षिण-पश्चिमी मानसून की बंगाल की खाड़ी वाली शाखा के द्वारा सर्वाधिक प्रभावित दो स्थान		
(छ) दोनों से प्रभावित दो स्थान		
(ज) लौटती हुई तथा उत्तर-पूर्वी मानसून से प्रभावित दो स्थान		
(झ) पश्चिमी विक्षोभों के द्वारा शीत ऋतु में वर्षा प्राप्त करने वाले दो स्थान		
(ञ) संपूर्ण भारत में सर्वाधिक वर्षा वाले दो महीने		
(ट) निम्नलिखित महीनों में सर्वाधिक गर्म दो महीने		
(i) फरवरी		
(ii) अप्रैल		
(iii) मई		
(iv) जून		

4. अब ज्ञात कीजिए —

(क) तिरुवनंतपुरम तथा शिलांग में जुलाई की अपेक्षा जून में अधिक वर्षा क्यों होती है ?

(ख) जुलाई में तिरुवनंतपुरम की अपेक्षा मुंबई में अधिक वर्षा क्यों होती है ?

(ग) चेन्नई में दक्षिण-पश्चिमी मानसून के द्वारा कम वर्षा क्यों होती है ?

(घ) शिलांग में कलकत्ते की अपेक्षा अधिक वर्षा क्यों होती है ?

(ङ) कलकत्ते में जुलाई में जून से अधिक वर्षा क्यों होती है ? इसके विपरीत शिलांग में जून में जुलाई से अधिक वर्षा क्यों होती है ?

(च) दिल्ली में जोधपुर से अधिक वर्षा क्यों होती है ?

5. अब सोचिए — ऐसा क्यों होता है —

- तिरुवनंतपुरम की समजलवायु है।
- देश के अधिकतर भागों में मानसूनी वर्षा के समाप्त होने के बाद ही चेन्नई में अधिक वर्षा होती है।
- जोधपुर की उष्ण मरुस्थलीय जलवायु है।
- लेह में लगभग पूरे वर्ष मध्य वर्षण होता है।
- दिल्ली और जोधपुर में अधिकतर वर्षा लगभग तीन महीनों में होती है, लेकिन तिरुवनंतपुरम और शिलांग में वर्ष के नौ महीनों तक वर्षा होती है।

गंभीरता से विचार कीजिए कि इन सब तथ्यों के बावजूद क्या हमारे पास इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए पुष्ट प्रमाण है कि पूरे देश में जलवायु की सामान्य एकता बनाए रखने में मानसून का बड़ा भारी योगदान है।

तापमान प्रायः 55° से. तक पहुँच जाता है। इसके विपरीत लेह के आस-पास शीत ऋतु में इतनी कड़ाके की सर्दी होती है कि तापमान हिमांक बिंदु से 45° से. नीचे चला जाता है। इसी प्रकार यदि हम दो स्थानों पर उसके 24 घंटों के तापमान में आने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि यह अंतर बहुत बड़ा होता है। केरल अथवा अंदमान तथा निकोबार द्वीप समूह में दिन और रात के तापमान में अधिक से अधिक सात या आठ अंश सेल्सियस का अंतर होता है। लेकिन थार मरुस्थल में यदि दिन का तापमान लगभग 50° से. रहता है, तो रात में यह हिमांक बिंदु तक गिर सकता है। जब हिमालय में हिमपात होता है, तब भारत के शेष भागों में केवल वर्षा की बौछारें पड़ती हैं। इसी प्रकार न केवल वर्षण के रूप में अंतर होता है, अपितु उसकी मात्रा में भी अंतर आ जाता है। उत्तर-पश्चिमी हिमालय में तथा पश्चिमी मरुस्थल में तो केवल 10 सें.मी. वर्षा होती है, लेकिन मेघालय में 400 सें.मी. से अधिक वर्षा होती है।

हमारी जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक

जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों को मानव द्वारा निर्मित राजनीतिक सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता। हमारी जलवायु को प्रभावित करने वाले कई प्रमुख कारक और परिघटनाएँ हैं, जिनमें चार प्रमुख हैं — (1) अवस्थिति, (2) उच्चावच, (3) पृष्ठीय पवनें, और (4) उपरितन वायु धाराएं।

स्थिति तथा उच्चावच संबंधी कारक

भारत लगभग 8° उ. तथा 37° उ. अक्षांशों के बीच स्थित है। कर्कवृत इसे लगभग दो बराबर भागों में विभाजित करता है। यह पूर्व-पश्चिम दिशाओं में भारत के मध्य से होकर गुजरता है।

भारत के दक्षिण में हिंद महासागर फैला है। इसके उत्तर में ऊँची-ऊँची अटूट पर्वत मालाएँ हैं। इसके संगठित भौतिक विन्यास ने इसकी जलवायु को भी मोटे तौर पर एक सामान्य स्वरूप दिया है। हिंद महासागर की दीर्घ भुजाओं अर्थात् बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर की स्थिति भी ध्यान देने योग्य है। इन बातों का भारतीय उपमहाद्वीप की जलवायु पर समताकारी प्रभाव पड़ता है। हमारी प्यासी भूमि के लिए अनिवार्य आर्द्रता के भंडार के रूप में इनका महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

विशाल हिमालय तथा उसके विस्तार एक प्रभावशाली जलवायु विभाजक का काम करते हैं। यह विशाल उच्च पर्वत-शृंखला उत्तरी पवनों के सामने अलंघ्य दीवार बनकर खड़ी है। उत्तर ध्रुवीय वृत के निकट ये ठंडी और बर्फीली पवनों का उत्पत्ति स्थान है, जहाँ से ये मध्य तथा पूर्वी एशिया की ओर चलती हैं। लेकिन ये हिमालय को पार नहीं कर पाती। इस प्रकार इस उत्तरी पर्वतीय प्राचीर के कारण ही संपूर्ण उत्तर भारत में उष्ण कटिबंधीय जलवायु पाई जाती है। उष्ण कटिबंधीय जलवायु की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं — (1) लगभग पूरे वर्ष अपेक्षाकृत उच्च तापमान, और (2) मुख्य रूप से शुष्क शीत ऋतु। कुछ क्षेत्रों को छोड़कर भारतीय उपमहाद्वीप में ये दोनों ही विशेषताएँ पाई जाती हैं।

पृष्ठीय पवनें तथा वायु धाराएँ

वायुदाब के कटिबंधों तथा भूमंडलीय पवनों को दिखाने वाले संसार के मानचित्र को ध्यान से देखिए। इसे

देखकर ज्ञात होता है कि भारत उपोष्ण उच्च वायुदाब कटिबंध से चलने वाली स्थलीय पवनों के क्षेत्र में आता है। यदि भारत में मानसून पवनें न चलती तो यह एक शुष्क भूभाग या मरुस्थल होता।

उत्तरी गोलार्द्ध के उपोष्ण उच्च वायुदाब कटिबंध से स्थाई पवनें चलती हैं। ये पवनें विषुवतीय निम्न वायुदाब कटिबंध की ओर चलती हैं। दक्षिण की ओर चलते हुए वे अपने दाईं ओर अर्थात् पश्चिम की ओर मुड़ जाती हैं। परिणामस्वरूप इनकी दिशा उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम हो जाती है। इसीलिए इन स्थाई पवनों को उत्तर-पूर्वी व्यापारिक पवनें कहा जाता है। जर्मन भाषा के "ट्रेड" शब्द का अर्थ मार्ग है और इसका प्रयोग निश्चित दिशा में तथा एक ही मार्ग पर निरंतर चलने वाली पवनों के लिए हुआ है। इस प्रकार भारत आर्द्रता विहीन उत्तर-पूर्वी व्यापारिक पवनों के प्रभाव क्षेत्र में आ जाता है। लेकिन, यह भारतीय जलवायु की अधूरी कहानी है। आइए इस कहानी के शेष भाग को भी जानें।

जब किसी क्षेत्र में वायु ऊपर से उतर कर नीचे एकत्र होती है, तो वहाँ का वायुदाब बढ़ जाता है। लेकिन यह वायु के तापमान के कारण भी होता है। स्थल और जल समान रूप से गर्म नहीं होते हैं। ग्रीष्म ऋतु में स्थल भाग समुद्रों की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है। परिणामस्वरूप स्थल भाग के आंतरिक क्षेत्रों में निम्न वायुदाब क्षेत्र विकसित हो जाता है। यह घटना मूल रूप से पवनों की दिशा परिवर्तन के लिए उत्तरदाई है जिससे दक्षिण-पश्चिम मानसून की उत्पत्ति होती है।

वायुधाराएँ पवनों से भिन्न हैं। वे भू-पृष्ठ के बहुत ऊपर बहती हैं। वे भू-पृष्ठ ऊँचाई पर चलती हैं। भारत की जलवायु जेट वायुधाराओं की गति से भी प्रभावित होती है। ऊपरी वायुमंडल में बहुत तेज गति से चलने वाली पवनों को जेट वायुधाराएँ कहते हैं। ये बहुत ही संकरी पट्टी में चलती हैं। शीत ऋतु में हिमालय के दक्षिणी भाग के ऊपर समताप मंडल में पश्चिमी जेट वायुधारा की स्थिति रहती है। जून के महीने में यह उत्तर की ओर खिसक जाती हैं। तब इसकी स्थिति मध्य एशिया में तियेन शान पर्वत-श्रेणी के उत्तर में हो जाती है। इस समय 25° उ. अक्षांश के ऊपर एक पूर्वी जेट वायुधारा का विकास होता है। निम्न वायुदाब और जेट-स्ट्रीम ही उत्तरी भारत में मानसून के अचानक "फटने" के लिए जिम्मेदार है। जेट-स्ट्रीम के शीतलकारी प्रभाव से देश के इस भाग में पहले से ही समुद्र की ओर से आए बादलों से वर्षा होती है। अस्थिर विषुवतीय महासागरीय वायु के द्वारा आकाश में प्रायः 9 से लेकर 15 किलोमीटर की ऊँचाई तक कपास वर्षी मेघ बनते हैं। इससे आठ-दस दिनों के भीतर सारे भारत में आँधी-तूफान, बादलों की गड़गड़ाहट तथा मानसून के प्रसार की घटना का स्पष्टीकरण मिल जाता है।

मानसून का रचनातंत्र

"मानसून" शब्द की व्युत्पत्ति अरबी भाषा के "मौसिम" शब्द से हुई है। "मौसिम" का शाब्दिक अर्थ ऋतु है। इस प्रकार मानसून का अर्थ एक ऐसी ऋतु से है जिसमें पवनों की दिशा पूरी तरह से उलट जाती है। मानसूनी पवनें हिंद महासागर में विषुवत वृत पार करने के बाद दक्षिण-पश्चिमी व्यापारिक पवनों के रूप में बहने लगती हैं। इस प्रकार शुष्क तथा गर्म स्थलीय व्यापारिक पवनों का स्थान आर्द्रता से परिपूर्ण समुद्री

पवनें ले लेती हैं। उष्णकटिबंधीय महाद्वीपीय वायु तथा विषुवतीय महासागरीय वायु के अंतर पर आधारित मौसम वैज्ञानिकों द्वारा दी गई मानसून की परिभाषा बड़ी सरल है। यह स्थल भागों तथा सागरीय क्षेत्र में तीन से लेकर पाँच किलोमीटर की ऊँचाई तक शुष्क एवं गर्म वायु को पूरी तरह हटाकर वायु द्वारा स्थान ले लेता है। विषुवतीय महासागरीय मानसूनी पवनें बहुत प्राचीन काल से ही चल रही हैं। लेकिन इनके वास्तविक स्वरूप तथा उत्पत्ति के विषय में जानकारी कुछ समय से ही प्राप्त होना शुरू हुई है। इस विषय में पहले पहल महत्त्वपूर्ण जानकारी तब मिली जब इसका अध्ययन प्रादेशिक स्तर के स्थान पर विश्व स्तर पर किया गया। मोटे तौर पर मानसून का प्रसार 20° उ. तथा 20° द. अक्षांशों के बीच स्थित उष्णकटिबंधीय भूभागों पर होता है। लेकिन भारतीय उपमहाद्वीप में मानसून हिमालय की पर्वत-श्रेणियों से बहुत अधिक प्रभावित होता है। इन पर्वत-श्रेणियों के कारण पूरा भारतीय उपमहाद्वीप दो से पाँच महीनों तक आर्द्र विषुवतीय पवनों के प्रभाव में आ जाता है। अतः जून से लेकर सितंबर तक ही 75 और 90 प्रतिशत के बीच वार्षिक वर्षा हो जाती है।

हमें मौसम संबंधी आंकड़ों की सहायता से मानसून के स्वरूप तथा रचनातंत्र का ज्ञान प्राप्त होता है। इन आंकड़ों का संग्रह स्थल भागों पर स्थित मौसम केंद्रों, समुद्रों में जलयानों और उपरितन वायु धाराओं से होता है। मानसून के विषय में प्राचीन मत यही था कि इसका संबंध पृष्ठीय पवनों से है लेकिन अब यह पता चला है कि उपरितन वायु धाराएँ मानसून के रचनातंत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अब यह भी पता चला है कि मानसून की तीव्रता के बारे मोटे तौर पर भविष्यवाणी की जा सकती है। पूर्वी प्रशांत महासागर में स्थित फ्रांसीसी पौलिनेशिया के ताहिती (लगभग 20° द. और 140° प.) और इंडोनेशिया के दक्षिण-पूर्व हिंद महासागर में उत्तरी आस्ट्रेलिया के पोर्ट डार्विन (12° उ. द और 131° पू.) के बीच वायुदाब में हुए अंतर को मापकर यह बताया जा सकता है कि मानसून कैसा होगा।

ऋतु-चक्र

भारत की जलवायु की दशाओं का वर्णन वार्षिक ऋतु-चक्र के द्वारा अच्छी तरह से किया जा सकता है। यहाँ वर्ष में चार प्रमुख ऋतुएँ होती हैं, ये हैं — (1) शीत ऋतु, (2) ग्रीष्म ऋतु, (3) आगे बढ़ते मानसून की ऋतु, तथा (4) पीछे हटते मानसून की ऋतु।

शीत ऋतु

लगभग सारे देश में दिसंबर, जनवरी तथा फरवरी के महीनों में शीत ऋतु होती है। इस ऋतु में उत्तरी मैदानों में उच्च वायुदाब रहता है। इस ऋतु में देश के ऊपर उत्तरी-पूर्वी व्यापारिक पवनें चलती हैं। देश के अधिकतर भागों में ये स्थल से समुद्र की ओर चलती हैं। परिणामस्वरूप यह ऋतु शुष्क रहती है। इस ऋतु में दक्षिण से उत्तर की ओर जाने पर तापमान घटता जाता है। चेन्नई और कालीकट का जनवरी का औसत तापमान 24°-25° से. रहता है। इसके विपरीत उत्तरी मैदानों में औसत तापमान 10° से. और 15° से. के बीच रहता है। शीत ऋतु में दिन सामान्यतः कोष्ण तथा

रातें ठंडी होती हैं। ऊँचाई पर स्थित स्थानों पर थोड़ा बहुत पाला पड़ना सामान्य बात है।

इस समय देश के उत्तर-पूर्वी भाग में क्षीण उच्च वायुदाब क्षेत्र विकसित हो जाता है। यहाँ से बाहर की ओर से 3 से 5 किलोमीटर की गति वाली मंद पवनें चलने लगती हैं। इस प्रदेश की स्थलाकृति का प्रभाव भी इन पवनों की दिशा पर पड़ता है। गंगा की घाटी में इन पवनों की दिशा पश्चिमी या उत्तर-पश्चिमी होती है। गंगा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा प्रदेश में इनकी दिशा उत्तरी हो जाती है। स्थलाकृति के प्रभाव से मुक्त होकर बंगाल की खाड़ी के ऊपर इनकी दिशा उत्तर-पूर्वी हो जाती है।

यह ऋतु बड़ी सुहावनी तथा आनन्दप्रद होती है। स्वच्छ आकाश, निम्न तापमान एवं आर्द्रता, शीतल मंद समीर तथा वर्षा रहित दिन, इस ऋतु की विशेषताएँ हैं।

इस सुहावने मौसम में कुछ अंतराल पर क्षीण चक्रवातीय अवदाबों के आ जाने के कारण विघ्न पड़ जाता है। इन्हें पश्चिमी विक्षोभ भी कहते हैं। इनकी उत्पत्ति पूर्वी भूमध्य सागर के ऊपर होती है। वहाँ से ये पूर्व की ओर बढ़ते हैं तथा पश्चिमी एशिया, ईरान, अफगानिस्तान और पाकिस्तान को पार करते हुए देश के उत्तरी-पश्चिमी भागों में पहुँचते हैं। मार्ग में, उत्तर में केस्पियन सागर तथा दक्षिण में फ़ारस की खाड़ी से भी ये कुछ आर्द्रता ग्रहण कर लेते हैं।

इन पश्चिमी विक्षोभों से उत्तरी भारत में हल्की वर्षा होती है। यद्यपि इस वर्षा की मात्रा बहुत कम होती है, फिर भी यह रबी की फसल, विशेष रूप से गेहूँ के लिए लाभप्रद होती है। यह वर्षण मैदानी भागों में वर्षा के रूप में तथा पश्चिमी हिमालय के क्षेत्रों में भारी हिमपात के रूप में होता है। ग्रीष्म ऋतु में यही हिम पिघल कर हिमालय की नदियों को सदानीरा बनाए रखता है। वर्षण की मात्रा मैदानी भागों में पश्चिम से पूर्व और पहाड़ी क्षेत्रों में उत्तर से दक्षिण की ओर कम होती जाती है।

इन विक्षोभों के आने से पहले मौसम कोष्ण हो जाता है या तापमान एकाएक बढ़ जाता है। कुछ दिनों की वर्षा के बाद आकाश स्वच्छ हो जाता है तथा तापमान गिर जाता है। कभी-कभी इन विक्षोभों के गुजर जाने के बाद शीत लहर आ जाती है। शीत लहर उसे कहते हैं जब सामान्य तापमान में 5° से. या उससे अधिक की कमी आ जाती है।

उत्तर-पूर्वी व्यापारिक पवनों से भारत के एक ही क्षेत्र को लाभ पहुँचता है और वह है तमिलनाडु। उदाहरण के लिए चेन्नई में इन पवनों से पर्याप्त वर्षा होती है।

भारत में इन पवनों को सामान्यतः उत्तर-पूर्वी मानसून के नाम से पुकारा जाता है।

ग्रीष्म ऋतु

मार्च और मई के बीच ऊष्मा कटिबंध दक्षिण से उत्तर की ओर खिसक जाता है। इसका कारण सूर्य का उत्तरायण होना है। मार्च के महीने में सबसे अधिक तापमान दक्कन के पठार पर पाया जाता है। इस समय तापमान लगभग 38° से. होता है। अप्रैल में ऊष्मा कटिबंध उत्तर की ओर आगे खिसक कर गुजरात और मध्य प्रदेश में आ जाता है। यहाँ इस समय तापमान 42° से. से 43° से. तक रहता है। मई में ऊष्मा

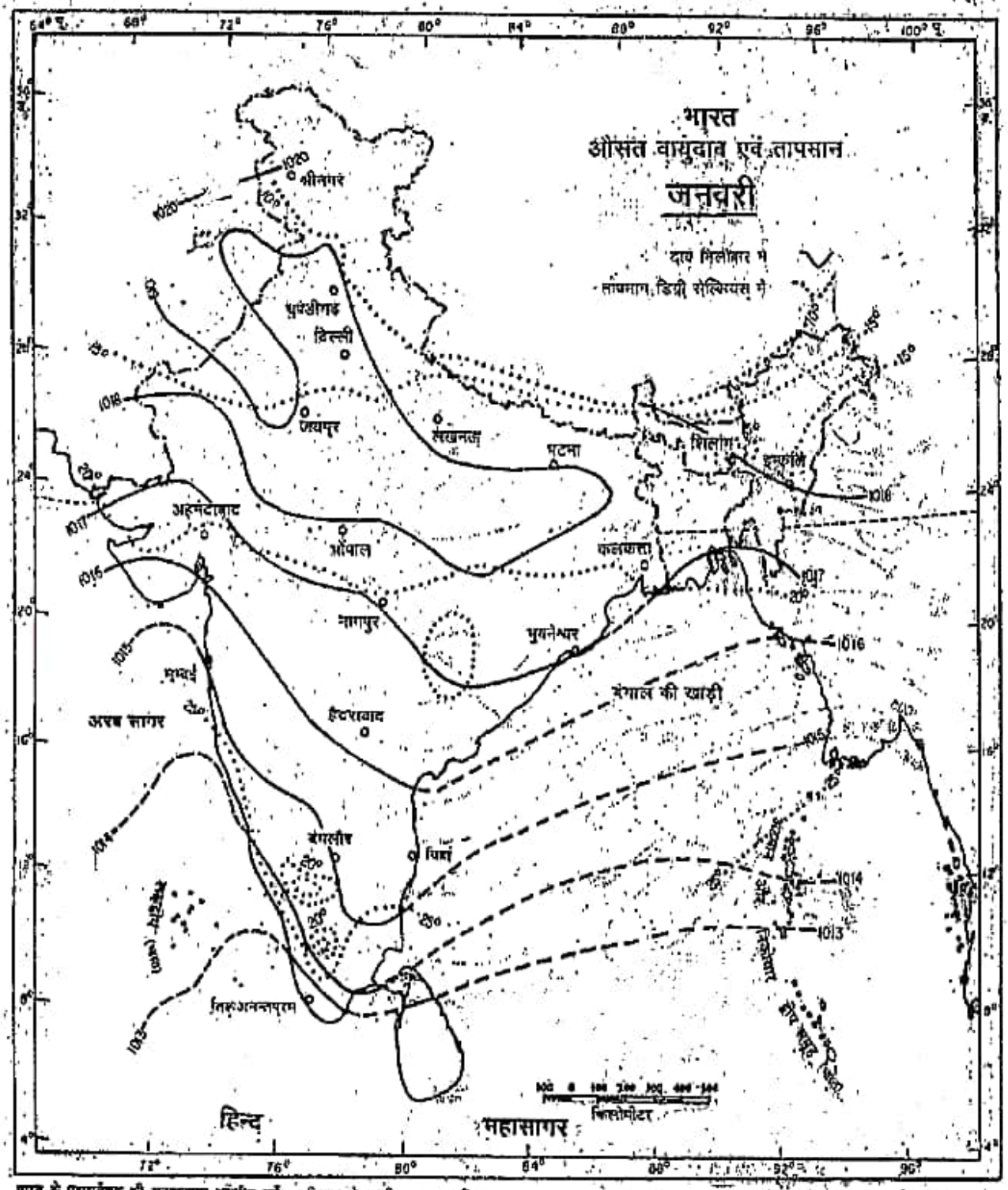

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।
© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 2.2 भारत—औसत वायुदाब और तापमान (जनवरी)

भारत के किन भागों में अधिकतम और किन भागों में न्यूनतम तापमान है? उच्च तथा निम्न वायुदाब क्षेत्रों को देखिए। उनसे क्या संकेत मिलता है। इस मानचित्र की तुलना चित्र 2.3 से कीजिए।

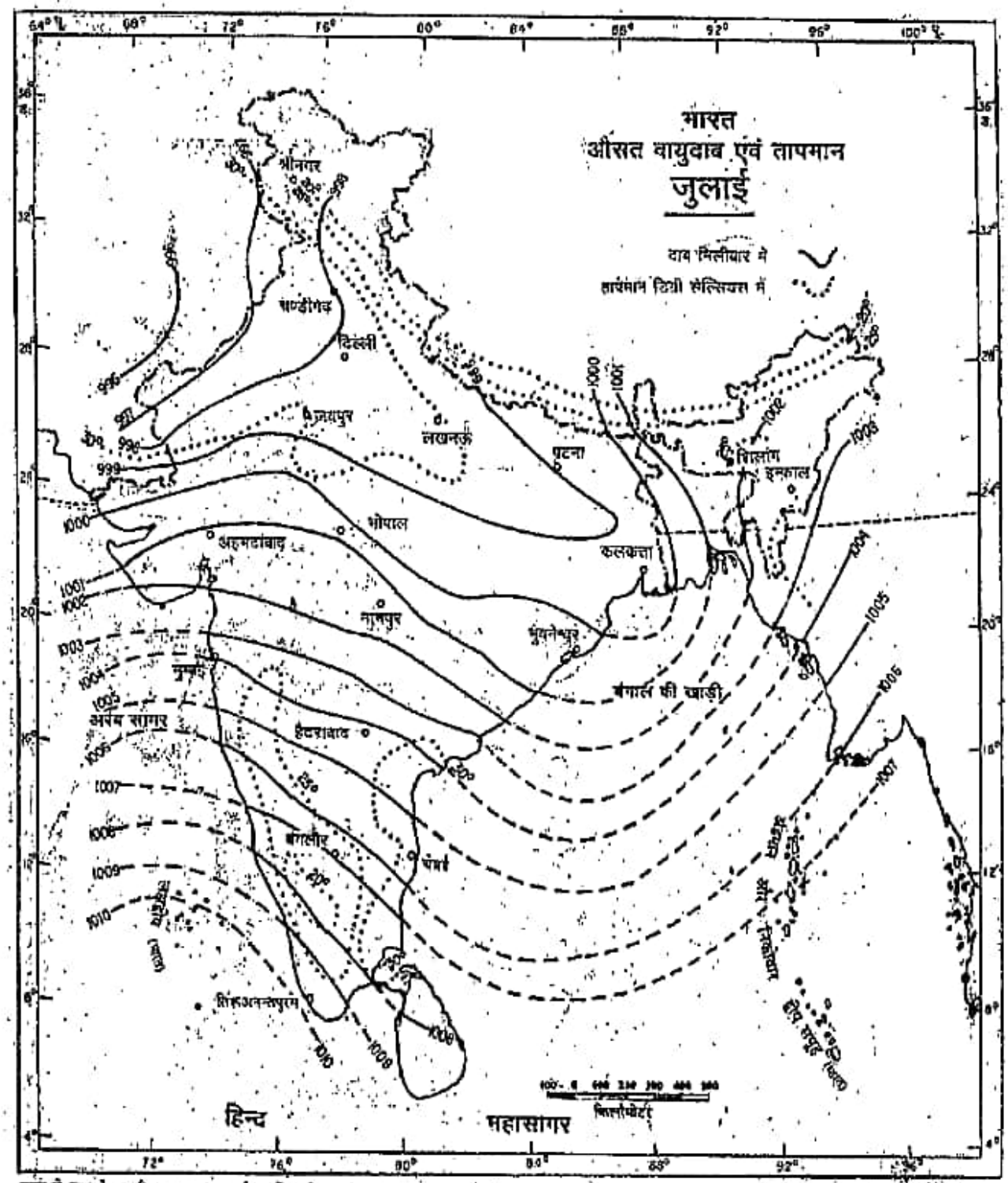

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 2.3 भारत–औसत वायुदाब और तापमान (जुलाई)

देखिए मानसून का निम्न दाब गर्त थार के मरुस्थल से लेकर बंगाल की खाड़ी के शीर्ष तक फैला है। उत्तरी-पश्चिमी भारत की जलवायु महाद्वीपीय या विषम क्यों कही जाती है ?

कटिबंध और अधिक उत्तर में खिसक जाता है। इस समय देश के उत्तर-पश्चिमी भागों में तापतान का 48° से. तक पहुँच जाना सामान्य है।

ग्रीष्म ऋतु के महीनों में देश के आधे उत्तरी भाग में तापमान बढ़ने तथा वायुदाब घटने का समय है। यहाँ मई के अन्त तक एक लंबा संकरा निम्न वायुदाब क्षेत्र विकसित हो जाता है। इसे मानसून का निम्न वायुदाब गर्त कहते हैं। इसका विस्तार उत्तर पश्चिम में थार के मरुस्थल से लेकर पूर्व-दक्षिण-पूर्व में पटना तथा छोटानागपुर के पठार तक हो जाता है। इस निम्न वायुदाब गर्त के चारों ओर वायु का परिसंचरण होने लगता है।

देश के उत्तर-पश्चिमी भागों में निम्न वायुदाब गर्त के केंद्र में दोपहर के बाद शुष्क और गर्म पवनें चलती हैं। कभी-कभी इनका प्रकोप आधी रात तक बना रहता है। इन शुष्क तथा गर्म पवनों का स्थानीय नाम "लू" है। इस झुलसाने वाली लू से कभी-कभी मौतें भी हो जाती हैं। मई के महीने में पंजाब, हरियाणा, पूर्वी राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में शाम के समय धूलभरी आँधियों का आना सामान्य बात है। इन आँधियों के बाद अस्थाई ही सही, कष्टदायक गर्मी से राहत मिलती है, क्योंकि इनके बाद हल्की वर्षा हो जाती है तथा सुहावनी शीतल हवा बहने लगती हैं।

कभी-कभी आर्द्रता से लदी पवनें इस निम्न वायुदाब गर्त के निकटवर्ती क्षेत्रों में खिंच आती हैं। शुष्क तथा आर्द्र वायु राशियों के अचानक एक दूसरे से संपर्क में आने से स्थानीय प्रचंड तूफान आ जाते हैं। इन स्थानीय तूफानों के समय बहुत तेज पवनें चलती हैं, मूसलाधार वर्षा होती है तथा कभी-कभी ओले भी पड़ते हैं।

ग्रीष्म ऋतु के अन्त में केरल तथा कर्नाटक के तटीय भागों में मानसून आने के पहले वर्षा का होना सामान्य बात है। इनका स्थानीय नाम "आम्रवृष्टि" है। आम के फलों को शीघ्र पकने में सहायक होने के कारण ही इन्हें यह नाम दिया जाता है। दक्कन के पठार पर इस समय अपेक्षाकृत उच्च वायुदाब रहता है। इस कारण न तो मानसून-पूर्व की वर्षा आगे बढ़ पाती है और न ही मानसून का और उत्तर की ओर शीघ्र विस्तार हो पाता है।

इस ऋतु में पश्चिम बंगाल और असम में उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तरी पवनों के द्वारा वर्षा की तेज बौछारें पड़ती हैं। ये वास्तव में सायंकालीन तड़ित झंझा है। इनका कुख्यात स्वरूप इनके स्थानीय नाम "काल बैसाखी" से ही स्पष्ट हो जाता है। इसका अर्थ "बैसाख मास का काल" है।

आगे बढ़ता हुआ मानसून

लगभग संपूर्ण भारत में जून, जुलाई, अगस्त और सितंबर के महीने ही वर्षा ऋतु के हैं। वर्षा ऋतु की अवधि दक्षिण से उत्तर तथा पूर्व से पश्चिम की ओर घटती जाती है। देश के सबसे उत्तर-पश्चिमी भाग में यह अवधि केवल दो महीनों की होती है। इस अवधि में कुल वर्षा के तीन चौथाई से लेकर दस से नौ भाग तक वर्षा हो जाती है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि पूरे वर्ष में वर्षा का वितरण कितना असमान है।

उत्तर-पश्चिमी मैदानी भागों में वायुदाब और भी नीचे चला जाता है। जून के प्रारंभ तक निम्न वायुदाब का यह क्षेत्र इतना प्रबल हो जाता है कि ये दक्षिणी गोलार्द्ध की व्यापारिक पवनों को अपनी तरफ खींच लेता है। इन दक्षिणी-पूर्वी व्यापारिक पवनों की उत्पत्ति

महासागरों के ऊपर हैं। हिंद महासागर से चलती हुई ये विषुवत वृत्त को पार कर बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर में प्रवेश करती हैं। इसके बाद ये भारत के वायु संचरण का अंग बन जाती हैं। विषुवतीय गर्म धाराओं के ऊपर से गुजरने के कारण ये भारी मात्रा में आर्द्रता ग्रहण कर लेती हैं। विषुवत वृत्त पार करते ही इनकी दिशा दक्षिण-पश्चिम हो जाती है। इसीलिए इन्हें दक्षिण-पश्चिम मानसून कहा जाता है। इस प्रकार स्थल पर उत्पन्न होने वाली शीतकालीन उत्तर-पूर्वी व्यापारिक पवनों का स्थान ठीक उल्टी दिशा से आने वाली आर्द्रता से भरी दक्षिण-पश्चिम मानसून पवनें ले लेती हैं। मानसून पवनें व्यापारिक पवनों के समान स्थित और नियमित नहीं होती हैं। इनकी प्रकृति ही घटने-बढ़ने की होती है।

ये वर्षा वाहिनी पवनें बड़ी तेज चलती हैं। इनकी औसत गति 30 किलोमीटर प्रति घंटा है। उत्तर-पश्चिमी भागों को छोड़कर ये एक महीने की अवधि में सारे भारत में फैल जाती हैं। आर्द्रता से लदी इन पवनों के आने के साथ ही बादलों का प्रचंड गर्जन तथा बिजली का चमकना शुरू हो जाता है। इसे मानसून का "फटना" या "टूटना" कहा जाता है।

यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि इन मानसून पवनों की दिशा दक्षिण-पश्चिम होती है लेकिन भू-भाग पर पहुँचते ही उच्चावच तथा भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों में स्थित निम्न वायुदाब क्षेत्र के प्रभाव से इनकी दिशा में परिवर्तन हो जाता है। लेकिन इससे भी पहले भारतीय प्रायद्वीप के कारण मानसून की दो शाखाएं हो जाती हैं। इनमें से एक अरब सागर की शाखा तथा दूसरी बंगाल की खाड़ी की शाखा है।

अरब सागर की शाखा के सामने पश्चिमी घाट पर्वतों का अवरोध आ जाता है। इसी कारण सह्याद्रि के पवनाभिमुख ढालों पर भारी वर्षा होती है। पश्चिमी घाट को पार करके यह शाखा दक्कन के पठार और मध्य प्रदेश में पहुँच जाती है, जहाँ इससे काफी मात्रा में वर्षा होती है। तत्पश्चात् इस का प्रवेश गंगा के मैदानों में होता है, जहाँ बंगाल की खाड़ी शाखा भी आकर इसमें मिल जाती है। अरब सागर के मानसून की शाखा का दूसरा भाग सौराष्ट्र के प्रायद्वीप तथा कच्छ में पहुँचता है। इसके बाद यह पश्चिमी राजस्थान के साथ-साथ आगे बढ़ता है और अरावली पर्वत-श्रेणियों के ऊपर आगे बढ़ता है। यहाँ इसके द्वारा बहुत हल्की वर्षा होती है। पंजाब और हरियाणा में पहुँचकर यह शाखा भी बंगाल की खाड़ी की शाखा में मिल जाती है। एक दूसरे से शक्ति पाकर ये दोनों शाखाएँ हिमालय के पश्चिमी भागों में वर्षा करती हैं।

मानसून की बंगाल की खाड़ी की शाखा स्वाभाविक रूप से म्यांमार (बर्मा) के तट की ओर तथा बांग्लादेश के दक्षिण-पूर्वी भागों की ओर बढ़ती है। लेकिन म्यांमार के तट के साथ-साथ फैली अराकान पहाड़ियों का अवरोध इस शाखा के बहुत बड़े भाग को भारतीय उपमहाद्वीप की दिशा में मोड़ देता है। इस प्रकार पश्चिमी बंगाल तथा बांग्लादेश में ये पवनें दक्षिण-पश्चिमी दिशा से न आकर, दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्वी दिशाओं से आती हैं। विशाल हिमालय तथा उत्तर पश्चिमी भारत के निम्न वायुदाब के प्रभाव से यह शाखा दो भागों में बँट जाती है। एक शाखा पश्चिम की ओर बढ़ती है तथा गंगा के मैदानों से होती हुई पंजाब के मैदानों तक पहुँचती है। इसकी दूसरी शाखा उत्तर तथा उत्तर-पूर्व

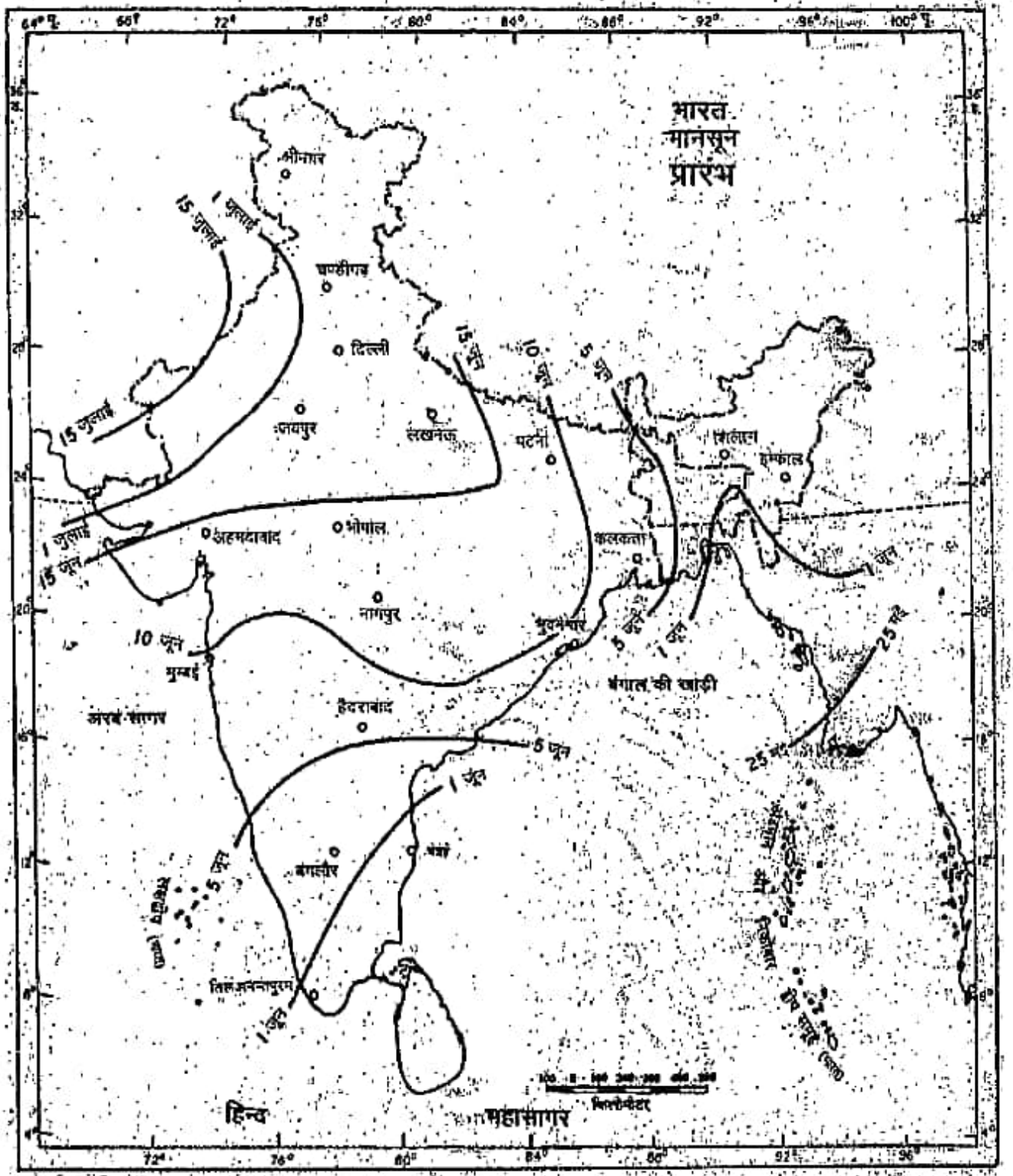

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित। © भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमाएं, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित हैं, परन्तु अभी सत्यापित होनी हैं।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अवस्थितियां विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 2.4 (क) भारत—मानसून के आगमन की सामान्य तिथियाँ

ध्यान दीजिए कि मानसून के केरल में प्रवेश करने और राजस्थान पहुँचने की तिथियाँ कौन-सी हैं? आप देखेंगे कि मानसून को पूरे देश में पहुँचने के लिए लगभग डेढ़ महीने का समय लगता है।

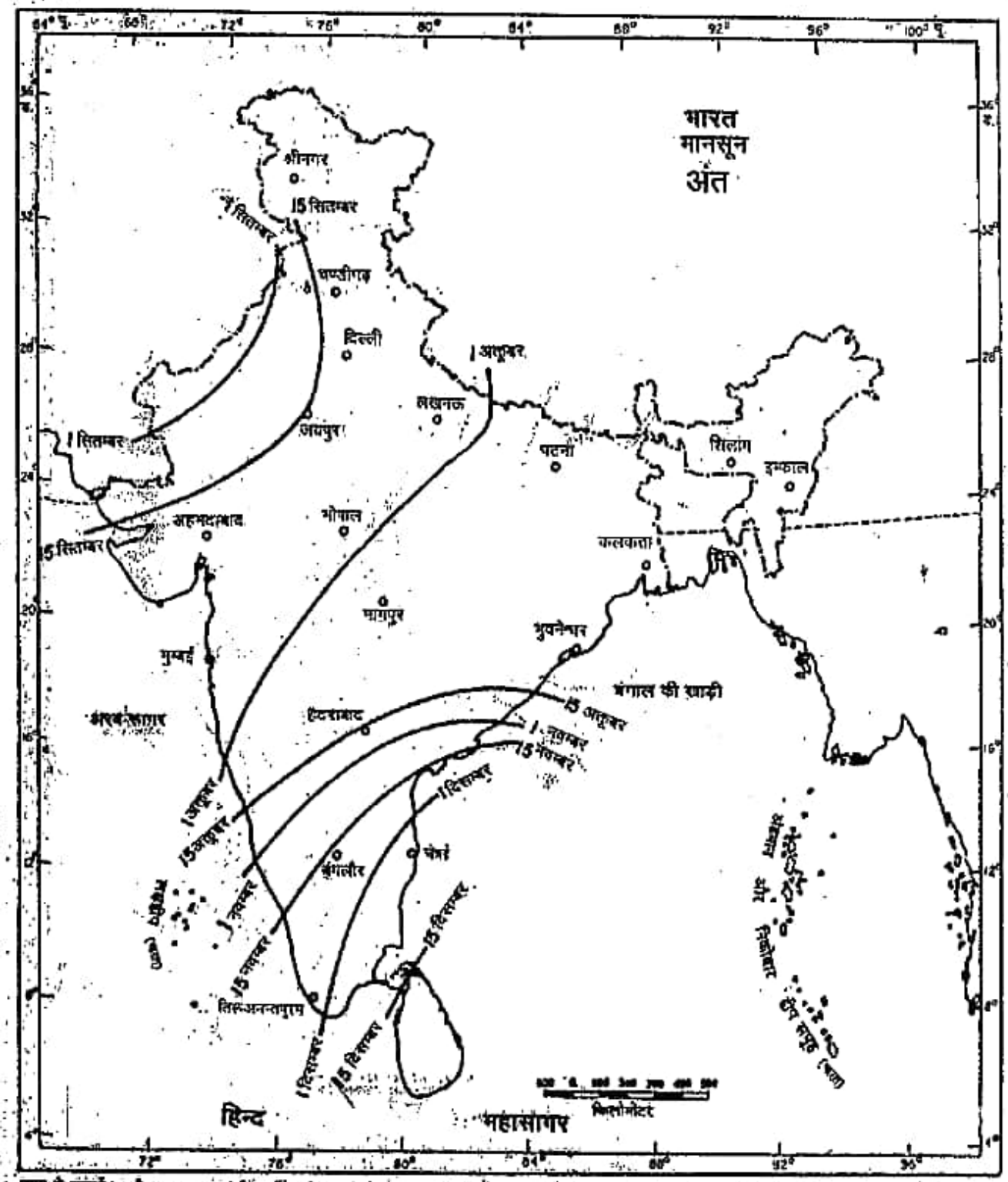

भारत के महासर्वेक्षक की अनुमतानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित। © भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अंतर्राज्यीय सीमाएं, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षांश-रेखांश विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 2.4 (ख) भारत—मानसून की वापसी की सामान्य तिथियाँ

चित्र 2.4 (क) और (ख) की तुलना करके बताइए कि पंजाब, असम, केरल, गुजरात और तमिलनाडु के तटीय क्षेत्रों में दक्षिण-पश्चिम मानसून की वर्षा-ऋतु की अवधि कितनी है ?

में ब्रह्मपुत्र की घाटी की ओर बढ़ती है। इससे उत्तर-पूर्वी भारत में भारी वर्षा होती है। इसकी एक उपशाखा मेघालय में गारो और खासी की पहाड़ियों से टकराती है। माउसिनराम, खासी पहाड़ियों के दक्षिण श्रेणी के शीर्ष पर स्थित है। यहाँ संसार की सबसे अधिक औसत वार्षिक वर्षा होती है। चेरापूंजी यहाँ से 16 किलोमीटर पूर्व स्थित है। यहाँ भी बहुत अधिक वर्षा होती है।

दक्षिण-पश्चिम मानसून से होने वाली वर्षा के वितरण पर उच्चावच का बहुत प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ पश्चिमी घाट के पवनाभिमुख ढालों पर 250 सें.मी. से अधिक वर्षा होती है। इसके विपरीत पश्चिमी घाट के पवन विमुख ढालों पर मुश्किल से 50 सें.मी. वर्षा होती है। पुनः उत्तर-पूर्वी राज्यों में होने वाली भारी वर्षा का मुख्य कारण यहाँ की पहाड़ी शृंखलाएँ तथा पूर्वी हिमालय है। उत्तरी मैदानों में वर्षा की मात्रा पूर्व से पश्चिम की ओर घटती जाती है। इस विशिष्ट ऋतु में कलकत्ते में लगभग 120 सें.मी., पटना में 102 सें.मी., इलाहाबाद में 91 सें.मी. तथा दिल्ली में 56 सें.मी. वर्षा होती है।

मानसूनी वर्षा लगातार नहीं होती है। कुछ दिनों तक वर्षा होने के बाद सूखा मौसम रहता है। मानसून के इस घटते-बढ़ते स्वरूप का कारण चक्रवातीय अवदाब है जो मुख्य रूप से बंगाल की खाड़ी के शीर्ष भाग में उत्पन्न होते हैं और भारत की मुख्य भूमि के ऊपर से गुज़रते हैं। इन चक्रवातों की आवृत्ति और तीव्रता के अलावा इनके द्वारा अनुसरण किए मार्ग पर वर्षा का क्षेत्रीय वितरण निर्भर करता है। इनका मार्ग प्रायः गंगा के मैदानों में स्थित निम्न वायुदाब के मानसूनी गर्त के अक्ष के साथ-साथ होता है। अनेक कारणों से निम्न वायुदाब का यह गर्त तथा उनका अक्ष उत्तर या दक्षिण की ओर खिसकता रहता है। उत्तरी मैदानों में पर्याप्त वर्षा के लिए यह आवश्यक है कि निम्न वायुदाब के गर्त का अक्ष अधिक समय मैदानी भाग में ही बना रहे। इसके विपरीत यदि गर्त का अक्ष खिसक कर हिमालय के निकट चला जाता है, तो मैदानी भाग में सूखे की अवधि लंबी हो जाती है लेकिन हिमालय की नदियों के पर्वतीय जल ग्रहण क्षेत्रों में व्यापक वर्षा होती है। इस भारी वर्षा के परिणामस्वरूप विनाशकारी बाढ़ें आती हैं जिनसे धन-जन की बहुत हानि होती है।

मानसून की स्वेच्छाचारिता तथा अनिश्चितता विख्यात है। सूखे और वर्षा के दिनों का क्रम तीव्रता, आवृत्ति और अवधि तीनों दृष्टि से बदलता रहता है। एक ओर तो कहीं भारी वर्षा से भयंकर बाढ़ आ सकती है तो दूसरे स्थान पर सूखा पड़ सकता है। मानसून का आगमन और वापसी भी अनियमित तथा अनिश्चित है। इससे देश के करोड़ों किसानों की खेती के कामों में बहुत बाधा पड़ती है।

पीछे हटता हुआ मानसून

अक्तूबर और नवंबर के महीनों में मानसून पीछे हटने लगता है। इस ऋतु में मानसून का निम्न वायुदाब का गर्त कमजोर पड़ जाता है, तथा उसका स्थान धीरे-धीरे उच्च वायुदाब ले लेता है। परिणामस्वरूप मानसून पीछे हटने लगता है। शक्ति क्षीण हो जाने के कारण मानसून की पहुँच कम हो जाती है। भारतीय भूभागों पर इसका प्रभाव क्षेत्र सिकुड़ने लगता है। अक्तूबर तक मानसून उत्तरी मैदानों से पीछे हट जाता है।

अक्तूबर-नवंबर के महीने, संक्रांति काल के हैं। इसमें गर्म वर्षा ऋतु का स्थान शुष्क शीतकालीन मौसम

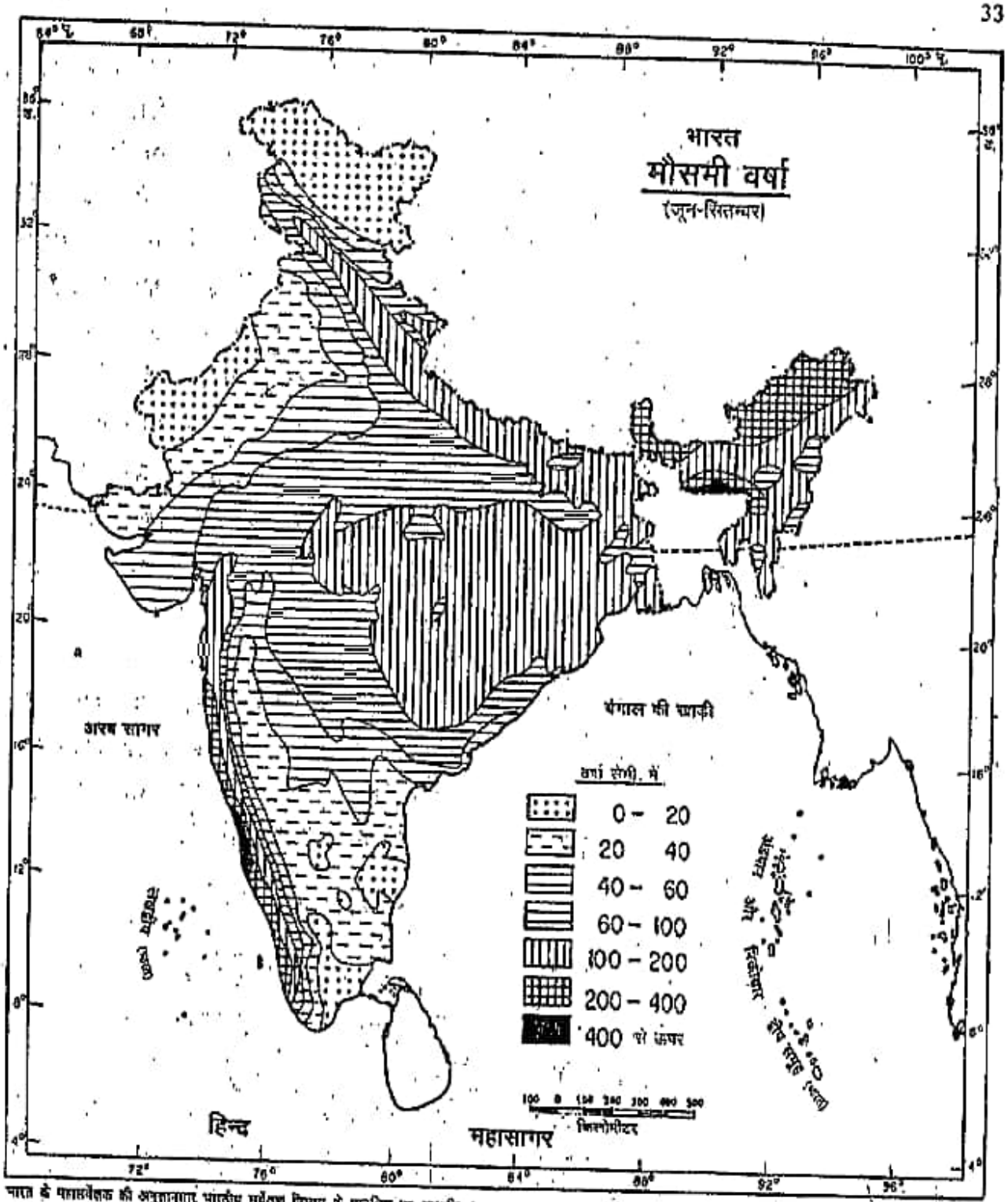

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमाएं, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अन्तर्विन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 2.5 भारत—मौसमी वर्षा (जून-सितम्बर)
उच्च, मध्यम और निम्न वर्षा के क्षेत्रों को देखिए।

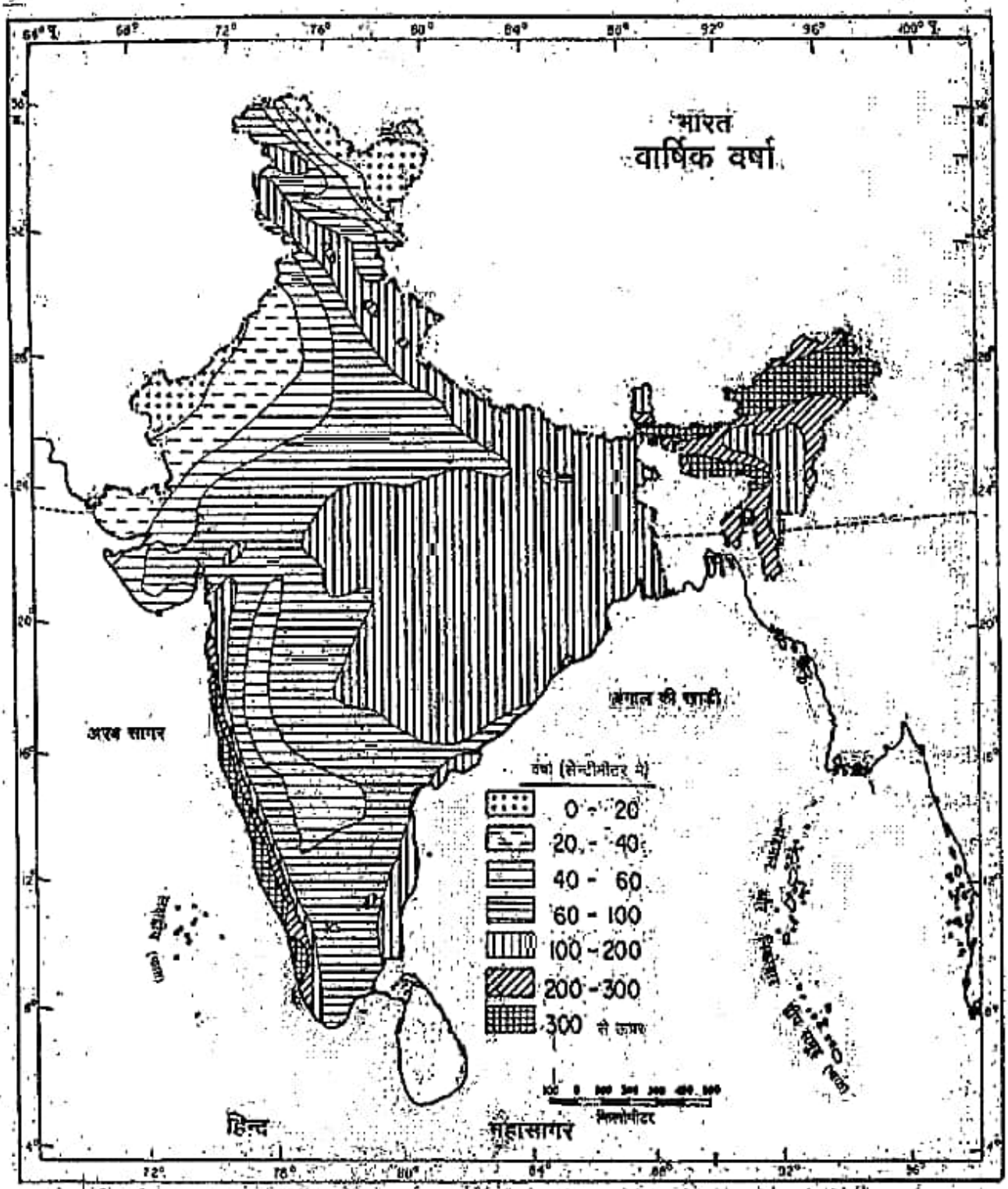

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996 ई.

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमाएं, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित हैं, परन्तु अभी सत्यापित होनी हैं।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित आधारविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 2.6 भारत—औसत वार्षिक वर्षा

चित्र 2.5 और 2.6 की तुलना कीजिए और भारत में वार्षिक वर्षा पर मानसून के प्रभाव पर ध्यान दीजिए। उन क्षेत्रों के नाम बताइए जहाँ अधिकांश वर्षा जून-सितम्बर के महीने में नहीं होती है।

लेने लगता है। मानसून के हटने से आकाश स्वच्छ हो जाता है और तापमान फिर से बढ़ने लगता है। भूमि अभी भी आर्द्र बनी रहती है। उच्च तापमान तथा आर्द्रता के कारण मौसम कष्टदायक हो जाता है। इसका लोक प्रचलित नाम "क्वार की उमस" है। अक्तूबर के उत्तरार्द्ध में विशेषकर उत्तरी भारत में तापमान तेजी से गिरने लगता है।

नवंबर के प्रारंभ में उत्तर-पश्चिमी भारत का निम्न वायुदाब का क्षेत्र बंगाल की खाड़ी में स्थानान्तरित हो जाता है। निम्न वायुदाब के क्षेत्र का यह स्थानान्तरण शांतिपूर्ण नहीं कहा जा सकता है। इनका संबंध इस अवधि में अंदमान सागर में पुनः उत्पन्न होने वाले चक्रवात से है। इनमें से कुछ चक्रवात दक्षिणी प्रायद्वीप के पूर्वी तटों को पार कर जाते हैं। इनके द्वारा इन क्षेत्रों में भारी तथा व्यापक वर्षा होती है। ये उष्णकटिबंधीय चक्रवात प्रायः बहुत विनाशकारी होते हैं। ये चक्रवात अधिकतर गोदावरी, कृष्णा और कावेरी के सघन बसे डेल्टा प्रदेशों में आते हैं। कोई भी वर्ष इनकी विनाश लीला से खाली नहीं जाता। कभी-कभी ये उष्णकटिबंधीय चक्रवात सुन्दरवन और बांग्लादेश में भी पहुँच जाते हैं। कोरोमंडल तट पर अधिकतर वर्षा इन्हीं चक्रवातों और अवदाबों के कारण होती है।

वर्षण का वितरण

भारत के पश्चिमी तट तथा उत्तर-पूर्वी भागों में वार्षिक वर्षा 300 सें.मी. से अधिक होती है। पश्चिमी राजस्थान तथा इसके निकटवर्ती पंजाब, हरियाणा और गुजरात के क्षेत्रों में 50 सें.मी. से भी कम वार्षिक वर्षा होती है। सह्याद्रि के पूर्व में दक्कन के पठार के आंतरिक भागों में भी वर्षा कम होती है। कम वर्षण वाला तीसरा क्षेत्र कश्मीर में लेह के आस-पास का प्रदेश है। देश के शेष भागों में साधारण वर्षा होती है। हिमपात हिमालय के क्षेत्रों तक ही सीमित रहता है।

मानसून की स्वेच्छाचारिता के कारण वार्षिक वर्षा की मात्रा प्रतिवर्ष घटती बढ़ती रहती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में वर्षा की परिवर्तनशीलता अधिक है। भारी वर्षा वाले क्षेत्रों में बाढ़ आने की संभावना बनी रहती है। कम तथा साधारण वर्षा वाले क्षेत्रों में सदैव सूखे की आशंका रहती है।

मानसूनी एकता

यह पढ़ चुके हैं कि हिमालय की पर्वत-शृंखलाएँ अत्यंत ठंडी ध्रुवीय पवनों से भारतीय उपमहाद्वीप की रक्षा किस प्रकार करती हैं। इसके कारण अपेक्षाकृत उच्च अक्षांशों के बावजूद उत्तरी भारत में एक समान ऊँचा तापमान बना रहता है। जलवायु की विषमताओं तथा एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में अंतर के बाद भी मानसून के कारण प्रतिवर्ष ऋतुओं के चक्र की एक लय बनी रहती है। भारत के भूदृश्य, समस्त जीव-जन्तु तथा वनस्पति, खेती के सभी कार्य, भारत के लोगों का पूरा जीवन यहाँ तक कि उनके तीज-त्योहार भी इसी ऋतु लय के चारों ओर घूमते हैं।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए —
   (क) उष्णकटिबंधीय जलवायु की दो विशेषताएँ कौन-सी हैं ?
   (ख) दक्षिण पश्चिम मानसून की उत्पत्ति का क्या कारण है ?
   (ग) जेट वायुधाराएँ किन्हें कहते हैं ?
   (घ) भारत की चार ऋतुओं के नाम लिखिए।
   (ङ) गंगा की घाटी में चलते हुए उत्तर-पूर्वी व्यापारिक पवनों की दिशा क्यों बदल जाती है ?
   (च) मानसून के "फटने" या "टूटने" से क्या तात्पर्य है ?
   (छ) उस स्थान का नाम बताएँ जहाँ संसार में सबसे अधिक वर्षा होती है?
   (ज) पूर्वी तट पर स्थित उन राज्यों के नाम बताइए जहाँ उष्णकटिबंधीय चक्रवात प्रायः आते हैं ?
2. अंतर स्पष्ट कीजिए —
   (क) सम और विषम जलवायु
   (ख) वर्षा और वर्षण
   (ग) उत्तर पूर्वी मानसून तथा पीछे हटता हुआ मानसून
3. निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर भारत में जलवायु की विषमताओं के कुछ उदाहरण दीजिए —
   (क) तापान्तर (ख) वर्षा वाहिनी पवनों की दिशा
   (ग) वर्षण का रूप (घ) वर्षा की मात्रा
   (ङ) वर्षा की प्रवृत्ति अर्थात् वर्षा का ऋतु के अनुसार वितरण
4. मानसून के रचना तंत्र की विवेचना कीजिए।
5. भारत की शीत ऋतु में मौसम की सामान्य दशाओं का विवरण दीजिए।
6. उपयुक्त उदाहरण देते हुए मानसून की एकता स्थापित करने वाली भूमिका की विवेचना कीजिए।

मानचित्र कार्य

7. भारत के रेखा-मानचित्र में निम्नलिखित दिखाइए —
   (क) शीतकालीन वर्षा वाले क्षेत्र
   (ख) उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के सामान्य मार्ग
   (ग) 50 सें.मी. से कम वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र

खंड दो

हमारे प्राकृतिक संसाधनों का आधार

अनुकूल पर्यावरण में ही जीवन का विकास होता है। इस प्रकार जीवन और पर्यावरण में अटूट पारस्परिक संबंध है। किसी भी क्षेत्र के सभी प्रकार के जीवन और वहाँ के भौतिक पर्यावरण के द्वारा एक पारितंत्र बनता है। प्रत्येक पौधा और जीव-जन्तु पर्यावरण से प्रभावित होने के साथ-साथ उसे भी प्रभावित करते हैं। अन्य सभी पौधों और जीव-जन्तुओं की भाँति ही मनुष्य भी पारितंत्र का अभिन्न अंग है। लेकिन मानव-जाति अन्य सभी जीव-रूपों से भिन्न है क्योंकि वह अपने पर्यावरण से सीखती भी है तथा इस प्रक्रिया में उसे अपने अनुकूल भी बनाती है। मनुष्य पर्यावरण या पारितंत्र के अनेक तत्वों का उपयोग अपने आराम तथा विकास के लिए करता है। कुछ उपयोगी तत्व प्रकृति के ऐसे उपहार हैं, जिन्हें मनुष्य स्वयं पैदा नहीं कर सकता। मनुष्य के जीवन को आरामदेह तथा सुख सुविधापूर्ण बनाने में काम आने वाले प्रकृति के इस उपहारों को प्राकृतिक संसाधन कहते हैं। पर्यावरण के अन्य घटक संभाव्य संसाधन हैं।

प्राकृतिक संसाधनों का आर्थिक महत्व है, क्योंकि मनुष्यों ने इन्हें उपयोगी बनाकर मूल्यवान बनाया है। दूसरे, उपयोग बढ़ने के साथ इनके अभाव अथवा पूरी तरह समाप्त होने की आशंका भी सामान्यतः उत्पन्न हो ही जाती है। प्राकृतिक वनस्पति, जीव-जन्तु, मृदा, जल और खनिज पदार्थ हमारे देश के प्राकृतिक संसाधन हैं।

इस खंड में तीन अध्यायों का समावेश किया गया है। प्रथम अध्याय में वनस्पति, जीव-जन्तुओं तथा मृदा का वर्णन किया गया है। दूसरे अध्याय में जल संसाधनों तथा कृषि और जल विद्युत उत्पादन में उनके योगदान का आकलन किया गया है। इस खंड के अंतिम अध्याय में देश के खनिज पदार्थों तथा शक्ति के संसाधनों का विवरण दिया गया है।

इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों की नींव पर हम कृषि और उद्योग के विशाल भवन निर्माण का प्रयत्न करते रहे हैं। इस कार्य में परिवहनों के जाल, संचार के साधनों और व्यापार का बहुत महत्व है।

अध्याय 3

वनस्पति, जीव-जन्तु तथा मृदा

करोड़ों वर्षों तक पृथ्वी एक निर्जीव और वीरान ग्रह था। धीरे-धीरे समुद्र के खारे जल में जीवन विकसित हुआ। जीवन का पहला रूप वनस्पति जगत से संबंधित था। वनस्पति जगत के आधार पर ही जीवन के दूसरे रूप अर्थात् प्राणि जगत का आविर्भाव हुआ। वनस्पति जगत से प्राप्त भोजन या ऊर्जा पर ही जीव-जन्तुओं का जीवन निर्भर है। वनस्पति जगत का मौलिक महत्व इस बात में है कि एक मात्र वे ही सूर्य से प्राप्त ऊर्जा को खाद्य ऊर्जा में बदल सकते हैं। इसीलिए इस अध्याय का प्रारंभ देश में पाई जाने वाली वनस्पति के वर्णन से किया गया है क्योंकि यही हमारे प्राकृतिक संसाधनों के आधार का मेरुदंड है।

यह सही है कि जीव-जन्तु अपने जीवन के लिए पूर्णरूपेण वनस्पति जगत पर आश्रित हैं। लेकिन बदले

स्वयं करने के लिए

1. भारत की वनस्पति-कटिबंधों को दिखाने वाले मानचित्र का अध्ययन कीजिए। उच्चावच तथा वर्षा के मानचित्रों से इसकी तुलना कीजिए। ज्ञात कीजिए कि यह दोनों में से किसके अधिक अनुरूप है।
2. पता लगाइए कि हिमालय प्रदेश में प्राकृतिक वनस्पति के कटिबंधों के जल्दी-जल्दी बदलने का क्या कारण है।
3. भारत के प्रमुख जीव-जन्तुओं का उनके प्राकृतिक परिवेश जैसे राष्ट्रीय उद्यान, जीव-जन्तुओं के लिए अभ्यारण्य, प्राणी उद्यान (चिड़िया घर) तथा जीव आरक्षित क्षेत्र (बायोस्फीयर रिजर्व) में लिए गए चित्र इकट्ठा कीजिए।
4. समाचारपत्रों के परिशिष्टों, विज्ञापनों, केंद्र तथा राज्य के पर्यटन विभागों द्वारा प्रकाशित प्रचार साहित्य तथा दृश्य सामग्री को संजोकर रखिए तथा इस प्रकार संकलित सामग्री की कक्षा/विद्यालय में प्रदर्शनी लगाइए।
5. भारत की मृदा के विभिन्न प्रकारों को दिखाने वाले मानचित्र का अध्ययन कीजिए। स्वयं पता लगाइए कि मृदा का सबसे निकट का संबंध — (i) वर्षा के वितरण (ii) प्राकृतिक वनस्पति (iii) प्रमुख भू-आकृतियों—में से किसके साथ अधिक है।

में जीव-जन्तु भी वनस्पति के लिए बहुत उपयोगी हैं क्योंकि ये इसको बनाए रखने और बढ़ाने में अनेक प्रकार से सहायता करते हैं। इस तथ्य का अध्ययन आपने जीव-विज्ञान में अवश्य किया होगा। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। यही कारण है कि इस अध्याय में वनस्पति के पश्चात् जीव-जन्तुओं का वर्णन किया गया है।

इस अध्याय के अंत में मृदा का वर्णन है। मृदा हमारे सबसे प्रमुख संसाधन हैं। संपूर्ण वनस्पति जगत तथा समस्त जीव-जन्तु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपना भोजन अन्ततोगत्वा मृदा से ही प्राप्त करते हैं। क्या मनुष्य इसके अपवाद हैं ? नहीं, बिलकुल नहीं। वे भी अपने भोजन के लिए वनस्पति जगत पर आश्रित हैं। मृदा मनुष्य के लिए उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं जितना पौधों और अन्य जीव-जन्तुओं के लिए। कृषि के 5,000 वर्षों के लंबे इतिहास में मनुष्य केवल पौधों का चयन करने, उनके बीज बोने, उनकी वृद्धि में सहायता करने और दुर्दिनों के लिए उनके भंडारण करने में समर्थ हुआ है। वह पौधों की भाँति अपने लिए भोजन नहीं बना सकता।

प्राकृतिक पारितंत्र

किसी क्षेत्र के पौधे तथा जीव-जन्तु परस्पर इतने जुड़े होते हैं तथा एक दूसरे पर आश्रित हो जाते हैं कि एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना तक नहीं की जा सकती। किसी क्षेत्र के एक दूसरे पर आश्रित पौधे और जीव-जन्तु मिलकर एक पारितंत्र का निर्माण करते हैं। पारितंत्र का विकास लाखों, करोड़ों वर्षों में हुआ है। पारितंत्र से छेड़छाड़ के किसी भी प्रयत्न के गंभीर परिणाम हो सकते हैं। मनुष्य इसी पारितंत्र का एक भाग है। वास्तव में इस मूलभूत तथ्य की जानकारी मनुष्य को काफी बड़ी गलतियाँ करने के बाद विगत कुछ वर्षों में ही प्राप्त हुई हैं। इसलिए उसने इस खतरनाक स्थिति को सुधारने के प्रयत्न आरंभ किए हैं। जिससे यह उसके हाथों से निकल नहीं जाए।

विविध वनस्पति

जलवायु की दशाओं, प्राकृतिक वनस्पति और मृदा में बहुत ही निकट का संबंध है। संपूर्ण भारत में फैली मूल प्राकृतिक वनस्पति के आवरण में वन, घास भूमियाँ तथा झाड़ियाँ सम्मिलित थी। हमारे देश में 49,000 विभिन्न जातियों के पौधों की सूची और उनका वर्णन उपलब्ध है। संसार में भारत के समान क्षेत्रफल वाले देशों की तुलना में पौधों की यह संख्या काफी बड़ी है। इनमें से 5,000 प्रजातियाँ तो ऐसी हैं जो केवल भारत में ही मिलती हैं। हमारा देश फूलों वाले (पुष्पों) तथा बिना फूलों वाले दोनों प्रकार के पौधों में संपन्न है। फर्न, शैवाल तथा कवक बिना फूलों वाले पौधे हैं। पौधों की ऐसी विविधता का रहस्य देश के विभिन्न उच्चावच, स्थलाकृतियों, मृदा, दैनिक तथा वार्षिक तापान्तरों, वर्षा की मात्रा तथा इसकी अवधि के अंतर में छिपा है। संक्षेप में, हमारे देश में उष्णकटिबंधीय वनस्पति से लेकर ध्रुवीय वनस्पति तक पाई जाती है। ऐसा मुख्य रूप से हिमालय के कारण है।

वनस्पति प्रदेश हिमालय प्रदेश को छोड़कर, देश को चार प्रमुख वनस्पति प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है, वे हैं — (1) उष्णकटिबंधीय वर्षा वन, (2) उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वन, (3) कंटीले वन तथा झाड़ियाँ, और (4) ज्वारीय वन।

(1) उष्णकटिबंधीय वर्षा वन

क्योंकि इस प्रदेश में पूरे वर्ष गर्म और आर्द्र जलवायु की दशाएँ रहती हैं। इन वनों के वृक्ष किसी विशेष ऋतु में अपनी पत्तियाँ नहीं गिराते। अतः वे सदाहरित हैं। सदाहरित वन 200 सें.मी. से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों

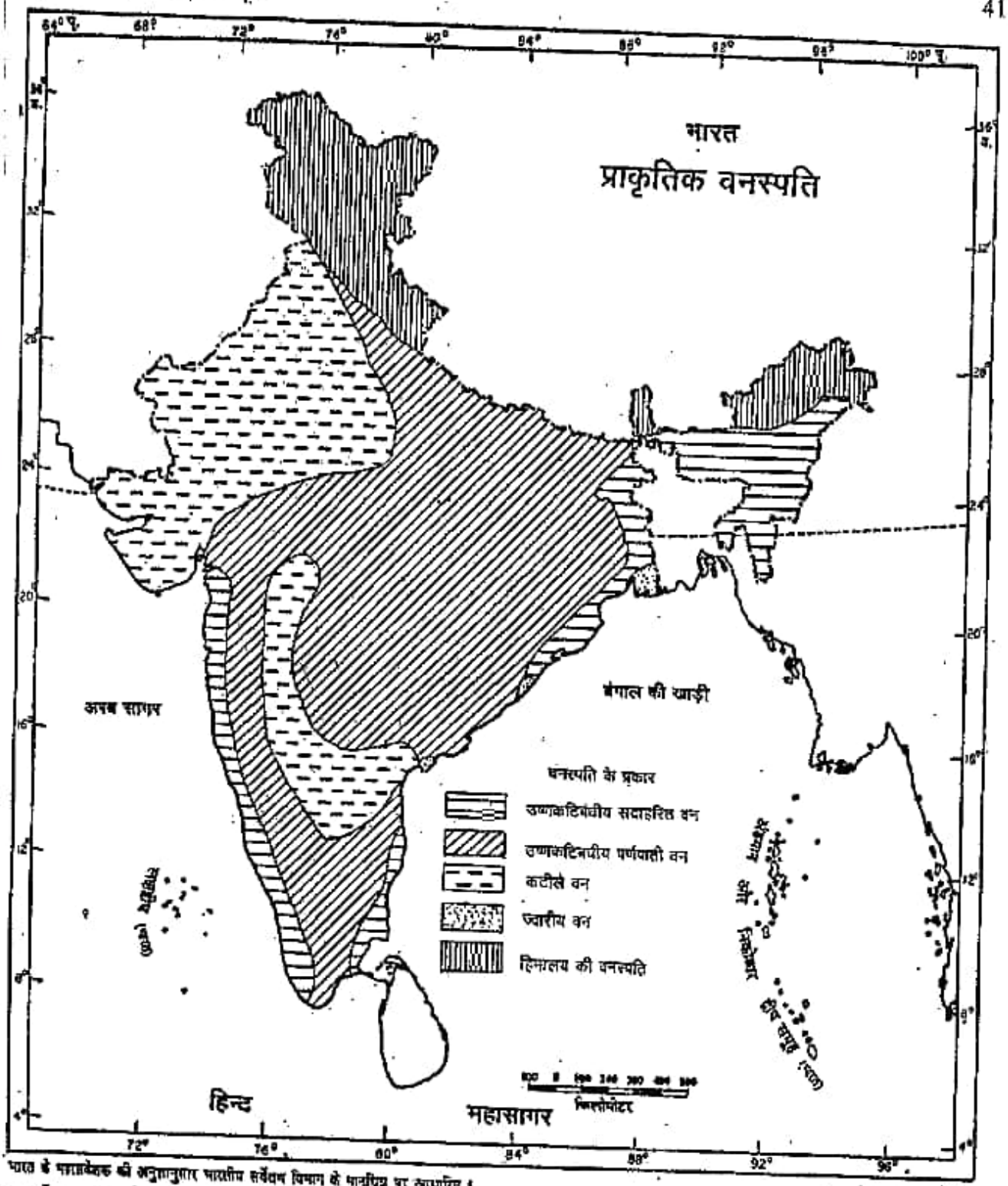

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित आन्तरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 3.1 भारत—प्राकृतिक वनस्पति

इस मानचित्र की तुलना वार्षिक वर्षा वाले मानचित्र से कीजिए और दोनों के बीच संबंध स्थापित कीजिए। भारत में किस प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति सर्वाधिक पाई जाती है ?

में भली-भाँति पनपते हैं। यहाँ शुष्क ऋतु छोटी होती है। ये इस प्रकार ठेठ (प्रतिनिधि) वर्षा वन हैं। ये वन पश्चिमी बंगाल के मैदानों, उड़ीसा तथा उत्तर-पूर्वी भारत में पाए जाते हैं॥

इन वनों में वृक्ष बड़ी तेजी से बढ़ते हैं और उनकी ऊँचाई 60 मीटर या इससे भी अधिक तक हो जाती है। इन वनों में कई जातियों के वृक्ष पाए जाते हैं और वे इस प्रकार एक साथ मिले हुए होते हैं कि उनके व्यापारिक उपयोग में कठिनाई आती है। इन वनों में पाए जाने वाले व्यापारिक महत्त्व के वृक्ष आबनूस, महोगनी तथा रीजबुड हैं।

(2) उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वन

इन्हें मानसूनी वन भी कहा जाता है क्योंकि ये मानसूनी प्रदेश में पाए जाते हैं। ये वन लगभग सारे भारत में, विशेष रूप से 75 सें.मी. से लेकर 200 सें.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। आर्थिक दृष्टि से ये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इन्हें अच्छी देखभाल की आवश्यकता होती है क्योंकि ये वन जल्दी आग पकड़ लेते हैं। इन वनों के दो उपवर्ग हैं — (क) आर्द्र पर्णपाती वन (ख) शुष्क पर्णपाती वन। पहले वर्ग के वन पश्चिमी घाट की पूर्वी ढालों पर मिलते हैं। सागौन इस प्रदेश का महत्त्वपूर्ण वृक्ष है। आर्द्र पर्णपाती वन प्रायद्वीप के उत्तर-पूर्वी भागों में, अर्थात् छोटानागपुर पठार के चारों तरफ जिसमें पूर्वी मध्य प्रदेश, दक्षिण बिहार तथा उड़ीसा शामिल हैं, पाए जाते हैं। उत्तर में ये वन शिवालिक की श्रेणी के साथ-साथ फैले हैं। "साल" शुष्क पर्णपाती वनों का सबसे महत्त्वपूर्ण वृक्ष है। ऐसा देखा गया है कि धीरे-धीरे आर्द्र पर्णपाती वनों का स्थान, शुष्क पर्णपाती वन लेते जा रहे हैं। इन्हें पर्णपाती (शुष्क अथवा आर्द्र) इसलिए कहते हैं कि ये ग्रीष्म ऋतु में 6 से 8 सप्ताह के लिए अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। प्रत्येक जाति के वृक्षों के पतझड़ का समय अलग-अलग होता है। फलस्वरूप संपूर्ण वन किसी भी समय में पत्ती-विहीन नहीं होते।

(3) कंटीले वन तथा झाड़ियाँ

ये 75 सें.मी. से कम वर्षा वाले क्षेत्रों तक सीमित हैं। ये वन देश के उत्तर पश्चिमी भाग में दक्षिण में सौराष्ट्र से लेकर उत्तर में पंजाब के मैदानों तक फैले हैं। पूर्व में ये वन उत्तरी मध्य प्रदेश (मुख्य रूप से मालवा का पठार) तथा दक्षिण पश्चिम उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड के पठार तक फैले हैं। कीकर, बबूल, खैर तथा खजूर इन वनों के कुछ उपयोगी वृक्ष हैं। इन वनों में वृक्ष छितरे हुए होते हैं। इनकी जड़ें लंबी तथा अरीय आकृति में फैली होती हैं। ये वन धीरे-धीरे झाड़ियों वाले और कंटीली झाड़ियों वाले प्रदेश में विलीन हो जाते हैं। कंटीली झाड़ियाँ ठेठ मरुस्थलीय वनस्पति हैं।

(4) ज्वारीय वन

तटों तथा नदियों के ज्वारीय क्षेत्र में मैनग्रोव के वृक्ष पाए जाते हैं। इन वृक्षों की यह विशेषता है कि ये खारे पानी और ताजे पानी दोनों में ही पनप सकते हैं। ज्वारीय क्षेत्र में ताजा तथा खारा जल एक दूसरे में मिलता रहता है। सुन्दरी नामक वृक्ष इन वनों का प्रसिद्ध वृक्ष है। इसी वृक्ष के नाम पर गंगा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा के वनाच्छादित भाग का नाम सुन्दरवन पड़ गया है।

पर्वतीय प्रदेशों में ऊँचाई के अनुसार वनस्पति की पेटियाँ

पर्वतीय प्रदेशों में वनस्पति के वितरण में ऊँचाई की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि ऊँचाई के बढ़ने पर तापमान घट जाता है। पर्वतीय प्रदेशों ने उष्णकटिबंधीय

वनस्पति से लेकर ध्रुवीय प्राकृतिक वनस्पति की उत्तरोत्तर एक के बाद दूसरी पेटी मिलती है। ये सभी पेटियाँ केवल 6 किलोमीटर की ऊँचाई में समाई हुई हैं। लेकिन एक ही ऊँचाई पर धूपवाले तथा कम धूपवाले क्षेत्रों की वनस्पति में भी अंतर आ जाता है।

हिमालय की गिरिपाद अंत शिवालिक की श्रेणियाँ, उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वनों से आच्छादित हैं। साल, इन वनों के प्रधान एवं आर्थिक दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण वृक्ष हैं। बांस भी यहाँ सामान्य हैं। इनके बाद की पेटी आर्द्र पर्वतीय वनों की है, जो समुद्र तल से 1,000 से लेकर 2,000 मीटर तक की ऊँचाई पर पाए जाते हैं। सदाहरित चौड़ी पत्तीवाले ओंक (ओक), चेस्टनट तथा सेब के वृक्ष यहाँ सामान्य रूप से मिलते हैं। ऐश तथा बीच, यहाँ के वनों के अन्य वृक्ष हैं। इसी ऊँचाई पर भारत के उत्तर-पूर्वी भागों में, जहाँ भारी वर्षा होती है, उपोष्ण कटिबंधीय चीड़ के वन पाए जाते हैं। इनमें चीड़ या चिल के वृक्षों की प्रधानता है।

और अधिक ऊँचाई पर अर्थात् समुद्रतल से 1,600 से 3,300 मीटर की ऊँचाई के बीच चीड़, सीडर, सिल्वर फर और स्प्रूस के वृक्षों की प्रधानता है। ये शीतोष्ण कटिबंध के प्रसिद्ध शंकुधारी वन हैं। हिमालय की आंतरिक श्रेणियों में तथा अपेक्षाकृत शुष्क भागों में ये वृक्ष तथा देवदार बहुत अच्छी तरह पनपते हैं।

समुद्रतल से 3,600 मीटर की ऊँचाई पर शीतोष्ण कटिबंधीय शंकुधारी वनों का स्थान अल्पाइन वन ले लेते हैं। इन वनों के प्रमुख वृक्ष सिल्वर फर, चीड़, भुर्ज (बर्च) तथा हपुषा (जूनिपर) हैं। ओर अधिक ऊँचाई पर अल्पाइन वनों का स्थान झाड़ियाँ, गुल्म तथा घास भूमियाँ ले लेती हैं।

हमारे विविध जीव-जन्तु

जितनी विविधता वनस्पति में है, उतनी ही विविधता हमारे देश के जीव-जन्तुओं में भी है। यहाँ इनकी लगभग 81,000 जातियाँ मिलती हैं। देश के ताजे और खारे पानी में 2,500 जाति की मछलियाँ पाई जाती हैं। इसी प्रकार पक्षियों की भी 1,200 जातियाँ हैं। इनके अतिरिक्त उभयचारी, सरीसृप, स्तनपायी तथा छोटे कीट और कृमि भी पाए जाते हैं।

स्तनपायियों में राजसी ठाठ-बाट वाले पशु हाथी प्रमुख हैं। यह विषुवतीय उष्ण आर्द्र वनों का जीव है। हमारे देश में यह असम, केरल तथा कर्नाटक के जंगलों में पाया जाता है, जहाँ भारी वर्षा होती है तथा जंगल भी बहुत घने हैं। इसके विपरीत ऊँट और जंगली गधे बहुत ही गर्म तथा शुष्क मरुस्थलों में पाए जाते हैं। ऊँट थार मरुस्थल का सामान्य पशु है, जबकि जंगली गधे केवल कच्छ के रन में ही मिलते हैं। इनकी विपरीत दिशा में एक सींग वाला गैंडा रहता है। ये असम और पश्चिम बंगाल के दलदली क्षेत्रों में रहते हैं। अन्य भारतीय जन्तुओं में भारतीय गौर (बाइसन), भारतीय भैंसा तथा नील गाय भी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। हिरण भारतीय जीव जगत की विशेषता है। यह बहुत ही कोमल तथा सुन्दर जीव है। भारत में हिरणों की अनेक जातियाँ पाई जाती हैं। इनमें चौसिंघा, काला हिरण, चिंकारा तथा सामान्य हिरण प्रमुख हैं। हिरणों की कुछ और जातियाँ भी मिलती हैं। इनमें कश्मीरी बारहसिंघा, दलदली मृग, चित्तीदार मृग, कस्तूरी मृग और मूषक मृग उल्लेखनीय हैं।

शिकारी जन्तुओं में भारतीय सिंह का विशिष्ट स्थान है। अफ्रीका के अलावा यह केवल भारत में ही

मिलता है। इसका प्राकृतिक आवास गुजरात में सौराष्ट्र के गिर जंगलों में है। भारत के अन्य भागों में जहाँ इस प्रकार के जलवायु वाले वन हैं, वहाँ इनके संवर्धन के लिए प्रयत्न किए जा रहें हैं। यदि सिंह सभी जन्तुओं में राजसी पशु है तो शेर सबसे शक्तिशाली पशु है। प्रसिद्ध बंगाल के शेर (बंगाल टाइगर) का प्राकृतिक निवास स्थान गंगा के डेल्टा के किनारे पाए जाने वाले सुन्दरवन हैं। बिल्ली जाति के अन्य जन्तुओं में तेंदुआ, लमचित्ता (क्लाउडेड लियोपार्ड) तथा हिमतेन्दुआ प्रमुख हैं। लमचित्ता तथा हिमतेन्दुआ हिमालय के केवल ऊँचे क्षेत्रों में ही पाए जाते हैं।

हिमालय की शृंखलाओं में अनेक आकर्षक जन्तु रहते हैं। इनमें जंगली भेड़, पहाड़ी बकरियाँ, साकिन (एक लंबे सींग वाली जंगली बकरी) तथा टैपीर उल्लेखनीय हैं। पांडा और हिमतेन्दुआ केवल ऊँचे स्थानों में ही रहते हैं।

भारत में बंदरों की अनेक जातियाँ मिलतीं हैं। लंगूर सामान्य रूप से पाया जाता है। सिंह जैसी अयाल और पूँछ वाला बन्दर (मकाक) बड़ा विचित्र जीव है। इसके मुँह पर चारों ओर बाल उगे होते हैं जो एक प्रभामंडल जैसा दिखता है।

भारत में अनेक प्रकार के रंग बिरंगे पक्षी मिलते हैं। यदि शेर राष्ट्रीय पशु है तो मोर राष्ट्रीय पक्षी है। फीजेंट (पक्षी), हंस, बत्तख, मैना, टुइयाँ तोते (पिराकोट), कबूतर, सारस और बगुले, धनेश (हार्नबिल), शकर खोरा (सनबर्ड) भारत के जंगलों और आर्द्र प्रदेशों में रहते हैं।

वन्य जीवों, विशेष रूप से संकटापन्न जीवों को संरक्षण प्रदान करने के लिए विशेष प्रयत्न किए जा रहे हैं। इस बारे में नवीनतम स्थिति तथा प्रवृत्तियों की जानकारी के लिए पशु पक्षियों की गणना की जाती है। बाघ परियोजना बड़ी सफल हुई है। देश के विभिन्न भागों में इस समय बाघों के 16 आरक्षित क्षेत्र हैं। इसी प्रकार असम में गैंडे के संरक्षण की एक विशेष योजना चलाई जा रही है। राजस्थान और मालवा में पाई जाने वाली सोहन चिड़िया (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड) के भी विलुप्त हो जाने की आशंका है। सिंहों की संख्या भी काफी दिनों से घटती ही जा रही है।

अतः देश की जैव विविधता की सुरक्षा और संरक्षण के उपाय किए जा रहे हैं। इस योजना के अंतर्गत नीलगिरि में भारत का पहला जीव आरक्षित क्षेत्र (बायोस्फीयर रिजर्व) स्थापित किया गया है। इसका क्षेत्रफल 5,500 वर्ग किलोमीटर है। यह कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल के सीमावर्ती क्षेत्रों में फैला है। इसकी स्थापना सन् 1986 में हुई। जीव आरक्षित क्षेत्र बहुउद्देशीय संरक्षण क्षेत्र हैं। इनका मुख्य उद्देश्य प्रतिनिधि पारितंत्रों में जैव विविधता को संरक्षित करना है।

नीलगिरि के अलावा अन्य जीव आरक्षित क्षेत्र हैं – (क) नंदा देवी (उत्तर प्रदेश), (ख) नोक्रेक (मेघालय), (ग) ग्रेट निकोबार, (घ) मन्नार की खाड़ी (तमिलनाडु), (ङ) मानस (असम), (च) सुन्दरवन (पश्चिम बंगाल), (छ) सिमिलीपाल (उड़ीसा) और (ज) डिब्रु-सैखोवा। इन जीव आरक्षित क्षेत्रों में प्रत्येक पौधे और जन्तु को संरक्षण दिया जाएगा, जिससे इस प्राकृतिक धरोहर को भावी पीढ़ियों को ज्यों का त्यों सौंपा जा सके। प्रत्येक जीव आरक्षित क्षेत्र में केंद्रीय भाग में वन्य भूमि, जीव-जन्तुओं तथा वनस्पति को उनके प्राकृतिक रूप से संरक्षित किया जाएगा। इनके निकटवर्ती क्षेत्रों का उपयोग वनों तथा उनके उत्पादों के विकास के शोध तथा प्रयोग के लिए किया जाएगा। इसके सीमांत क्षेत्र (बाहरी भाग) का उपयोग कृषि शोध तथा प्रयोगों के लिए होगा।

देश में 84 राष्ट्रीय उद्यान और 447 वन्य प्राणी अभयारण्य हैं। इस प्रकार 150,000 वर्ग किलोमीटर का भू-भाग संरक्षित है।

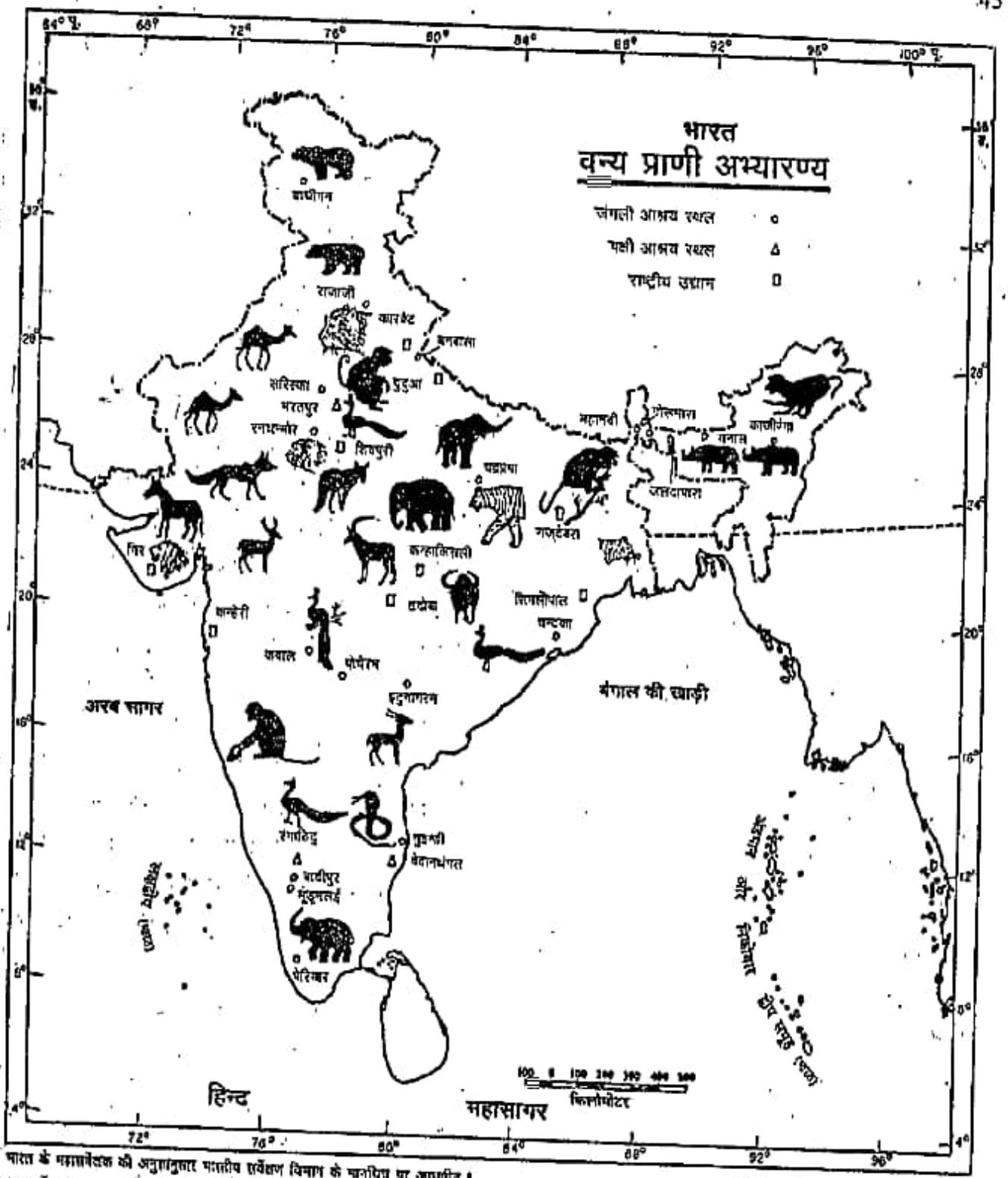

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अन्तर्विन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 3.2 भारत—प्रमुख वन्यप्राणी अभयारण्य

भारत के प्रमुख वन्यप्राणी अभयारण्य और राष्ट्रीय उद्यानों की स्थिति देखिए।

मृदा (मिट्टी) संसाधन

मिट्टी हमारे जीवन का आधार है। इसका निर्माण लाखों वर्षों में हुआ है। मूल शैलों के विखंडित पदार्थों से मिट्टी बनती है। प्रकृति की अनेक शक्तियाँ जैसे परिवर्तनशील तापमान, प्रवाहित जल, पवन आदि इसके विकास में सहायता करते हैं। मिट्टी की परतों में होने वाले रासायनिक तथा जैव परिवर्तन भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं। वनस्पति तथा जीव-जंतुओं के अवशेष जिन्हें ह्यूमस कहते हैं, मिट्टी का उपजाऊपन बढ़ाते हैं।

मिट्टी के प्रकार

भारत की मिट्टियों को सामान्यतया चार वर्गों में विभाजित किया जाता है, ये हैं — (क) जलोढ़ मिट्टी, (ख) काली (रिगड़) मिट्टी, (ग) लाल मिट्टी, और (घ) लैटेराइट मिट्टी।

(क) जलोढ़ मिट्टी : यह सबसे महत्त्वपूर्ण तथा बहुत बड़े क्षेत्र में पाई जाने वाली मिट्टी है। इसके अंतर्गत देश का 40 प्रतिशत भाग सम्मिलित है। वास्तव में संपूर्ण उत्तरी मैदान में यही मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी हिमालय से निकलने वाली तीन बड़ी नदियाँ — सतलुज, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र और उनकी सहायक नदियों द्वारा बहाकर लाई गई है और उत्तरी मैदान में जमा की गई है। राजस्थान में इसकी एक संकरी पट्टी है जो गुजरात के मैदान में जा मिलती है। जलोढ़ मिट्टी पूर्वी तटीय मैदानों, विशेष रूप से महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों के डेल्टा प्रदेश में भी सामान्य रूप से मिलती है।

नदियों ने हजारों वर्षों से सैंकड़ों किलोमीटर की दूरी तय करते हुए अपनी लंबी यात्राओं के दौरान अपने मैदानों में बहुत बारीक कणों को जमा किया है। मिट्टी के इन बारीक कणों को जलोढ़क कहते हैं। इस मिट्टी में विभिन्न मात्रा में रेत, गाद तथा मृत्तिका (चीका मिट्टी) मिली होती है। यह तटीय मैदानों तथा डेल्टा प्रदेशों में व्यापक रूप से फैली है। जैसे हम नदियों के ऊपरी भागों की ओर बढ़ते हैं तो इस मिट्टी के कण कुछ बड़े दिखाई पड़ते हैं। नदियों के ऊपरी भागों में अर्थात् इनके उद्गम स्थानों के निकट इस मिट्टी के कण और अधिक मोटे होते हैं। मिट्टी के कण बड़े-बड़े और असमान होते हैं। इस प्रकार की मिट्टी गिरिपाद मैदानों में सामान्य है। पर्वतों के आधार के पास वाले मैदानों को गिरिपाद कहते हैं।

कणों के आकार के अलावा इस मिट्टी का वर्णन इसकी आयु के आधार पर भी किया जाता है। ये दो प्रकार की होती हैं — प्राचीन जलोढ़क और नवीन जलोढ़क। यह ध्यान देने योग्य बात है कि नवीन कही जाने वाली जलोढ़क भी दस हजार वर्ष पुरानी हो सकती है। प्राचीन जलोढ़क का स्थानीय नाम "बांगर" है और नवीन जलोढ़क को "खादर" कहते हैं। प्राचीन जलोढ़क में प्रायः कंकड़ होते हैं तथा इसकी अवमृदा में कैल्सियम कार्बोनेट होता है। नवीन जलोढ़क प्राचीन जलोढ़क की अपेक्षा अधिक उपजाऊ होती है।

जलोढ़ मिट्टियाँ सामान्यतया सबसे अधिक उपजाऊ होती है। इनमें साधारणतया पोटाश, फास्फोरिक अम्ल तथा चूना पर्याप्त मात्रा में होता है। लेकिन इनमें नाइट्रोजन तथा जैविक पदार्थों की कमी होती है। शुष्क प्रदेशों में उनमें क्षारीय अंश अधिक होता है। भारत की लगभग आधी जनसंख्या का भरण-पोषण इन्हीं मिट्टियों के द्वारा होता है।

(ख) काली (रिगड़) मिट्टी : इस मिट्टी का रंग काला होता है, इसलिए इसे काली मिट्टी कहते हैं। यह मिट्टी कपास की फसल के लिए बहुत उपयुक्त है। अतः इसे कपास वाली मिट्टी भी कहा जाता है। इसका स्थानीय नाम रेगड़ है। यह मिट्टी दक्कन ट्रैप प्रदेश की प्रमुख मिट्टी है। इसका विस्तार दक्कन के पठार के उत्तर

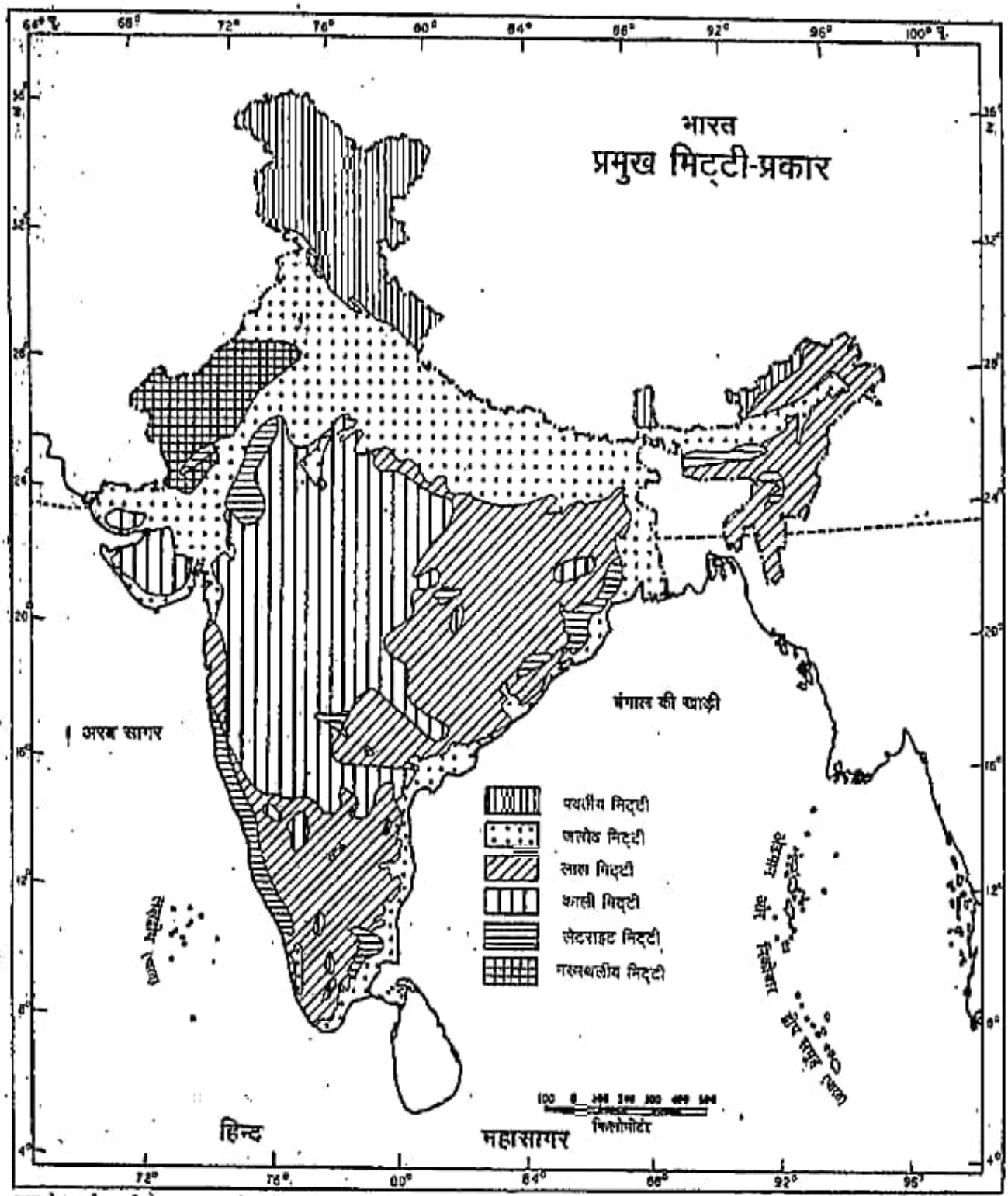

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अन्तर्विन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 3.3 भारत—प्रमुख मृदा-प्रकार

भारत की प्रमुख मृदा-पट्टियों को देखिए। क्या आपको मुख्य प्राकृतिक विभागों और विभिन्न मृदा पट्टियों के बीच कोई संबंध नज़र आता है ?

पश्चिमी भागों में हैं। इसका निर्माण लावा के प्रवाह से हुआ है। महाराष्ट्र, सौराष्ट्र, मालवा तथा दक्षिणी मध्य प्रदेश के पठारी भागों में यह मिट्टी पाई जाती है। इस मिट्टी का विस्तार दक्षिण में गोदावरी तथा कृष्णा नदियों की घाटियों में भी है। मूल शैल पदार्थों के साथ-साथ जलवायु की दशाएँ भी इस मिट्टी के निर्माण में महत्त्वपूर्ण रही हैं। इसलिए इनका विस्तार लावा के पठार के अलावा दूसरे क्षेत्रों में भी है।

काली मिट्टी का निर्माण बहुत ही महीन मृत्तिका (चीका) के पदार्थों से हुआ है। इसकी अधिक समय तक नमी धारण करने की क्षमता प्रसिद्ध है। इसमें मिट्टी के पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। कैल्सियम कार्बोनेट, मैगनीशियम कार्बोनेट, पोटाश और चूना इसके मुख्य पोषक तत्व हैं। इस मिट्टी में सामान्यतया फास्फोरिक तत्वों की कमी होती है। गर्म मौसम में इस मिट्टी के खेतों में गहरी दरारें पड़ जाती हैं। इन दरारों से इसके वायु मिश्रण में सहायता मिलती है। यह इसके स्वयं-जुताई का गुण है। पहली बौछार के तुरंत बाद इसमें जुताई करना आसान होता है, अन्यथा चिपचिपी हो जाने पर इसे जोतना कठिन हो जाता है।

(ग) लाल मिट्टी : मिट्टी का वितरण दिखाने वाले मानचित्र को देखिए। इसमें आप देखेंगे कि प्रायद्वीपीय भूखंड के उत्तर-पश्चिमी आधे भाग पर काली तथा पीले रंगों की अनेक आभाएँ दिखाई पड़ती हैं। इसका विकास सामान्य से लेकर भारी वर्षा वाली दशाओं में प्राचीन क्रिस्टलीय शैलों से हुआ है। लाल मिट्टी ने काली मिट्टी के क्षेत्र को लगभग चारों ओर से घेर रखा है। यह प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में, जिसमें छोटानागपुर का पठार, उड़ीसा, पूर्वी मध्य प्रदेश, तेलंगाना, नीलगिरि तथा तमिलनाडु का पठार सम्मिलित है, मिलती है। यह मिट्टी पश्चिम में उत्तर की ओर महाराष्ट्र के कोंकण तट पर भी पाई जाती है। गहरे निम्न भूभागों में यह दोमट है तथा उच्च भूमियों पर यह असंगठित कंकड़ों के समान है। लाल मिट्टी में फास्फोरिक अम्ल, जैविक पदार्थों तथा नाइट्रोजन पदार्थों की कमी होती है। सिंचाई और उर्वरकों के प्रयोग से यह मिट्टी उपजाऊ होती है।

(घ) लैटेराइट मिट्टी : उष्णकटिबंधीय भारी वर्षा के कारण होने वाली तीव्र निक्षालन क्रिया के परिणामस्वरूप इस मिट्टी का निर्माण हुआ है। यह मिट्टी चौरस उच्च भूमियों पर मिलती है। इसका विस्तार बहुत भारी वर्षा वाले पश्चिमी तटीय प्रदेश में भी है। यह पठार के पूर्वी किनारे पर भी छोटे-छोटे टुकड़ों में पाई जाती है। वहाँ इसका विस्तार तमिलनाडु और उड़ीसा के कुछ भागों तथा उत्तर में छोटानागपुर के थोड़े क्षेत्र में है। देश के उत्तर-पूर्व में मेघालय में भी लैटेराइट मिट्टी मिलती है। यह मिट्टी कम उपजाऊ है। यह सिर्फ चरागाहों और झाड़ियों वाले वन के लिए उपयुक्त है।

अन्य विविध प्रकार की मिट्टियों में दो वर्ग महत्त्वपूर्ण हैं, ये हैं — (i) पश्चिमी राजस्थान की मरुस्थलीय मिट्टी, तथा (ii) हिमालय पर्वतीय मिट्टी।

(i) मरुस्थलीय मिट्टी और पर्वतीय मिट्टी : शुष्क बलुई मिट्टी में पवन द्वारा उड़ाई गई लोएस भी सम्मिलित है। सिंचाई की सुविधा मिलने पर इन मिट्टियों में अच्छी फसल पैदा होती है। पर्वतीय मिट्टियों में पीट, भीड़ो, वन्य तथा पहाड़ी मिट्टियाँ शामिल हैं। वन्य मिट्टियाँ वास्तव में अभी निर्माण की प्रक्रिया में है।

विभिन्न प्रकार की उपजाऊ मिट्टियों के कारण भारत विविध फसलें पैदा कर सकता है। यह बहुत ही

महत्वपूर्ण बात है, क्योंकि इस क्षमता के कारण भारत कृषि से प्राप्त विभिन्न उत्पादों में न केवल आत्मनिर्भर हो सकता है; अपितु अनेक कृषि उत्पादों का अग्रणी निर्यातक भी बन सकता है। लेकिन यह सब कुछ तभी संभव है जब मिट्टी को वैज्ञानिक तरीके अपनाकर उसका उचित संरक्षण और अपरदन से बचाव किया जाए। साथ ही उसकी उर्वरता बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों पर पूरी तरह निर्भर न रहकर, जैविक खादों की सहायता ली जाए। यह बात तथ्य से स्वयं प्रमाणित हो जाती है कि लगभग 90 लाख हैक्टेयर जलोढ़ मिट्टी तथा 70 लाख हैक्टेयर काली मिट्टी, इस समय लवणता और क्षारीयता से ग्रस्त है। मिट्टी की लवणता और क्षारीयता को बढ़ाने में जलाक्रान्ति (जल का इकट्ठा होना) तथा सिंचाई की अधिकता प्रमुख रूप से दोषी हैं।

बहुमूल्य संसाधन के रूप में मिट्टी के महत्त्व को जानकर, प्रवाहित जल तथा पवनों के द्वारा होने वाले इसके अपरदन को रोकने के उपाय किए गए हैं। भूमि की उत्पादकता को निरंतर बनाए रखने के लिए मिट्टी का संरक्षण अनिवार्य है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए —
   (क) पारितंत्र किसे कहते हैं ?
   (ख) मनुष्य के जीवित रहने के लिए पारितंत्र का संरक्षण क्यों आवश्यक है ?
   (ग) भारत की वनस्पति में इतनी विविधता क्यों है ?
   (घ) भारत की वनस्पति के चार प्रदेशों के नाम बताइए ।
   (ङ) जीव आरक्षित क्षेत्र (बायोस्फीयर रिजर्व) किसे कहते हैं ? ऐसे दो क्षेत्रों के नाम बताइए।
2. अंतर स्पष्ट कीजिए —
   (क) वनस्पति तथा जीव-जन्तु
   (ख) रेगड़ मिट्टी तथा लैटेराइट मिट्टी
3. पर्वतीय प्रदेशों की ऊँचाई से संबंधित वनस्पति के कटिबंधों का वर्णन कीजिए।
4. भारत की वनस्पति के चार प्रमुख कटिबंध कौन से हैं ? भारत के मानसूनी वनों का विस्तृत विवरण दीजिए।
5. भारत में पाई जाने वाली मिट्टियों के प्रमुख प्रकारों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए —
   (क) वन्य जीवों का संरक्षण
   (ख) मिट्टी का संरक्षण

मानचित्र कार्य

7. भारत के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित दिखाइए :—
   (क) काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान
   (ख) फूलों की घाटी
   (ग) नीलगिरि का जीव आरक्षित क्षेत्र
   (घ) काली मिट्टी वाला क्षेत्र
   (ङ) ज्वारीय वन

अध्याय 4

भूमि उपयोग तथा जल संसाधन

हमारे देश का कुल क्षेत्रफल लगभग 32.8 करोड़ हैक्टेयर है। कुल क्षेत्रफल के 92.7 प्रतिशत भाग के भूमि उपयोग संबंधी आंकड़े उपलब्ध हैं। यह एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात है कि लगभग 8,000 साल पहले हमारे पूर्वजों ने प्राकृतिक पारितंत्र की लगभग 14 करोड़ हैक्टेयर भूमि को प्राकृतिक पारितंत्र से निकाल कर उस पर खेती शुरू कर दी थी। स्वतंत्रता के पश्चात् 2.2 करोड़ हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि को कृषि के योग्य बना

स्वयं करने के लिए

1. सारणी 4.1 का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए तथा उसके नीचे दिए गए अभ्यासों को पूरा कीजिए —

सारणी 4.1

देश	प्रतिवर्ग किलोमीटर औसत जन घनत्व	प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि (हैक्टेयर में)
कनाडा	3	1.70
चीन	1100	0.14
भारत	243	0.20
जापान	320	0.04
सं.रा. अमेरिका	26	0.73
पूर्व सोवियत संघ	12	0.81

(क) सारणी के देशों को निम्नलिखित क्रम में लिखिए।

(i) औसत जन घनत्व
(ii) प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि

(ख) अब औसत जन घनत्व तथा प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि की तुलना कीजिए। ज्ञात कीजिए कि इन दोनों में से कौन-सा अधिक सार्थक और महत्त्वपूर्ण है।

(ग) अपने निष्कर्ष निकालने के लिए भारत की तुलना, चीन, जापान तथा कनाडा से कीजिए।

2. सारणी 4.1 में दिए गए देशों के ही भूमि उपयोग का तुलनात्मक विवरण सारणी 4.2 में दिया गया है —
   (क) भारत की स्थिति की तुलना अन्य देशों के साथ निम्नलिखित के संदर्भ में कीजिए — (i) कृषि भूमि, (ii) चरागाह भूमि, (iii) वन-भूमि, और (iv) बस्ती वाले क्षेत्रों सहित बंजर भूमि।
3. भारत और चीन के औसत जन घनत्व तथा कृषि भूमि पर वास्तविक दबाव की तुलना कीजिए। चीन विशाल जनसंख्या के बावजूद खाद्यानों में आत्मनिर्भर है। आप के विचार से इसके क्या कारण हो सकते हैं?
4. जलवायु के अध्याय में दिए हुए जलवायु के आंकड़ों का सावधानीपूर्वक अध्ययन कीजिए —
   (क) महीनों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित करने के लिए उपयुक्त मापदण्ड चुनिए :
   (i) अधिक वर्षा वाले, (ii) शुष्क, और (iii) सामान्य वर्षा वाले।
   (ख) इस आधार पर प्रत्येक केन्द्र की वर्षा की प्रवृत्तियों का सामान्य विवरण लिखिए।
   (ग) सिंचाई की आवश्यकता के संबंध में अपने निष्कर्ष निकालिए।

सारणी 4.2

भूमि उपयोग प्रतिशत में

देश	कृषि क्षेत्र	चरागाह भूमि	वन-भूमि	बंजर भूमि	योग
कनाडा	5	2	33	60	100
चीन	11	30	14	45	100
भारत	51	4	21	24	100
जापान	13	2	68	17	100
सं.रा. अमेरिका	20	26	28	26	100
पूर्व सोवियत संघ	10	17	42	31	100

लिया गया है। परिणामस्वरूप आजकल 16.2 करोड़ हैक्टेयर शुद्ध बोया गया क्षेत्र है। इस प्रकार कुल क्षेत्रफल का लगभग 51 प्रतिशत भाग कृषि के अंतर्गत है। यह एक आश्चर्यजनक बात है। संसार का कोई भी दूसरा बड़ा देश इस मामले में हमारी तरह सौभाग्यशाली नहीं है।

भारत के भूमि-उपयोग का प्रारूप

नवीनतम आंकड़ों के अनुसार शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल मे थोड़ी-सी वृद्धि हुई है। पिछले कुछ दशकों में लगभग 2.8 करोड़ हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि शुद्ध बोऐ गए क्षेत्र में सम्मिलित हो गई है। 1.3 प्रतिशत क्षेत्र फलवाले वृक्षों के अंतर्गत है। लगभग 5 प्रतिशत क्षेत्र में परती भूमि है। परती भूमि में हर साल फसलें नहीं पैदा की जाती अपितु दो या तीन वर्ष में एक फसल ली जाती है। इस प्रकार कुल क्षेत्रफल के औसतन 51 प्रतिशत भाग में खेती की जाती है। परती भूमि सीमान्त भूमि है, जिसे उर्वरता बढ़ाने के लिए खाली छोड़ दिया जाता है। इसका उपयोग अच्छी तथा समय पर वर्षा होने पर भी निर्भर करता है। इस संदर्भ में यह बात उल्लेखनीय है कि परती भूमि का प्रतिशत 7 से घट कर 5 रह गया है। इससे शायद इस बात का पता चलता है कि ऐसी भूमि में अधिक मात्रा में खाद और उर्वरकों का उपयोग किया जा रहा है तथा नमी के संरक्षण के लिए नए तरीकों का प्रयोग हो रहा है।

पिछले कई दशकों से खेती के योग्य बंजर भूमि का क्षेत्रफल 6.4 प्रतिशत ही चला आ रहा है। चरागाहों के अंतर्गत भूमि का क्षेत्रफल बहुत ही कम है। यह इस बात का सूचक है कि हमारी भूमि पर जनसंख्या का दबाव बहुत अधिक है। इस बात का श्रेय भी हमारे किसानों को ही मिलना चाहिए कि चरागाहों की इतनी कमी के बावजूद उनके पास पशुओं की संख्या संसार में सबसे अधिक है। उन्हें पुआल, भूसा तथा कुछ चारे की फसलों के आधार पर पाला जाता है। भारवाहक तथा दुधारू पशुओं के पालने का वास्तव में यह तरीका सबसे किफायती है। कुछ क्षेत्र जिन्हें वनों के अंतर्गत रखा गया है, पशुओं को चराने के काम आते हैं।

हमारे देश में वन-क्षेत्र वैज्ञानिक आदर्श से बहुत कम है। आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था तथा उचित परिस्थितिक संतुलन के लिए देश के कम से कम एक तिहाई क्षेत्र में वनों और प्राकृतिक वनस्पति का होना अनिवार्य है। भारत में केवल 19.27 प्रतिशत भूमि में वन हैं, जो बहुत कम हैं। उपग्रहों के द्वारा लिए गए छाया चित्रों के प्रमाण के आधार पर वास्तविक वन-क्षेत्र केवल 4.6 करोड़ हैक्टेयर है। यह भूमि उपयोग के आंकड़ों से मेल नहीं खाता क्योंकि उनके अनुसार 6.3 करोड़ हैक्टेयर भूमि पर वन हैं। इन आंकड़ों से यह पता चलता है कि वन-क्षेत्र 4 करोड़ हैक्टेयर से बढ़कर 4.6 करोड़ हैक्टेयर हो गया है।

हमें अपने वन-क्षेत्र को बढ़ाना है। परिस्थितिक संतुलन बनाए रखने तथा कार्बन डॉईऑक्साइड के अवशोषण के लिए बड़ा वन क्षेत्र अनिवार्य है। वायुमंडल में कार्बन डॉईऑक्साइड की अधिकता ग्रीन हाउस प्रभाव को बढ़ा देती है। इससे सारे संसार में वायुमंडलीय तापमान बढ़ जाएगा। तापमान में वृद्धि, हिम-चादर (बर्फ की चादर) पिघला सकती है, जिससे समुद्र का जल स्तर बढ़ जाएगा। सारे संसार का जल स्तर बढ़ जाएगा। परिणामस्वरूप सारे संसार में समुद्र तट के निकटवर्ती घने बसे हुए निम्न क्षेत्र पानी में डूब जाएंगे। वन, वन्यजीवों के घर हैं। वे उन्हें संरक्षण देते हैं। वनों से वर्षण की मात्रा में वृद्धि होती है तथा सूखा बार-बार नहीं पड़ता। वन, वर्षा के जल को अवमृदा के अंदर रिसने में सहायता करते हैं और नदियों के जल-प्रवाह को शुष्क एवं वर्षा दोनों ही ऋतुओं में नियंत्रित करते हैं।

वनों से केवल जल का ही संरक्षण नहीं होता अपितु वे मृदा का संरक्षण भी करते हैं। इस प्रकार वे बाढ़ के पानी की मात्रा एवं उनसे होने वाले विनाश को कम करने में मदद करते हैं।

भूमि का वह भाग जो इस समय किसी उपयोग के योग्य नहीं, बंजर भूमि कहलाती है। इसमें शुष्क चट्टानी तथा रेतीले मरुस्थल सम्मिलित हैं। ऊँचे पर्वत तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि भी इसी के अंतर्गत हैं। कभी-कभी वनों के विनाश तथा अति चराई के द्वारा मनुष्य भी बंजर भूमि का क्षेत्र बढ़ाने में सहायता करते हैं।

बढ़ती हुई जनसंख्या तथा उच्च जीवन स्तर के कारण शहरों और गांवों में मकान बनाने के लिए भूमि की माँग निरंतर बढ़ती जा रही है। नगरों और कस्बों में मकानों के लिए भूमि नहीं मिल पा रही है। अतः क्षैतिज विस्तार इमारतों की जगह की ऊँचाई बढ़ रही है। लेकिन फिर भी उद्योगों, व्यापार, परिवहन, तथा मनोरंजन की सुविधाओं के विस्तार के लिए भूमि की बहुत आवश्यकता है। इस माँग को ठुकराना कठिन हो रहा है।

यह स्मरणीय है कि देश में भूमि की कुल प्राप्यता एक निश्चित संपत्ति है जो न घट सकती है और न बढ़ सकती है। विभिन्न उद्देश्यों के लिए भूमि पर बढ़ते हुए दबाव को देखते हुए सभी उपलब्ध भूमि के उचित उपयोग की योजना बनाना आवश्यक है। मृदा अपरदन, मरुस्थलीकरण आदि को रोकने के उपयुक्त उपायों के अपनाने से यह कार्य संभव है। ऐसे उपाय न करने से कृषि योग्य भूमि, बंजर भूमि में बदल जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ बंजर भूमि को दूसरे कामों में लाया जा सकता है। इसी प्रकार खेती के आधुनिक तथा वैज्ञानिक तरीकों से भूमि की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। भूमि के विभिन्न उपयोगों में संतुलन बनाए रखने के लिए सभी प्रयत्न करने चाहिए।

जल संसाधन

भूमि की ही भाँति जल भी एक महत्त्वपूर्ण संसाधन है। हमारे देश में जल का एक प्रमुख उपयोग सिंचाई में है। सिंचाई के द्वारा हमने न केवल कृषि के क्षेत्र में वृद्धी की है, अपितु इसकी उत्पादकता भी बढ़ाई है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक तथा घरेलू उपभोग के लिए विशाल मात्रा में जल की आवश्यकता होती है।

भूमि के विपरीत, जल की प्राप्ति में स्थान और समय के अनुसार अंतर आ जाता है। मानसूनी प्रदेश होने के कारण वर्षा का अधिकांश भाग तीन से चार महीनों की छोटी-सी अवधि में ही सीमित है। इस प्रकार वर्ष के अधिकांश भाग में देश के बहुत बड़े क्षेत्र में धरातलीय जल की कमी रहती है। भारी वर्षा वाले स्थानों जैसे मेघालय और कोंकण में भी शुष्क महीनों में पानी की कमी हो जाती है। वर्षा के असमान वितरण के कारण प्रति वर्ष देश के किसी न किसी भाग में बाढ़ आती है या सूखा पड़ता है।

सिर्फ उत्तरी तथा तटीय मैदानों में ही भूमिगत जल के विपुल भंडार पाए जाते हैं। देश के दूसरे भागों में इसकी आपूर्ति अपर्याप्त है। वास्तव में कुछ स्थानों में भूमिगत जल को 15 मीटर से अधिक गहराई से निकालना पड़ता है। अभी तक हमारे देश के प्रत्येक गाँव में सुरक्षित पेय जल की व्यवस्था नहीं हो पाई है। देश के अनेक भागों में पानी लाने के लिए लोगों को एक किलोमीटर से भी अधिक चलना पड़ता है। इस प्रकार देश के अधिकतर भागों में कृषि तथा अन्य कार्यों के लिए जल की प्राप्ति या उपलब्धता अनियमित तथा अपर्याप्त है। अतः उपलब्ध जल के उपयोग की योजना बनाना आवश्यक है। आइए, अपने राष्ट्रीय जल के बजट पर एक दृष्टि डालें।

हमारे जल का बजट

मान लीजिए एक हैक्टेयर अर्थात् 10,000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल की समतल भूमि का एक टुकड़ा है। भूमि के इस टुकड़े पर एक मीटर की ऊँचाई तक जल है, तो जल की इस मात्रा को 10,000 घन मीटर या एक हैक्टेयर मीटर कहेंगे।

संपूर्ण देश की औसत वार्षिक वर्षा को 50 सें.मी. मानते हुए इसके कुल क्षेत्रफल को ध्यान में रखकर यह अनुमान लगाया गया है कि यहाँ कुल जल संसाधन 16.7 करोड़ हैक्टेयर मीटर है। इसमें से केवल 6.6 करोड़ हैक्टेयर मीटर पानी को ही सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सकता है। अपने आर्थिक तथा प्रौद्योगिक संसाधनों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए हमने अपने पानी को सन् 2010 तक क्रमबद्ध तरीके से पूरी तरह उपयोग करने की योजना बनाई है।

योजना युग आरंभ होने से पूर्व अर्थात् 1951 में देश में केवल 97 लाख हैक्टेयर मीटर जल का उपयोग सिंचाई के लिए होता था। लेकिन सन् 1973 तक 1.84 करोड़ हैक्टेयर मीटर पानी का उपयोग सिंचाई के लिए होने लगा था।

यदि हम भूमि के क्षेत्रफल को एक इकाई मान लें तो स्थिति कुछ भिन्न होगी। सन् 1951 में 2.26 करोड़ हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती थी। 1984-85 तक सिंचित भूमि का क्षेत्रफल लगभग तीन-गुना बढ़कर 6.75 करोड़ हैक्टेयर हो गया। 1990 तक 1.3 करोड़ हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि की सिंचाई करने का लक्ष्य था। इस प्रकार कुल 8.1 करोड़ हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जानी थी। इस स्थिति पर इस दृष्टि से विचार करना चाहिए कि सन् 2010 तक 11.3 करोड़ हैक्टेयर भूमि को सिंचित करने का लक्ष्य है तथा जल संसाधनों की इतनी ही संभावित क्षमता है। सिंचित भूमि का यह क्षेत्रफल कुल बोए हुए क्षेत्र का है, शुष्क बोए हुए क्षेत्र का नहीं, क्योंकि पहला निश्चय ही दूसरे से अधिक होगा। अभी शुद्ध बोए हुए क्षेत्र का 28 प्रतिशत भाग यानि 4.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र सिंचित है, जबकि कुल सिंचित क्षेत्र 8 करोड़ हैक्टेयर है। अंततः शुद्ध बोए गए क्षेत्र का 50 प्रतिशत से अधिक भाग सिंचित नहीं हो पाएगा। जल संसाधनों की इस अनुमानित क्षमता में भूमिगत जल संसाधन भी सम्मिलित हैं, जिनका पुनर्भरण सामान्य वर्षा के द्वारा प्रति वर्ष होता रहता है। उपयोग में लाए जा सकने वाले भूमिगत जल संसाधन की अनुमानित मात्रा 4 करोड़ हैक्टेयर मीटर है। इसमें से अभी केवल एक-चौथाई अर्थात् एक करोड़ हैक्टेयर मीटर भूमिगत जल का उपयोग होना अभी शेष है। यह हमारे संभाव्य तथा विकसित जल संसाधनों का सामान्य सर्वेक्षण है।

बहु-उद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ

स्वाधीनता के बाद से ही हमारा देश आत्मनिर्भर बनने तथा अपने लोगों का जीवन स्तर सुधारने के लिए योजनाबद्ध आर्थिक गतिविधियों में लगा हुआ है। इस उद्देश्य को पाने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। जल संसाधनों का प्रबंध उनमें से एक उपाय है। बाढ़ और अकाल की जुड़वाँ समस्याएँ वास्तव में एक ही समस्या के दो पहलू हैं। इसीलिए इन समस्याओं के समाधान के लिए समन्वित उपाय किए जा रहे हैं। धरातलीय तथा भूमिगत जल संसाधन एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का मूलस्रोत भी एक है तथा वे एक ही उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। व्यावहारिक चिंतन तथा लंबे अनुभव के आधार पर एक संयुक्त नीति और प्रौद्योगिकी का विकास किया गया है। सारे संसार में, विशेषरूप से पानी की कमी वाले क्षेत्र में, इसी नीति का पालन किया जा रहा है। इसे

बहु-उद्देशीय नदी घाटी परियोजना का नाम दिया गया है। दामोदर नदी घाटी परियोजना स्वाधीन भारत में इस प्रकार की प्रथम परियोजना है।

बहु-उद्देशीय परियोजना के अंतर्गत कई उद्देश्यों की पूर्ति एक साथ हो जाती है। किसी मुख्य नदी और उसकी सहायक नदियों पर छोटे-छोटे बांधों की एक शृंखला बनाई जाती है। इन विशाल बांधों के पीछे बनी झीलों में भारी मात्रा में वर्षा का पानी एकत्र हो जाता है। इससे बाढ़ों के नियंत्रण और मृदा के संरक्षण में सहायता मिलती है। शुष्क-ऋतु में जब पानी की बहुत आवश्यकता होती है, तब इन झीलों के पानी से खेतों की सिंचाई की जाती है।

इन बांधों के जल-ग्रहण-क्षेत्र में योजनाबद्ध तरीकों से वृक्षारोपण किया जाता है। इससे वन्य-भूमि तथा प्राकृतिक पारितंत्र के संरक्षण में सहायता मिलती है। अपनी जीवनदायिनी नदियों के पर्वतीय जल-ग्रहण-क्षेत्र में पारिस्थितिक संतुलन की पुनः स्थापना का यही उचित अवसर है। वृक्षारोपण के द्वारा बांधों, झीलों, नदी की धाराओं तथा सिंचाई की नहरों में गाद और मिट्टी भरने को रोका जा सकता है। यह बांधों के जीवन काल को लंबा करके उन्हें आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद बनाता है।

इस प्रकार सोद्देश्य विकसित वन्य भूमि में वन्य जीवों को निरापद आश्रय मिलता है। यह वन्य जीवन मानव जाति की अनमोल धरोहर है। इनका संरक्षण करना तथा इस धरोहर को ज्यों-का-त्यों भावी पीढ़ियों को सौंपना हमारा परम कर्त्तव्य है। वास्तव में भावी पीढ़ियाँ ही इसकी सच्ची उत्तराधिकारी हैं। हम तो इस धरोहर के मात्र रखवाले हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में बांधों के पीछे की झीलें ऊँचाई पर होती हैं। इन झीलों में जमा किए गए पानी को ऊँचाई से गिराकर बिजली बनाई जाती है। यह शुष्क ऋतु में भी संभव है। प्रवाहित जल या ऊँचाई से गिरते हुए जल की सहायता से बनी विद्युत, जल विद्युत, या जल शक्ति कहलाती है। यह ऊर्जा का एक स्वच्छ, साफ-सुथरा और प्रदूषण मुक्त रूप है। यह और भी महत्त्वपूर्ण बात है कि जल विद्युत जल से बनाई जाती है, जो एक नवीकरण योग्य संसाधन है। इस प्रकार सभी दृष्टियों से यह जीवाश्म ईंधनों से उत्तम है। जीवाश्म ईंधन एक तो अनापूर्ति संसाधन है दूसरे वे प्रदूषण फैलाते हैं।

बहु-उद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएँ बहुधा मुख्य नदियों और नहरों के द्वारा अंतःस्थलीय नौपरिवहन की सुविधाएँ भी देती हैं। भारी सामान के परिवहन के लिए यह सबसे सस्ता साधन है। इन परियोजनाओं से दूसरा आर्थिक लाभ मछली उत्पादन के रूप में मिलता है। बांधों के पीछे बने जलाशयों में मछलियों के "बीज" तैयार किए जाते हैं तथा चुनी हुई प्रजातियों की मछलियाँ ही पाली जाती हैं। जब मछलियाँ पूरी तरह बढ़ जाती हैं, उन्हें पकड़ कर बाजारों में भेजा जाता है। मछलियों के पकड़ने पर नियंत्रण रखा जाता है, ताकि छोटी मछलियाँ न पकड़ी जाएँ। इन सुविकसित मछली-पालन केंद्रों से हमें अपने देश के लोगों के लिए, जिनको भोजन में बहुधा प्रोटीन की कमी होती है, मछलियों के रूप में सस्ती प्रोटीन मिल सकती है। वैज्ञानिक रीति से विकसित तथा सुव्यवस्थित नदी घाटी परियोजनाएँ पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र बन जाती हैं। इन्हीं कारणों से बहु-उद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं को आधुनिक भारत के मंदिर कहा जाता है।

स्वाधीनता से पूर्व जल प्रबंध का अर्थ केवल सिंचाई ही था। लेकिन अब इसमें शक्ति का उत्पादन, मत्स्य पालन आदि भी सम्मिलित हैं। दक्षिण भारत में,

विशेष रूप से कावेरी नदी के डेल्टा में, नहरों द्वारा सिंचाई की बहुत ही प्राचीन परंपरा है। वहाँ तालाबों से सिंचाई लगभग प्रत्येक गांव में की जाती थी। इसी प्रकार पूरे भारत में कुओं से सिंचाई करना सामान्य बात थी। कुओं से पानी खींचने के लिए पशुओं की सहायता ली जाती थी। मध्य काल में उत्तर भारत के अनेक राजाओं ने नहरों द्वारा सिंचाई को बड़ा प्रोत्साहन दिया था। ब्रिटिश शासन-काल में उत्तर-पश्चिमी भारत के विशाल शुष्क क्षेत्र, विशेष रूप से सिंधु नदी की द्रोणी में नहरें बनाई गई। इन क्षेत्रों में अवकाश प्राप्त सैनिकों को बसाया गया। इन क्षेत्रों में भूमि बहुत समतल तथा उपजाऊ थी। सिन्धु और उसकी सहायक नदियों में इन क्षेत्रों की सिंचाई के लिए प्रचुर मात्रा में जल उपलब्ध था। इन सिंचित क्षेत्रों में कपास सर्वप्रमुख नगदी फसल थी। कुछ ही समय में यहाँ संसार की सर्वश्रेष्ठ नहरों का जाल बिछ गया था। इस क्षेत्र का एक बड़ा भाग अब पाकिस्तान में है।

दामोदर नदी घाटी परियोजना वैज्ञानिक रीति से जल संसाधनों के प्रबंध का एक उदाहरण है। दामोदर, वैसे तो एक छोटी सी नदी है लेकिन विनाशकारी बाढ़ों के कारण इसे "शोक नदी" कहा जाता था। यह नदी दक्षिण बिहार से छोटानागपुर के पठार से निकल कर पश्चिम बंगाल में बहती है जहाँ यह हुगली से मिलती है। इस घाटी में "काले सोने" के नाम से विख्यात कोयले के सबसे बड़े भंडार हैं। इसके निकट ही लौह अयस्क के भंडार भी मिलते हैं। इस परियोजना में दामोदर की सहायक नदियों पर छोटे-छोटे बांधों की शृंखला बनाई गई है। इस पर कुछ जल विद्युत केंद्र भी बनाए गए हैं। एक नाव्य नहर का भी विकास किया गया है। इस परियोजना में उत्पादित जल विद्युत को एक संयुक्त ग्रिड में भेज दिया जाता है। इस संयुक्त ग्रिड में अधिकतर बिजली बड़े-बड़े ताप बिजलीघरों से आती है। दक्षिण-पूर्वी बिहार तथा पश्चिम बंगाल के निकटवर्ती क्षेत्रों में बढ़ते औद्योगिक सकलों को इसी ग्रिड से बिजली दी जाती है। पश्चिम बंगाल तथा दक्षिण-पूर्वी बिहार की 5 लाख भूमि की सिंचाई इस परियोजना द्वारा होती है।

भाखड़ा नांगल परियोजना : यह वैज्ञानिक तरीकों से बहुत बड़े पैमाने पर जल प्रबंध का एक अच्छा उदाहरण है। भाखड़ा बांध सतलुज नदी पर ऐसे अनुकूल स्थान पर बनाया गया है, जहाँ नदी की धारा के दोनों ओर दो पहाड़ियाँ एक दूसरे के काफी निकट आ गई हैं। यह संसार का सबसे ऊँचा गुरुत्वीय बांध है। नदी तल से इसकी ऊँचाई 226 मीटर है। यह बांध भूकम्पीय क्षेत्र में स्थित है। इसके पीछे की पहाड़ियाँ, जलाशय में संग्रहित 7,80,000 हैक्टेयर मीटर पानी के लिए प्राकृतिक दीवारों का काम करती हैं, लेकिन इन पहाड़ियों का निर्माण ठोस पदार्थों से नहीं हुआ है। अतः इन्हें सीमेंट और कंक्रीट के द्वारा मजबूत किया गया है। इस मानव-निर्मित झील का नाम सिक्खों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह के नाम पर गोविन्द सागर रखा गया है। यह झील हिमाचल प्रदेश में है। इस बांध से 1,100 किलोमीटर लंबी नहरें निकाली गई हैं। इन नहरों की 3,400 किलोमीटर लंबी जल वितरिकाएँ हैं। इनके द्वारा 14 लाख हैक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है। नांगल नाम के स्थान पर जलविद्युत केंद्र बनाया गया

है। इसमें 1,204 मेगावाट बिजली का उत्पादन प्रतिवर्ष होता है। इस परियोजना का लाभ हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली को मिलता है।

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना : राजस्थान की यह एक बहुत ही महत्त्वाकांक्षी परियोजना है। इसका प्रमुख उद्देश्य नए क्षेत्रों को सिंचित करके कृषि योग्य बनाना है। इस परियोजना के लिए रावी और व्यास नदियों का जल सतलुज नदी में लाया गया है। व्यास नदी पर पौंग नामक बांध बनाया गया है। इसके पीछे 6,90,000 हैक्टेयर मीटर पानी इकट्ठा होता है। इससे व्यास नदी के जल को नियमित करके सतलुज नदी में लाने में मदद मिलती है। इंदिरा गांधी नहर या राजस्थान नहर संसार की सबसे लंबी नहर है। इससे उत्तर-पश्चिमी राजस्थान के गंगानगर, बीकानेर तथा जैसलमेर जिलों की सिंचाई की जा सकती है। मुख्य नहर 468 किलोमीटर लंबी है। भारत अब सतलुज, व्यास तथा रावी के जल का लगभग पूरी तरह से उपयोग करने लगा है। इनके जल से देश के उत्तर-पश्चिमी भागों की प्यासी धरती की सिंचाई की जा रही है।

कोसी परियोजना : यह बिहार राज्य में नेपाल के सहयोग से पूरी की गई है। इसका मुख्य उद्देश्य कोसी नदी में आने वाली बाढ़ों की रोकथाम है। विनाशकारी बाढ़ों के कारण कोसी को उत्तरी बिहार की "शोक नदी" कहा जाता है। इस परियोजना में बिहार की 8,73,000 हैक्टेयर भूमि की सिंचाई करने की क्षमता है। मुख्य नहर कोसी पर बने हनुमान नगर बैराज से निकाली गई है। गंडक परियोजना भारत और नेपाल के सहयोग का दूसरा उदाहरण है।

हीराकुंड बांध : यह उड़ीसा में है। यह संसार का सबसे लंबा बांध है। 4.8 किलोमीटर लंबे बांध के पीछे सिंचाई के लिए 810 करोड़ घन मीटर पानी इकट्ठा होता है। इससे महानदी के डेल्टा प्रदेश की बाढ़ों पर नियंत्रण हो सका है। इससे 7.5 लाख हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है। इस बांध की बिजली उत्पादन की संस्थापित क्षमता 270 मेगावाट है।

तुंगभद्रा परियोजना : यह कर्नाटक और आंध्र प्रदेश को लाभ पहुँचा रही है। नदी के आस-पास ईंट और पत्थरों की चिनाई करके 2.5 किलोमीटर लंबा तथा 50 मीटर ऊँचा बांध बनाया गया है। इससे इन दो राज्यों की 4 लाख हैक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है।

नागार्जुन सागर परियोजना : यह आंध्र प्रदेश में कृष्णा नदी पर बनाई गई है। इससे 8,67,000 हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है। बौद्ध विद्वान नागार्जुन के नाम पर इसका नाम नागार्जुन सागर रखा गया है। इस बाँध के पीछे, आज जहाँ झील है पहले वहाँ अत्यन्त सुन्दर वास्तुकला के प्राचीन मंदिर थे। यदि इन्हें वहाँ से न हटाया गया होता तो ये झील के पानी में डूब जाते। अतः इन मंदिरों के एक-एक पत्थर को हटाकर नए स्थानों पर ले जाया गया फिर वहाँ इन्हीं पत्थरों से बिलकुल पहले जैसे ही मंदिरों का निर्माण किया गया। यह परियोजना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि हम आधुनिक प्रौद्योगिकी को अपनाकर भी अपनी सांस्कृतिक धरोहर को किस प्रकार सुरक्षित रख सकते हैं।

चंबल परियोजना : इससे मध्य प्रदेश तथा राजस्थान के कुछ क्षेत्रों की सिंचाई होती है। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य चंबल नदी की द्रोणी में भूदा का संरक्षण करना

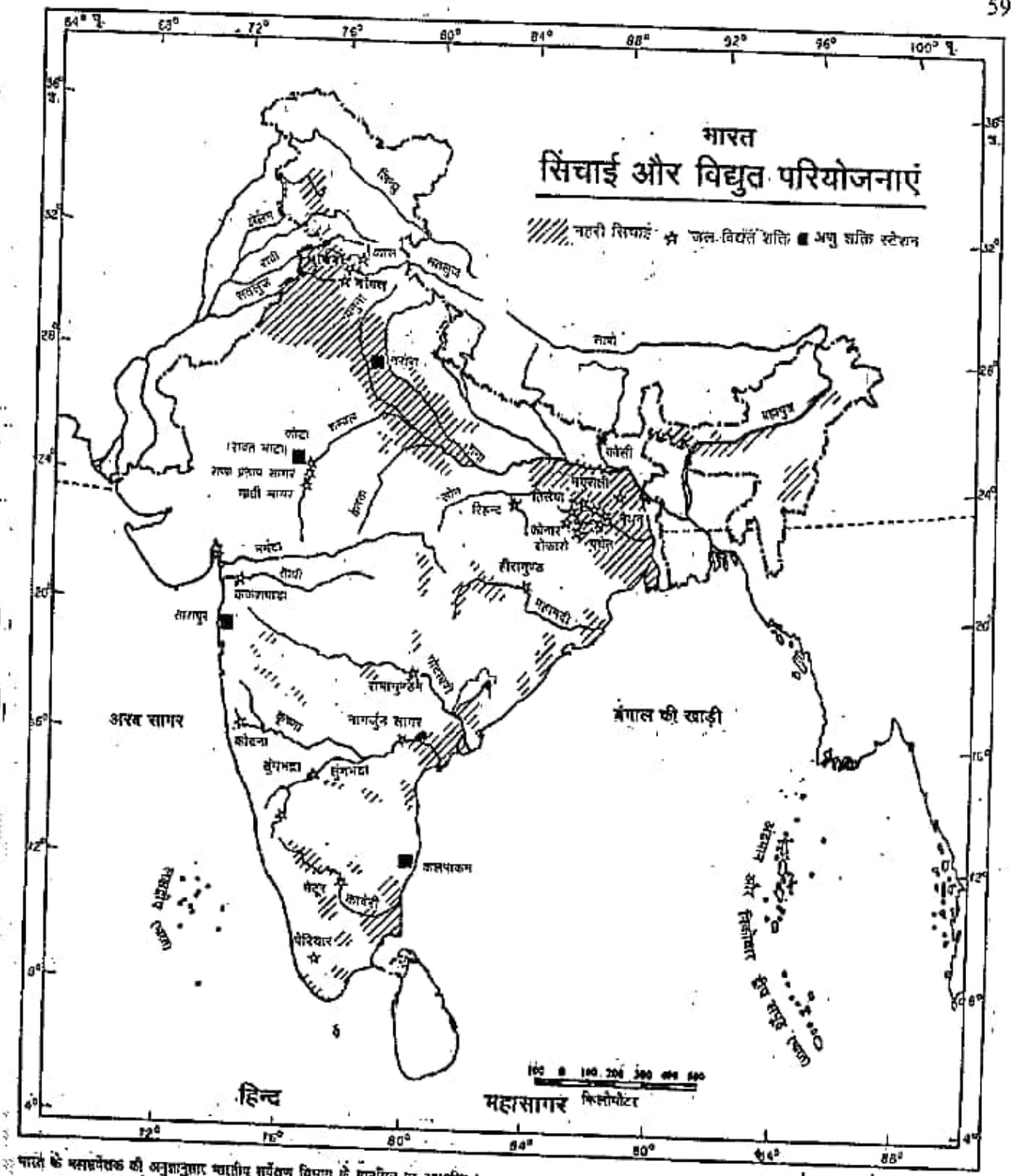

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षांशियाँ विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 4.1 भारत—सिंचाई और जल विद्युत परियोजनाएँ

भारत में प्रमुख सिंचाई और जल विद्युत परियोजनाओं को देखिए। उन राज्यों के नाम बताइए जहाँ नहरों द्वारा सिंचाई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। भारत के किन भागों में जल विद्युत परियोजनाएँ नहीं है ?

है। इस परियोजना के अंतर्गत मध्य प्रदेश में गांधी सागर बांध तथा राजस्थान में कोटा बैराज और जवाहर सागर बांध बनाए गए है। इस परियोजना की सिंचाई की क्षमता 5 लाख हैक्टेयर है।

देश की विभिन्न नदियों पर अन्य अनेक परियोजनाएँ हैं। पता कीजिए कि आप के राज्य में कौन-सी प्रमुख परियोजना है तथा यह सिंचाई तथा बिजली के उत्पादन में कितनी उपयोगी है।

संसार में जल शक्ति के संभावित संसाधनों में कांगो, रूस, कनाडा तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद भारत का पाँचवाँ स्थान है। ऐसा अनुमान है कि हमारे जल शक्ति के संसाधनों की कुल संभावित क्षमता 4 करोड़ किलोवाट है। उत्तर-पूर्वी भारत में जिसका अधिकतर भाग ब्रह्मपुत्र नदी की द्रोणी में है, भारत के कुल जल शक्ति संसाधनों का 30 प्रतिशत भाग केंद्रित है। इस संदर्भ में अरुणाचल प्रदेश तथा मणिपुर विशेष रूप से संपन्न हैं। अन्य 30 प्रतिशत भाग भारतीय क्षेत्र में फैले हिमालय में बिखरा है। इसका आधा भाग सिंधु और उसकी सहायक नदियों में है। शेष भाग गंगा और उसकी हिमालय से निकलने वाली सहायक नदियों तथा तिस्ता और मानस नदियों में है। भारत की संभावित जल शक्ति का 40 प्रतिशत भाग प्रायद्वीपीय भारत की नदियों में है। इसका आधा भाग पश्चिमी घाट से निकल कर पूर्व की ओर बहने वाली नदियों में है। चौथाई भाग उन नदियों में है, जो पश्चिमी घाट से निकल कर अरब सागर में गिरती हैं। शेष चौथाई भाग मध्य भारत की नदियों में है। जल विद्युत के लाभ के संबंध में कोई विवाद नहीं है। यह एक नवीकरण योग्य और प्रदूषण से मुक्त संसाधन है। इसके ऊपर देख-भाल का खर्च नहीं के बराबर है। सिर्फ एक ही बात इसके प्रतिकूल है। इसके ऊपर प्रारंभिक लागत बहुत अधिक है और इसके चालू करने में समय कुछ अधिक लगता है। 1950-51 में जल-शक्ति की संस्थापित क्षमता कुल 600 मेगावाट थी। 1997-98 में यह 22,000 मेगावाट हो गई। कुल विद्युत उत्पादन की संस्थापित क्षमता का यह लगभग एक-चौथाई है।

प्रमुख जल विद्युत परियोजनाएँ

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हमारे देश में जल-शक्ति के विकास का नया युग प्रारंभ हुआ। भारत का प्रथम जल विद्युत केंद्र कर्नाटक राज्य में कावेरी नदी पर शिवसमुद्रम में सन् 1902 में स्थापित किया गया था। इसके बाद महाराष्ट्र के पश्चिमी घाट में टाटा जल विद्युत योजना प्रारंभ हुई। इसका उद्देश्य मुंबई नगर को बिजली की आपूर्ति करना था। तमिलनाडु में पाइकारा पहला जल विद्युत केंद्र था। इसी प्रकार मंडी जल विद्युत केंद्र हिमालय क्षेत्र की प्रथम जल विद्युत योजना थी। इसके पश्चात् ऊपरी गंगा नहर की जल विद्युत ग्रिड प्रणाली स्थापित की गई।

स्वाधीनता के बाद देश के विभिन्न भागों में जल विद्युत का विकास बड़ी तीव्र गति से हुआ। बहु-उद्देशीय नदी घाटी परियोजना के अंतर्गत हम भाखड़ा-नांगल, दामोदर घाटी, हीराकुंड, चंबल आदि अनेक जल विद्युत परियोजनाओं का वर्णन कर चुके हैं। इनके अतिरिक्त कुछ परियोजनाएँ केवल जल विद्युत के उत्पादन के लिए ही बनाई गई हैं।

रिहन्द परियोजना में भारत की सबसे बड़ी मानव-निर्मित झील है। यह मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की सीमा पर स्थित है। इसकी वार्षिक उत्पादन क्षमता 300 मेगावाट है।

कोयना परियोजना महाराष्ट्र में कृष्णा नदी की पूर्व दिशा में बहने वाली सहायक नदी पर है। कोयना नदी पर बांध बना कर एक सुरंग के द्वारा इसके जल को पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर ले जाया गया है। इसकी क्षमता 880 मेगावाट है। मुंबई-पुणे औद्योगिक क्षेत्र को यहाँ से बिजली भेजी जाती है।

शरावती परियोजना कर्नाटक में भारत के सबसे ऊँचे जोग जल-प्रपात पर स्थित है। इसकी कुल क्षमता 891 मेगावाट है। यहाँ से बंगलौर के औद्योगिक क्षेत्र तथा गोआ और तमिलनाडु राज्यों को भी बिजली भेजी जाती है। कर्नाटक में कालिन्दी नदी परियोजना की क्षमता 270 मेगावाट है।

तमिलनाडु की कुंडा परियोजना की प्रारंभिक क्षमता 425 मेगावाट थी, जिसे बाद में बढ़ाकर 535 मेगावाट कर दिया गया है।

केरल में सबरिगिरि परियोजना की संस्थापित क्षमता 300 मेगावाट है। केरल राज्य की अदुक्की परियोजना की क्षमता 390 मेगावाट है।

उड़ीसा में बालिमेला परियोजना की संस्थापित क्षमता 360 मेगावाट है तथा गुजरात राज्य की उकई परियोजना की क्षमता 300 मेगावाट है।

जम्मू और कश्मीर राज्य में सलाल जल विद्युत परियोजना पूरी हो चुकी है। यहाँ नई परियोजनाएँ शुरू की गई हैं। ये सब मिलकर 1,000 मेगावाट बिजली का उत्पादन करेंगी।

जलशक्ति की इन परियोजनाओं के अतिरिक्त भारत ने भूटान के "चुक्खा" नामक स्थान पर बहुत बड़ी जल विद्युत परियोजना को पूरा किया है। इसके लिए आर्थिक-साधन भी भारत ने ही जुटाए हैं। इस परियोजना के अंतर्गत भूटान के उपयोग से बची हुई बिजली को हमारा देश खरीद लेता है। इसकी बिजली देश के उत्तर-पूर्वी भागों तथा पश्चिम बंगाल में भेजी जाती है।

राष्ट्रीय जल विद्युत शक्ति कारपोरेशन लिमिटेड (एन.एच.पी.सी.) की स्थापना 1975 में की गई थी। उस समय से इसने 2,133 मेगावाट जल विद्युत का उत्पादन और जोड़ा है। इसमें निम्नलिखित जल विद्युत केंद्रों का योगदान है — चमेरा स्टेज (म.प्र.), उरी (जम्मू और कश्मीर), सलाल स्टेज-1 (जम्मू और कश्मीर), बैरो-सिंडल (हिमाचल प्रदेश), लोकटक (मणिपुर), तथा टनकपुर (उत्तर प्रदेश)।

टेहरी जल शक्ति परियोजना

यह कई सालों से सुर्खियों में है। यह भारत सरकार और उत्तर प्रदेश की संयुक्त परियोजना है, जिसके कार्यान्वयन के लिए 1988 में टेहरी जल-विकास कारपोरेशन की स्थापना की गई थी। इसका उद्देश्य 2,400 मेगावाट विद्युत का वार्षिक उत्पादन करना और 27,000 हैक्टेयर भूमि को सिंचाई उपलब्ध कराना था। यह परियोजना अभी तक विवाद के घेरे से नहीं निकल पाई है क्योंकि सरकार और पर्यावरण विशेषज्ञों के बीच इस परियोजना को कार्यान्वित करने के लक्ष्य और तरीकों के बारे में मतभेद है। इस कारण इस परियोजना के ऊपर काफी आर्थिक नुकसान हो रहा है।

नर्मदा घाटी विकास परियोजना

नर्मदा भारत की एक प्रमुख नदी है जो दो राज्यों मध्य प्रदेश और गुजरात से होकर बहती है। महाराष्ट्र और राजस्थान से भी कुछ मात्रा में जल इस नदी में प्रवाहित होता है। भारत सरकार ने नर्मदा नियंत्रण प्राधिकरण और 1980 में इसके पुर्नअवलोकन के लिए एक कमेटी का गठन किया। मुख्य बांध और उसकी ऊँचाई से संबंधित सभी समस्याओं को सुलझाने के लिए सरकार ने सरदार सरोवर निर्माण कमेटी का गठन किया है।

चूँकि इस परियोजना के दौरान बहुत अधिक संख्या में गाँवों, विशेष रूप से वे गाँव जहाँ जन-जातीय जनसंख्या है और जंगलों के बहुत बड़े भाग के जलमग्न होने की संभावना है, अतः विवाद उठ खड़ा हुआ है। गाँवों की आबादी, विशेष रूप से जन-जातीय लोगों का विस्थापन संतोषप्रद तरीके से हो, यह एक मानवीय मुद्दा है। इस तरह के मुद्दों पर ध्यानपूर्वक और सहृदयतापूर्ण तरीके से सोचने और उच्चतम स्तर पर विशेषज्ञों की राय जानने की जरूरत है।

यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि भारत और पाकिस्तान ने सिंधु और इसकी सहायक नदियों के जल-विभाजन के मुद्दे को तो बहुत सौहार्दपूर्ण तरीके से सुलझा लिया, परन्तु नर्मदा नदी के मामले में जहाँ कोई विदेशी हित का सवाल नहीं है, कोई रास्ता नज़र नहीं आ रहा है। स्वाधीनता के बाद से आज तक नर्मदा का पानी, हमें बिना कोई लाभ पहुँचाए समुद्र में बहने दिया जा रहा है। पता नहीं, ऐसी स्थिति कब तक बनी रहेगी।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए —
   (क) कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता औसत जन घनत्व की अपेक्षा अधिक सार्थक कैसे है ?
   (ख) किसी देश के भूमि उपयोग के प्रारूप को जानना क्यों आवश्यक है ?
   (ग) भारत में भूमि उपयोग के प्रारूप की सबसे संतोषजनक विशेषता क्या है ?
   (घ) भारत में भूमि उपयोग के प्रारूप की असंतोषजनक विशेषताएँ कौन-सी हैं ?
   (ङ) भारत में मानवीय उपयोग के लिए जल की उपलब्धता अपर्याप्त क्यों है ?
   (च) जल विद्युत, ऊर्जा के अन्य पारंपरिक साधनों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण क्यों है ?
2. बहु-उद्देशीय परियोजना किसे कहते हैं ? यह सिंचाई की पारंपरिक योजनाओं से किस प्रकार अच्छी है? भारत के विभिन्न क्षेत्रों से उदाहरण दीजिए।
3. हमारा राष्ट्रीय जल बजट किस तरह का है ? यह हमारे खाद्यान्न बजट के समान ही महत्वपूर्ण क्यों है?

4. अंतर स्पष्ट कीजिए —
   (क) घन मीटर तथा हैक्टेयर मीटर
   (ख) शुद्ध बोया गया क्षेत्र और बोया गया क्षेत्र
   (ग) धरातलीय जल संसाधन तथा भूमिगत जल संसाधन
   (घ) हिमालय से निकलने वाली नदियाँ तथा प्रायद्वीपीय भारत की नदियाँ।
5. कक्षा में निम्नलिखित पर विचार-विमर्श कीजिए —
   (क) जल जीवनदाता है
   (ख) हमारे भूमि उपयोग का असंतुलित प्रारूप।
6. मानचित्र कार्य

   भारत के रेखा-मानचित्र पर निम्नलिखित दिखलाइए —
   (क) उत्तरी भारत के तीन राज्य जहाँ सिंचित क्षेत्र अपेक्षाकृत काफी अधिक हैं।
   (ख) दक्षिण भारत के दो इसी प्रकार के राज्य।
   (ग) चार डेल्टा-प्रदेश जहाँ सिंचाई अति-सामान्य है।
   (घ) निम्नलिखित जल शक्ति परियोजनाओं को उन नदियों के ऊपर दिखलाइए जिन पर वे बने हैं :
      (i) सलाल (ii) नांगल (iii) कोयना
      (iv) रिहन्द (v) शरावती (vi) पेरियार.

अध्याय 5

खनिज तथा शक्ति के संसाधन

सभी प्राकृतिक संसाधन भूतल या उसके ऊपर ही नहीं पाए जाते। बहुत से संसाधन हमारी पृथ्वी के गर्भ में बहुत गहराई में छिपे हैं। इनमें से कुछ समुद्र के अधःस्तल के नीचे भी दबे पड़े हैं। आधुनिक औद्योगिक युग में इन भूमिगत संसाधनों का बड़ा महत्त्व है। देश का औद्योगिक विकास अधिकतर इन्हीं खनिज संसाधनों पर आधारित है। सभ्यता के आरंभ में मानव पत्थरों से अपने उपकरण और हथियार बनाता था। तांबा पहला धातु था, जिसका सबसे पहले व्यापक रूप से उपयोग शुरू हुआ। लेकिन लोहा इसकी अपेक्षा अधिक मजबूत तथा विशाल मात्रा में उपलब्ध होने के कारण मनुष्य के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने में सफल हुआ। इसने वनों को साफ करने में तथा खेती में तेजी से प्रगति लाने में सहायता की। कृषि के द्वारा ही मानव जाति के सांस्कृतिक विकास की आधारशिला रखी गई।

खनिज संसाधन

भारत खनिज संसाधनों में काफी संपन्न है। इसमें अपने ही प्रयासों से एक बड़ी औद्योगिक शक्ति बनने की क्षमताएँ हैं।

भारत लौह संसाधनों में विशेष रूप से संपन्न है। लोहा और कोयला मशीन युग का आधार है। एक अनुमान के अनुसार भारत में संसार के लौह अयस्क के लगभग एक-चौथाई भंडार हैं। हमारे लौह अयस्क के भंडारों की न केवल मात्रा ही विशाल है, अपितु वे उत्तम कोटि के भी हैं। लोहे और इस्पात उद्योग के लिए मैंगनीज एक अन्य अनिवार्य खनिज है। भारत में मैंगनीज के भी विशाल भंडार हैं। मिश्रित इस्पात बनाने में यह बहुत उपयोगी है। भारत में कोयले के भी बड़े भंडार हैं। लेकिन दुर्भाग्य से हमारे अच्छे किस्म के कोयले के भंडार कम हैं, जिनसे "कोक" बनाया जाता है। "कोक" लोहा और इस्पात उद्योग के लिए अनिवार्य है। भारत में लौह अयस्क और कोयले के भंडार एक-दूसरे के निकट ही स्थित हैं। इससे कोक की कमी की क्षतिपूर्ति कुछ सीमा तक हो जाती है। चूने का पत्थर इस्पात उद्योग के लिए आवश्यक पदार्थ है। यह भी देश में भारी मात्रा में व्यापक रूप से पाया जाता है।

भारत बाक्साइट और अभ्रक में भी संपन्न है। बाक्साइट से अल्युमिनियम मिलता है। अभ्रक बिजली-उद्योगों में बहुत काम आता है।

भारत में अलौह खनिजों, जैसे — जस्ता, सीसा, तांबा और सोना की बहुत कमी है। देश में गंधक के भंडार भी नगण्य हैं। गंधक आधुनिक रसायन उद्योग का प्रमुख आधार है।

किसी समय भारत में खनिज तेल और प्राकृतिक गैस का उत्पादन बहुत कम था लेकिन अपने सतत् प्रयत्नों और आधुनिक प्रौद्योगिकी की सहायता से हमने इनके काफी बड़े भंडारों का पता लगा लिया है। ये भंडार आगामी 30-40 वर्षों के लिए पर्याप्त होंगे। हमारे जल शक्ति के संसाधन तथा परमाणु खनिज भी बहुत ही विश्वसनीय हैं। प्रकृति ने बड़ी उदारता से हमें विशाल मात्रा में सौर ऊर्जा प्रदान की है। इसके उपयोग की राही प्रौद्योगिकी के विकसित हो जाने के बाद सौर ऊर्जा ही भविष्य में हमारे लिए ऊर्जा का प्रमुख स्रोत होगा।

स्वयं करने के लिए

1. किसी गांव में जाकर निम्नलिखित आंकड़े इकट्ठे कीजिए –
   (क) मकानों/परिवारों की संख्या।
   (ख) बिजली के कितने कनेक्शन दिए गए हैं।
   (ग) प्रत्येक दिन कितने घंटे बिजली मिलती है ?
   (घ) घंटों तथा दिनों की औसत संख्या जब ट्रांसमिशन लाइनों में खराबी के कारण बिजली नहीं मिलती।
   (ङ) बिजली की प्रति यूनिट खपत पर लगने वाले पैसे की दर।
   (च) बिजली की बर्बादी को रोकने के लिए संभावित तरीके।

सारणी 5.1

भारत में कोयले तथा लिगनाइट का उत्पादन (1950-51 से 1997-98)

वर्ष	कोयला	लिगनाइट	कुल
	(उत्पादन करोड़ टनों में)		
1950-51	3.23	-	3.23
1960-61	5.52	-	5.52
1970-71	7.29	0.34	7.63
1980-81	11.39	0.51	11.90
1990-91	21.17	1.38	22.55
1997-98	29.59	2.31	31.90

(i) यदि कोयला औद्योगिक गतिविधि का सूचक है, उन दो दशकों का वर्ष बताइए जब यह गतिविधि वास्तव में तेज हुई है।

(ii) लिगनाइट उत्पादन की प्रवृत्ति क्या बताती है ?

सारणी 5.2 का अध्ययन कीजिए और लौह अयस्क, बाक्साइट, कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के उत्पादन में हुई प्रगति की दर प्रतिशत में बताइए।

सारणी 5.2

खनिजों एवं खनिज ईंधनों के उत्पादन की प्रवृत्तियाँ (1950-51) से (1997-98)

खनिज/खनिज ईंधन	1950-51	1977-98
	(करोड़ टन में)	
लौह अयस्क	0.30	7.15
बाक्साइट	0.01	0.58
कोयला	3.23	31.90
पेट्रोलियम		
प्राकृतिक गैस	0.03	3.39

सारणी 5.3 का अध्ययन कीजिए और उसके नीचे दिए प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

सारणी 5.3

बिजली की खपत का बदलता प्रारूप

(1950-1997)

वर्ष	बिजली की खपत (प्रतिशत में)				
	घरेलू	व्यापारिक	उद्योग	कृषि	अन्य
1950-51	12.6	7.5	62.6	3.9	13.4
1996-97	19.8	6.2	37.6	29.6	6.7

मार्च 1998 तक बिजली प्राप्त करने वालों की संख्या 5 लाख तक पहुँच गई थी। नलकूपों/पंप सेटों की संख्या बढ़कर 1 करोड़ 10 लाख हो गई थी।

ज्ञात कीजिए पिछले 47 वर्षों में किस क्षेत्र में बिजली की खपत सबसे अधिक बढ़ी है। इससे आप क्या निष्कर्ष निकालते हैं ?

लोहा

भारत लौह अयस्क के निक्षेपों में मात्रा तथा किस्म दोनों ही दृष्टि से धनी है। यहाँ मुख्यतः हैमेटाइट और मैग्नेटाइट किस्म के लौह अयस्क मिलते हैं। हैमेटाइट में 68 प्रतिशत तक शुद्ध लौह-मात्रा होती है जबकि मैग्नेटाइट में यह 60 प्रतिशत तक है। इसके बाद लिमोनाइट आता है जो निम्न कोटि का लौह अयस्क है। हाल के सरकारी अनुमान के अनुसार देश में 13 अरब टन लौह अयस्क के भंडार हैं। उत्तम कोटि के लौह अयस्क के भंडार बिहार के सिंहभूम और उड़ीसा के क्योंझर, बोनाई और मयूरभंज में मिलते हैं। इसके अलावा मध्य प्रदेश के रायपुर, दुर्ग और बस्तर जिलों में भी लौह अयस्क के भंडार हैं। बस्तर की बैलाडिला खानों का विकास जापान की सहायता से किया गया है। यहाँ से अयस्क को विशाखापत्तनम भेज दिया जाता है ताकि उनको समुद्री जहाजों द्वारा जल्दी जापान को निर्यात किया जा सके। लौह अयस्क के अन्य भंडार आंध्र प्रदेश के अनेक जिलों में, तमिलनाडु के सेलम तथा तिरुचिरापल्ली जिलों तथा कर्नाटक के बेलारी और चिकमंगलूर जिलों में पाया जाता है। गोआ में भी लौह अयस्क के निक्षेप हैं, जिन्हें नियमित रूप से पुर्त्तगालियों के समय से ही जापान को निर्यात किया जाता है।

भारत में लौह अयस्क का उत्पादन सन् 1950-1951 में 30 लाख टन था। 1997-98 में यह 7 करोड़ टन हो गया। लौह अयस्क का निर्यात विशाखापत्तनम (बैलाडिला खानों के लिए), मार्मागोआ, पराद्वीप और कलकत्ता के पत्तनों से किया जाता है। कुद्रेमुख की खानों का भी विकास किया गया है और उनसे लोहा मंगलोर पत्तन द्वारा निर्यात किया जाएगा।

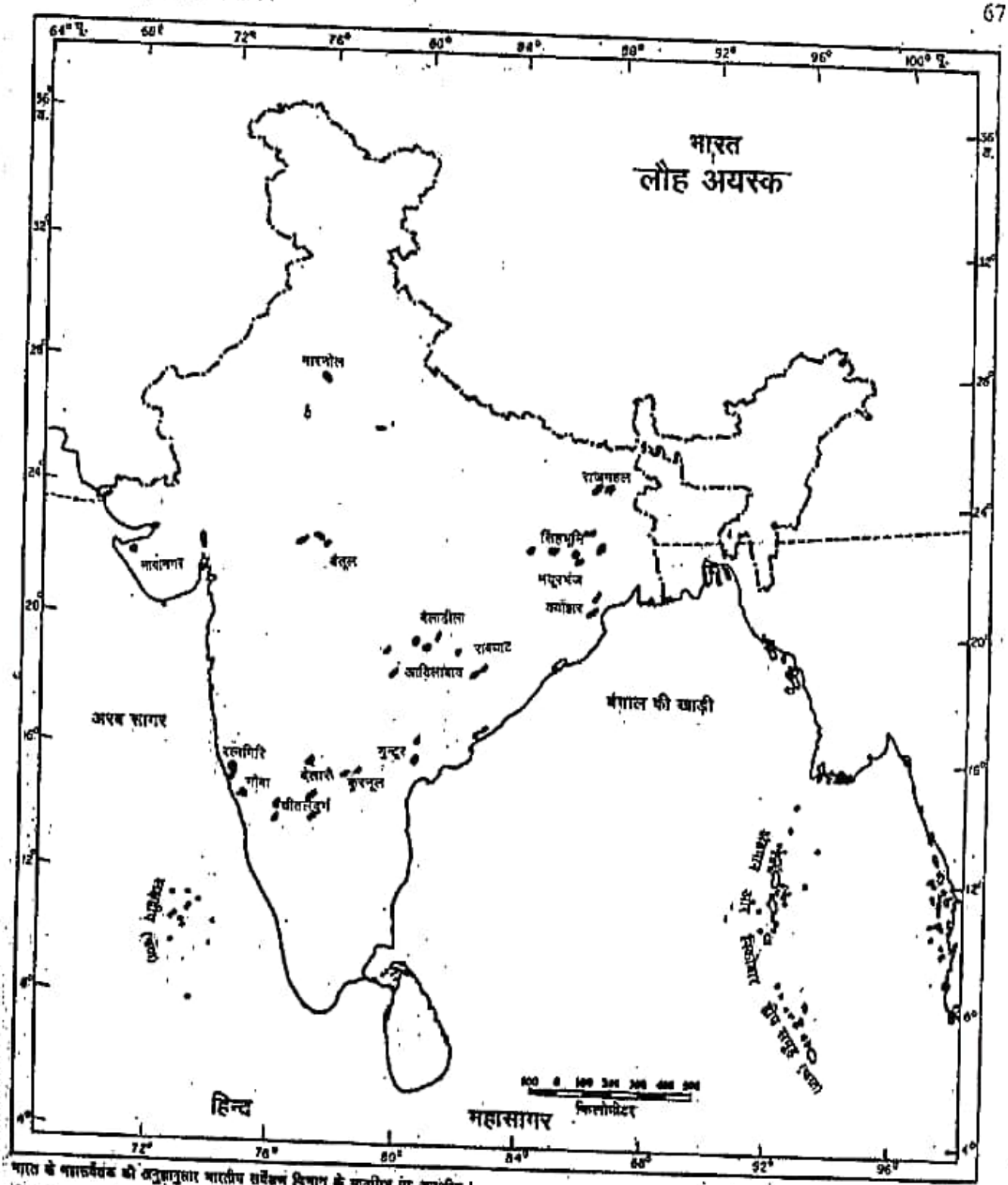

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 5.1 भारत–लौह अयस्क

भारत में लौह अयस्क के खनन के लिए प्रसिद्ध राज्यों को देखिए। किन राज्यों में लौह अयस्क के निक्षेप नहीं पाए जाते ?

मैंगनीज

फैरो-अलौय लोहे को मिलाकर बनाई गई मिश्रित धातुएं हैं। इनका महत्त्व इनकी मजबूती के कारण है। इसलिए विशालकाय शक्तिशाली मशीनों के युग में इनका ख़ास महत्त्व है। मैंगनीज का उपयोग मिश्रधातु बनाने के लिए किया जाता है। इसलिए इसका महत्त्व इतना बढ़ता जा रहा है।

देश में मैंगनीज अयस्क के कुल भंडार 16 करोड़ 70 लाख टन हैं। मुख्य भंडार कर्नाटक, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गोआ में हैं। 1997-98 में मैंगनीज अयस्क का कुल उत्पादन 16 लाख टन था।

बाक्साइट

बाक्साइट का महत्त्व इसलिए बढ़ गया है क्योंकि इस अयस्क से अल्युमिनियम की धातु बनती है। हलकी होने के कारण यह धातु बहुत उपयोगी है। वायुयान उद्योग के लिए यह अनिवार्य है। सामान्य जीवन में भी इसका उपयोग निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। अल्युमिना और अल्युमिनियम का उत्पादन बहुत कुछ भारी मात्रा में सस्ती बिजली के मिलने पर निर्भर करता है।

भारत के अनेक क्षेत्रों में बाक्साइट के निक्षेप पाए जाते हैं। बिहार, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश और उड़ीसा में निक्षेप पाए जाते हैं। इस अयस्क का कुल अनुमानित भंडार 246 करोड़ 20 लाख टन है। मुख्य भंडार भारत के पूर्वी तट पर उड़ीसा और आंध्र प्रदेश में मिलते हैं। 1997-98 में बाक्साइट का उत्पादन 58 लाख टन हुआ था।

हाल ही में उड़ीसा के बाक्साइट निक्षेपों का विकास किया गया है। यहाँ अल्युमिना और अल्युमिनियम बनाने के लिए एशिया का सबसे बड़ा कारखाना लगाया गया है। इसमें 8 लाख टन अल्युमिना तथा 2 लाख 25 हज़ार टन अल्युमिनियम उत्पादन की वार्षिक क्षमता है। इस कारखाने में अति आधुनिक फ्रांसीसी तकनीक का उपयोग किया जा रहा है, जिसमें बिजली बहुत कम लगती है। अयस्क का निर्यात जापान और यूरोपीय देशों में किया जाता है।

अभ्रक

भारत में संसार के लगभग 90 प्रतिशत अभ्रक का उत्पादन होता है। यह बिजली उद्योगों का प्रमुख आधार है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में 60 प्रतिशत अभ्रक भारत का होता है। देश में प्रति वर्ष 2,650 टन अभ्रक निकाला जाता है। उसका लगभग आधा भाग बिहार के हज़ारीबाग, गया और मुंगेर जिलों से आता है। ये जिले छोटानागपुर पठार के उत्तरी छोर पर हैं। अभ्रक की शेष आधी मात्रा का उत्पादन आंध्र प्रदेश के नेल्लौर तथा राजस्थान के भीलवाड़ा जिलों में होता है। अभ्रक के निर्यात में ब्राजील भारत का प्रतिद्वन्द्वी है। हमारे देश में अभ्रक का कुल भंडार 93,000 टन आंध्र प्रदेश में, 13,000 टन बिहार में तथा 1,600 टन राजस्थान में है। कृत्रिम के कारण इनके उत्पादन में कमी आई है।

तांबा

घरेलू बर्तन बनाने में तांबे का बहुत उपयोग होता था। लोहे के उपयोग की खोज से पहले तांबा ही सभ्यता के विकास का प्रतीक था। लेकिन आजकल तो यह बिजली के उद्योगों के लिए अपरिहार्य हो गया है क्योंकि यह

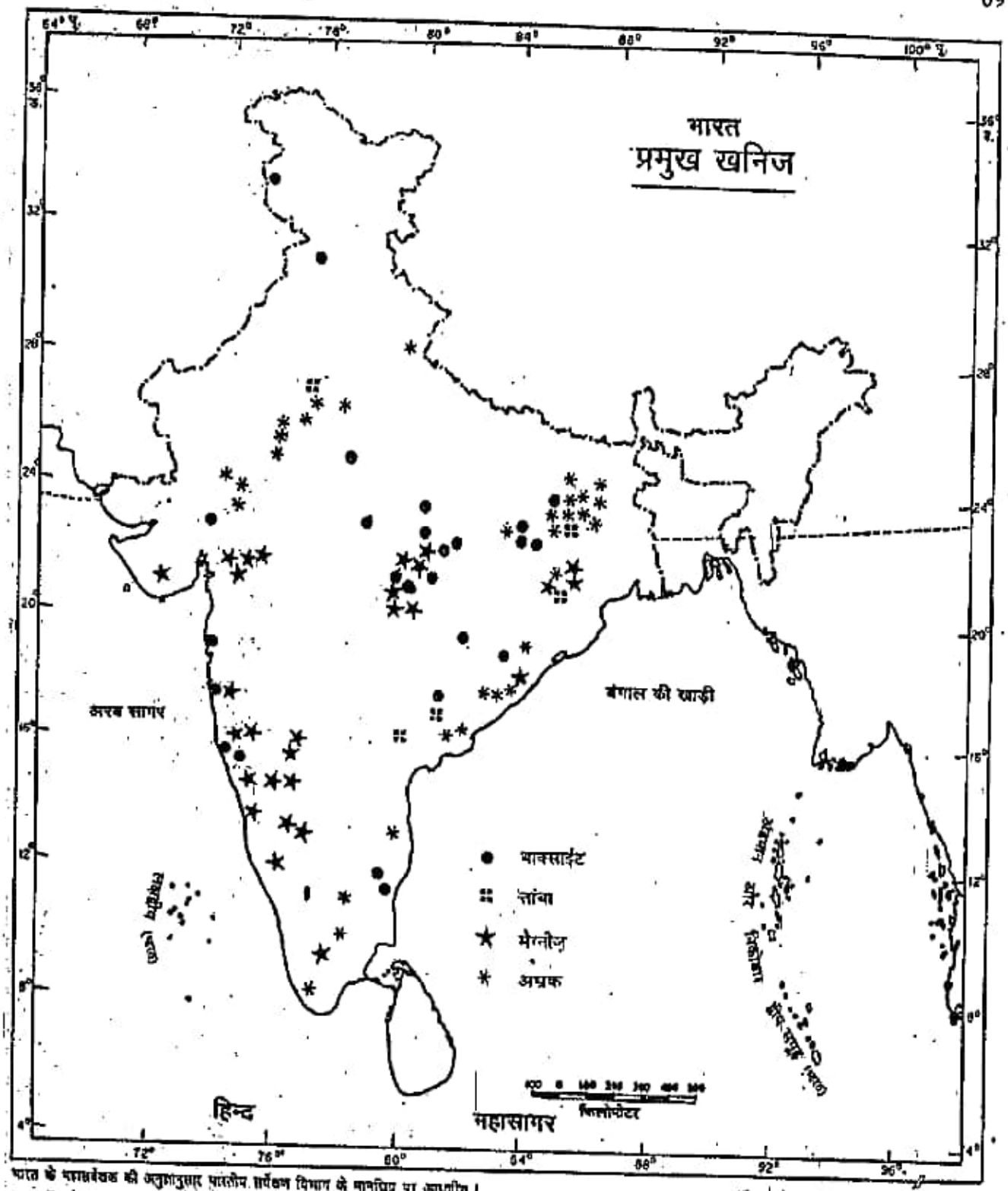

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित जानकारी विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1995

चित्र 5.2 भारत–मैंगनीज़, बाक्साइट, अभ्रक और तांबा

भारत में मैंगनीज़, बाक्साइट, अभ्रक और तांबा के वितरण को देखिए। इनमें से प्रत्येक खनिज के लिए दो राज्यों के नाम बताइए जहाँ ये मिलते हैं।

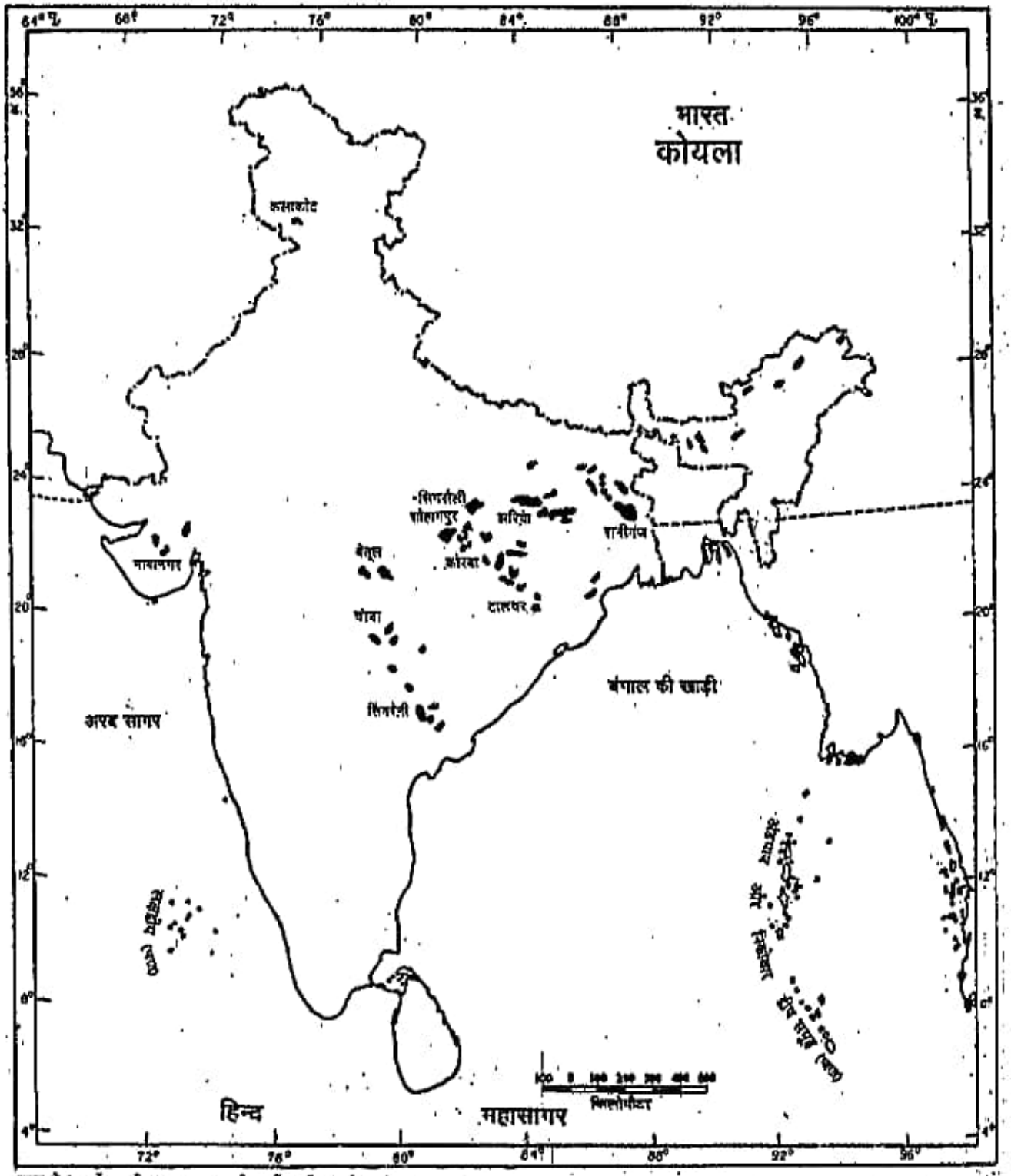

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षान्तिर्गत विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 5.3 भारत—कोयला

उन राज्यों के नाम बताइए जहाँ कोयला मिलता है। दामोदर घाटी को "भारत का रूर" क्यों कहते हैं ?

बिजली का सुचालक है। आजकल देश का अधिकांश तांबा, बिहार के सिंहभूम, मध्य प्रदेश के बालाघाट और राजस्थान के झुंझनु एवं अलवर जिलों से निकाला जाता है। आंध्र प्रदेश के खम्मम, कर्नाटक के चित्रदुर्ग और हसन जिलों तथा सिक्किम में भी थोड़े बहुत तांबे का उत्पादन होता है। तांबे के अयस्क के कुल अनुमानित भंडार 57 करोड़ टन हैं, जिनमें 43.7 लाख टन धातु के होने का अनुमान है। सन् 1997-98 में 45 लाख टन तांबे के अयस्क का उत्पादन हुआ था।

सोना

भारत में सोने के निक्षेप बहुत कम हैं। आजकल सोने का उत्पादन कर्नाटक राज्य में कोलार तथा हट्टी रायचूर जिला खानों से होता है। कोलार की सोने की खान संसार की सबसे गहरी खान है। आंध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले की खानों से अभी कुछ समय पूर्व ही सोना निकालना शुरू किया गया है। सोने के ज्ञात भंडार केवल 66,700 किलोग्राम हैं। सोने का वार्षिक उत्पादन निरंतर घट रहा है। सन् 1951 में सोने का कुल उत्पादन 7,000 किलोग्राम था, जो घट कर 1997-98 में केवल 2,600 किलोग्राम रह गया है।

शक्ति के साधन

औद्योगिक युग का प्रारंभ होते ही, विशालकाय मशीनों को चलाने के लिए ऊर्जा के साधनों का महत्त्व एकाएक बहुत बढ़ गया है। लकड़ी का ईंधन केवल घरेलू उपयोग तक ही सीमित था और वह भी गांवों में। कोयला जिसका उपयोग पहले से ही हो रहा था, बहुत मूल्यवान वस्तु बन गई। इसके पश्चात् खनिज तेल इसका पूरक बना। इसी तरह जल विद्युत का भी प्रसार उन क्षेत्रों में हुआ जहाँ प्रवाहित जल, तथा आवश्यक प्रौद्योगिकी उपलब्ध थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् ऊर्जा का एक नया स्रोत अस्तित्व में आया। यह परमाणु ऊर्जा थी। परमाणु ऊर्जा का विकास उच्च स्तर की परिष्कृत प्रौद्योगिकी के द्वारा ही संभव था। इन सबको ऊर्जा के पारंपरिक साधनों के नाम से जाना जाता है। ऊर्जा के इन साधनों में कोयला आज भी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

कोयला

औद्योगिक ऊर्जा का प्रमुख साधन होने के साथ कोयला एक कच्चा माल भी है। लोहा तथा इस्पात एवं रसायन उद्योगों के लिए कोयला अपरिहार्य है। देश में व्यापारिक शक्ति की 60 प्रतिशत से भी अधिक आवश्यकताएँ कोयले और लिगनाइट से पूरी होती हैं।

भारत में कोयले के 98 प्रतिशत भंडार गोंडवाना युग के हैं। रानीगंज, झरिया, गिरीडीह, बोकारो तथा करनपुरा कोयले के प्रमुख क्षेत्र हैं। गोदावरी, महानदी, सोन तथा वर्धा नदियों की घाटियों में भी कोयले के भंडार पाए जाते हैं। सतपुड़ा पर्वत-श्रेणी तथा मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ के मैदानों में कोयले के कुछ अन्य खनन क्षेत्र हैं। आंध्र प्रदेश के सिंगरैनी, उड़ीसा के तालचिर तथा महाराष्ट्र के चांदा में भी कोयले के विशाल क्षेत्र हैं।

सन् 1774 में पश्चिम बंगाल के रानीगंज में कोयले के खनन का कार्य प्रारंभ हुआ था। स्वाधीनता के बाद सभी कोयला-खानों का राष्ट्रीयकरण हो गया। राष्ट्रीयकरण का मुख्य उद्देश्य कोयले की खानों में काम करने वाले श्रमिकों को शोषण से बचाना था। इन

कोयला क्षेत्रों का समूहीकरण करने के बाद, अब देश के प्रमुख कोयला क्षेत्र ये हैं — (1) रानीगंज, (2) झरिया, (3) पूर्वी बोकारो तथा पश्चिम बोकारो, (4) पंच-कान्हा, तवा घाटी, (5) सिंगरौली, (6) चन्द्रा-वर्धा, (7) तालचिर, तथा (8) गोदावरी घाटी।

भंडार तथा उत्पादन

भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 1998 तक 20,623.95 करोड़ टन कोयले के भंडार थे। इन भंडारों का आधार 1,200 मीटर गहराई तक 0.5 मीटर से अधिक मोटी कोयले की परत है। कोयले के भंडार की दृष्टि से प्रमुख राज्य ये हैं — बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र। उष्मा प्रदान करने की दृष्टि से भारत का कोयला निम्न कोटी का है। लेकिन निम्न कोटी के कोयले से विद्युत तथा गैस का उत्पादन हो सकता है। इसलिए हमारे छोटे-बड़े ताप बिजलीघर इन कोयला क्षेत्रों में ही स्थापित किए गए हैं। इनसे प्राप्त विद्युत को विशाल प्रादेशिक ग्रिड व्यवस्था में भेज दिया जाता है। इस प्रकार उपभोक्ता केंद्रों तक कोयले के परिवहन में लगने वाला समय और व्यय बच जाता है।

सन् 1951 में भारत में कोयले का उत्पादन केवल 3.2 करोड़ टन था, जो अब बढ़कर 31 करोड़ 90 लाख टन हो गया है। कोयले का प्रति व्यक्ति उपभोग 135 किलोग्राम से बढ़कर लगभग 400 किलोग्राम हो गया है।

लिगनाइट निम्न कोटि का कोयला है। इसे भूरा कोयला भी कहते हैं। भारत के लिगनाइट में कोयले की अपेक्षा राख का अंश कम होता है। इसके गुण में स्थिरता है। तमिलनाडु के नेवेली क्षेत्र में 330 करोड़ टन लिगनाइट के भंडार हैं। देश में कुल लिगनाइट का भंडार 2,750 करोड़ टन है। यहाँ की खानों में भूमिगत जल की बड़ी विकट समस्या है। खानों से निरंतर पानी निकालने का काम अत्यंत कठिन है। लेकिन इन भंडारों की स्थिति तमिलनाडु के लिए वरदान बन गई है। नेवेली में 600 मेगावाट ताप विद्युत का उत्पादन होता है। इस क्षेत्र में उत्पादित ताप विद्युत पूरे राज्य के औद्योगीकरण का आधार है। 1997-98 में देश में कुल लिगनाइट का उत्पादन 1 करोड़ 80 लाख टन था।

तेल और प्राकृतिक गैस

प्रायद्वीपीय क्षेत्रों को छोड़कर भारत के शेष भागों में तृतीय महाकल्प की शैलों तथा जलोढ़ निक्षेपों के विशाल क्षेत्र हैं। ये अवसादी शैल कभी उथले सागरों के जल के नीचे थीं। इन्हीं निक्षेपों में तेल और गैस के भंडार मिलने की संभावना रहती है। भारत में तेल का संभाव्य क्षेत्र 10 लाख वर्ग किलोमीटर से भी अधिक है। यह देश का एक-तिहाई क्षेत्रफल है। इसके अंतर्गत गंगा और ब्रह्मपुत्र का मैदान, तटीय पट्टियाँ तथा तट के सहारे फैला और समुद्री जल में डूबा हुआ, महाद्वीपीय निमग्नतट, गुजरात के मैदान, थार मरुस्थल और अंदमान निकोबार द्वीप समूह के आस-पास का क्षेत्र आता है।

स्वाधीनता के समय केवल असम में ही खनिज तेल निकाला जाता था तथा इसी राज्य के डिगबोई में स्थित परिष्करणशाला में इसका शोधन होता था। यद्यपि यह तेल क्षेत्र छोटे आकार का है, लेकिन संसार में निरंतर 100 वर्षों तक चलने वाला एकमात्र यही तेल क्षेत्र है। गुजरात के मैदानों तथा खंभात की खाड़ी में अपतट क्षेत्रों में तो खनिज तेल और प्राकृतिक गैस की खोज स्वाधीनता के बाद हुई है। मुंबई तट से 115

किलोमीटर दूर समुद्र में तो खनिज तेल की उपलब्धि बिलकुल अप्रत्याशित थी। इस समय यह भारत का सबसे बड़ा तेल क्षेत्र है। इस तेल क्षेत्र को "बंबई हाई" के नाम से जाना जाता है। समुद्रों में तेल की खोज के लिए विशेष रूप से बनाया गया "सागर सम्राट" नाम का जहाज जापान से मंगाया गया था। तेल के भंडार समुद्र के अधस्तल में बहुत गहराई में स्थित थे। इस स्थान पर पानी भी बहुत गहरा था। इस स्थान से तेल निकालने के लिए बहुत ही विकसित एवं उच्चस्तर की प्रोद्योगिकी की आवश्यकता थी। भारत ने समुद्र में तेल की खोज की कड़ी चुनौती को स्वीकार करके बहुत कम समय में इस तेल क्षेत्र को विकसित कर लिया। अब तो तेल के कुओं को खोदने वाली मशीनें तथा सागर के गहरे जल में तेल के कुओं की खुदाई करने वाले जहाज भारत में ही बनाए जाते हैं। खनिज तेल के नवीनतम भंडारों की खोज समुद्र के अपतट क्षेत्रों में ही हुई है। ये क्षेत्र गोदावरी, कृष्णा, कावेरी तथा महानदी के डेल्टा तटों के पास गहरे सागर में फैले हैं। असम में भी तेल के नए भंडारों का पता चला है।

प्राकृतिक गैस के भंडार सामान्यतः तेल क्षेत्रों के साथ ही पाए जाते हैं। इस प्रकार गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश तथा उड़ीसा के तटों के दूर तेल-क्षेत्रों में भी प्राकृतिक गैस के भंडार मिले हैं। लेकिन तेल क्षेत्रों से अलग केवल प्राकृतिक गैस के भंडार त्रिपुरा और राजस्थान में खोजे गए हैं।

हमारा बढ़ता हुआ तेल बजट

सन् 1950-51 में हमारे देश में खनिज तेल का कुल उत्पादन 2,69,000 टन था। उस वर्ष तेल का उपभोग 31 लाख टन था। इस प्रकार उत्पादन और उपभोग के बीच का अंतर अपेक्षाकृत कम था और उसका प्रबंधन आसान था। 1997-98 तक तेल का उत्पादन बढ़कर 3 करोड़ 38 लाख टन हो गया। पता कीजिए कि तेल के उत्पादन में कितनी गुनी वृद्धि हुई है। यह जानकारी आपके लिए रोचक होगी कि देश में कुल तेल उत्पादन 3 करोड़ 38 लाख टन है। इसमें से अभितट उत्पादन (यानि मुख्य भूमि से) 1 करोड़ 15 लाख टन है, जो असम और गुजरात से आता है। शेष 1 करोड़ 24 लाख टन उत्पादन अपतटीय क्षेत्रों, जिनमें "बंबई हाई" और खंभात की खाड़ी सम्मिलित हैं, से प्राप्त होता है। हमारा उपभोग बढ़कर 8 करोड़ 45 लाख टन पहुँच गया है। अतः हमें 5 करोड़ 7 लाख टन तेल आयात करने के लिए बाध्य होना पड़ा है। इसमें 8 अरब 21 करोड़ 70 लाख अमेरिकन डालर के मूल्य की विदेशी मुद्रा लगती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हमारे लिए मूल्य-अधिकृत वृद्धि उत्पादों का निर्यात बढ़ाना कितना आवश्यक है।

प्राकृतिक गैस : 1997-98 में 246 खरब घन मीटर गैस का उत्पादन हुआ। इसमें से 230 खरब घन मीटर का उपयोग हुआ। 1 अप्रैल 1998 को 675 खरब घन मीटर का निचय था। भारत जैसे देश में जहाँ शक्ति-संसाधनों की कमी है, प्राकृतिक गैस एक बहुमूल्य उपहार है। इसका उपयोग ऊर्जा के स्रोत तथा पेट्रो-रसायन उद्योग में औद्योगिक कच्चे माल, दोनों ही रूपों में किया जा सकता है। प्राकृतिक गैस के ऊपर आधारित शक्ति संयंत्र के निर्माण में कम समय लगता है। प्राकृतिक गैस पर आधारित उर्वरक संयंत्रों की स्थापना से भारतीय कृषि की उत्पादन-क्षमता को बढ़ाया जा

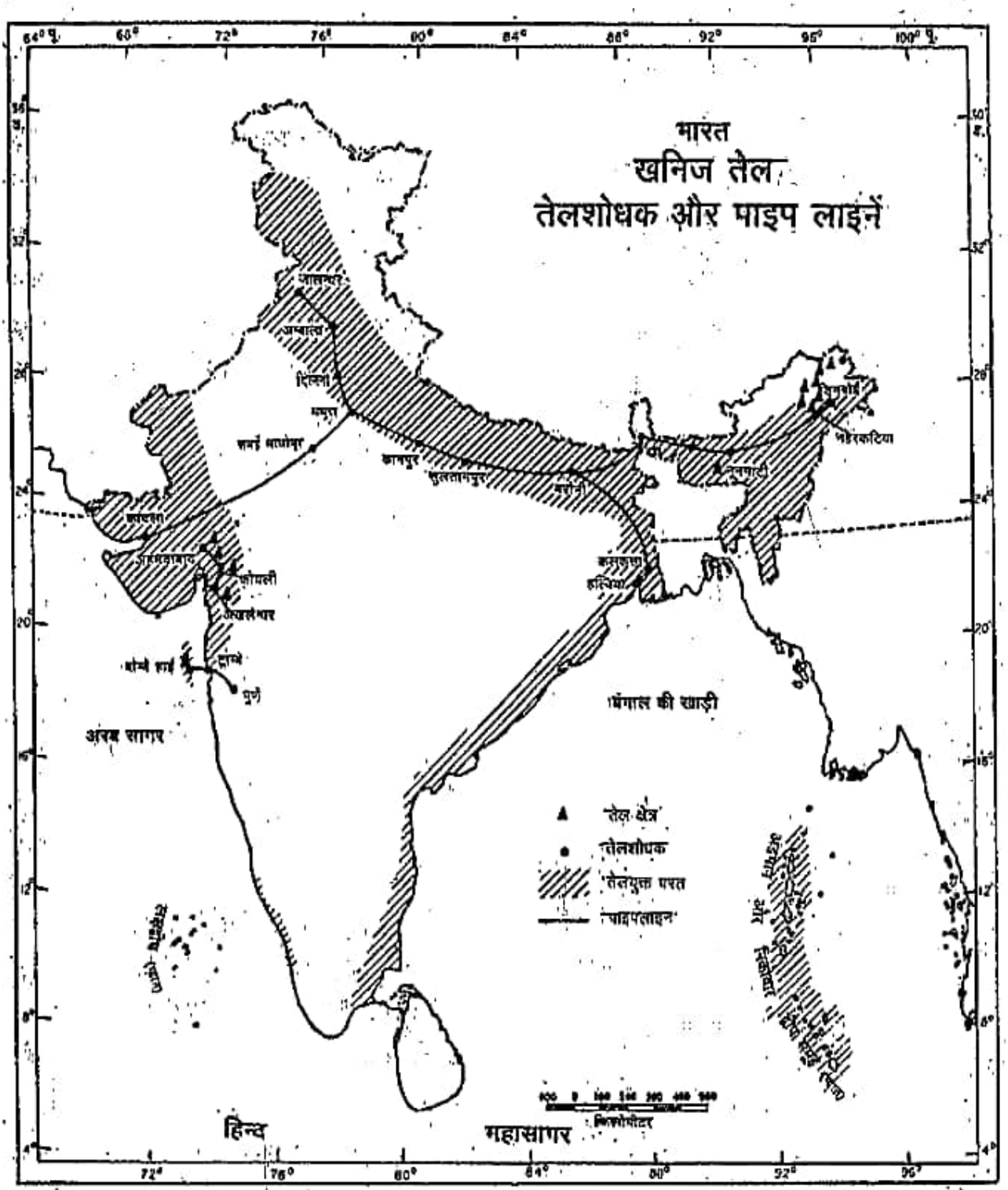

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1998
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आंतरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 5.4 भारत—खनिज तेल, तेल परिष्करणशाला और पाईप लाईन

पाईपलाइनों द्वारा जोड़े गए स्थानों के नाम बताइए। भारत के प्रमुख खनिज-तेल क्षेत्रों के नाम भी बताइए।

सकता है। गैस की उपयोगिता को और भी बढ़ाया जा सकता है क्योंकि इसका परिवहन गैस पाइप-लाइन द्वारा किया जा सकता है। अब गैस को बंबई हाई और गुजरात के गैस-क्षेत्रों से मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों तक ले जाया जाता है। हजीरा-विजयपुर-जगदीशपुर गैस पाइप लाइन 1,730 किलोमीटर लंबी है और प्रत्येक दिन इसके द्वारा 1 करोड़ 80 लाख घन मीटर गैस परिवाहित होती है। इसके द्वारा अभी 6 उर्वरक संयंत्रों को और 3 विद्युत संयत्रों को गैस प्रदान किया जाता है।

भारत में तेल-परिष्करणशालाएं

भारत में कुल मिलाकर 14 तेल-परिष्करणशालाएं कार्यरत हैं। उनकी अवस्थिति तीन विभिन्न कारकों पर आधारित है। परिष्करणशालाओं की लगभग आधी संख्या तटों के समीप है, क्योंकि आयातित कच्चे तेल को वहाँ तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। इनमें से दो ट्राम्बे (मुंबई) और एक-एक मंगलौर, कोची, चेन्नई, विशाखापत्तनम और कलकत्ता के पास हल्दिया में स्थित हैं। चार परिष्करणशालाएं तेल क्षेत्रों के समीप देश के आंतरिक भाग में स्थित हैं। इनमें से तीन परिष्करणशालाएं असम, दिगबोई, गुवाहाटी तथा बोंगाई गांव में हैं। चौथी परिष्करणशाला गुजरात के कोयाली में स्थित है। यहाँ तेल आंतरिक तेल-क्षेत्रों से पहुँचाया जाता है। शेष तीन परिष्करणशालाएं बाजार के समीप हैं। वे हैं — बिहार में बरौनी, उत्तर प्रदेश में मथुरा और हरियाणा में पानीपत। उनकी कुल क्षमता 6 करोड़ 10 लाख टन है। अगले तीन-चार वर्षों में यह क्षमता बढ़कर 11 करोड़ 20 लाख टन हो जाने की आशा है। इससे हम अपनी बढ़ती हुई मांगों को पूरा कर आत्मनिर्भर बन सकेंगे।

ताप शक्ति

हम अभी तक जलविद्युत के बारे में पढ़ चुके हैं। यह विद्युत ऐसे स्रोत से प्राप्त होता है जो प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है तथा नवीकरण योग्य है। दूसरी ओर, ताप शक्ति संयंत्रों (बिजली-घर) में तापीय विद्युत (बिजली) का उत्पादन करने के लिए कोयला, पेट्रोलियम और गैस का उपयोग होता है। वे सभी स्रोत खनिज-उद्गम के हैं। इन्हें जीवाश्म ईंधन भी कहा जाता है। इनका सबसे बड़ा अवगुण यह है कि वे समाप्त होने वाले संसाधन हैं और उनकी संपूर्ति मनुष्यों द्वारा नहीं की जा सकती। इसके अलावा, ये जलविद्युत की भांति प्रदूषण-रहित नहीं हैं। विद्युत, ऊर्जा का सबसे सुविधाजनक और बहुप्रचलित रूप है। अब यह अलग बात है कि वह बनती कैसे है? यह कोयले, पेट्रोलियम, गैस परमाणु ईंधन या जल, किसी से भी बनाई जा सकती है। उद्योग, कृषि, परिवहन और घरेलू क्षेत्रों में इसकी मांग बहुत अधिक है। उत्पादकता और लोगों के जीवन-स्तर से इसके उपयोग का गहरा संबंध है। 1947 में बिजली-उत्पादन की कुल संस्थापित क्षमता सिर्फ 1,400 मेगावाट थी। 1997-98 तक यह क्षमता बढ़कर 90,000 मेगावाट हो गई। इसमें से ताप-शक्ति संयंत्रों का हिस्सा 64,000 मेगावाट से कुछ अधिक था। 1997-98 में बिजली का कुल उत्पादन 42.0 अरब यूनिट था। इसमें से 33.6 अरब यूनिट का उत्पादन ताप-शक्ति संयंत्रों द्वारा हुआ।

परमाणु शक्ति

भारत में उत्तम कोटि के कोयले और खनिज तेल की कमी है। अतः परमाणु शक्ति द्वारा इस कमी को पूरा

किया जा सकता है। उन स्थानों को, जहाँ शक्ति के अन्य साधन या तो उपलब्ध नहीं हैं अथवा उनकी कमी है, परमाणु बिजली-घरों की स्थापना से लाभ पहुँचेगा। भारत परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों, जैसे चिकित्सा और कृषि जैसे क्षेत्रों में, अग्रणी रहा है।

भारत कुछ परमाणु-खनिजों में काफी धनी है। बिहार के सिंहभूम और राजस्थान के कुछ भागों में यूरेनियम की खानें हैं। केरल के तट पर पाया जाने वाला मोनाजाइट बालू, परमाणु ऊर्जा का विपुल साधन है। इस बालू से थोरियम निकाला जाता है। हमारे परमाणु खनिज का भंडार बिहार के प्लेसर निक्षेपों द्वारा और बढ़ा है। भारत में बेरालाइट और जिरकोनियम के निक्षेप संसार के सबसे बड़े भंडारों में से एक हैं। इसी प्रकार ग्रेफाइट भी एक प्रकार का परमाणु खनिज है, जो पूर्वी पहाड़ियों पर पाए जाते हैं।

भारत में चार परमाणु बिजली-घर हैं। ये बिजली-घर, अरब सागर के तट पर महाराष्ट्र-गुजरात की सीमा पर तारापुर में राजस्थान में कोटा के निकट रावतभाटा में, तमिलनाडु के कल्पक्कम और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गंगा तट पर स्थित नरोरा, में हैं। इनकी सम्मिलित कुल संस्थापित क्षमता लगभग 15 लाख किलोवाट है।

शक्ति ग्रिड

प्रत्येक संभावित स्रोत से उत्पादित बिजली को 5 प्रादेशिक ग्रिडों में भेज दिया जाता है। इन सभी प्रादेशिक ग्रिडों को मिलाकर एक राष्ट्रीय ग्रिड बनाने की संभावना है। इससे सभी प्रदेशों को प्रतिकूल दशाओं में भी बिजली पहुँचाई जा सकती है।

केंद्रीकृत वितरण प्रणाली के कुछ अवगुण भी हैं। बड़े पैमाने पर ट्रांसमिशन लाईनें बिछाने, बिजली के वितरण केंद्र बनाने जैसे कार्य में बहुत बड़ी धनराशि खर्च होती है। इसके अलावा प्रबंधन की समस्याएँ हैं। परन्तु जहाँ सेवा और कार्य कुशलता को प्रधानता दी जाती है, वहाँ यह प्रणाली सफल है। आजकल विकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिल रहा है। इससे स्थानीय लोगों को और अधिक प्रेरणा मिलेगी तथा वे अपनी आवश्यकताओं और संसाधनों का आकलन करके अपने लिए उपयुक्त योजनाएँ बना सकेंगे। इससे इन योजनाओं पर खर्च होने वाली धनराशि का सदुपयोग प्राथमिक बन जाता है। इस प्रकार उपभोक्ता अपने हित में बिजली की बर्बादी कम से कम होने देते हैं। इस प्रणाली का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसमें ऊर्जा के नवीकरण योग्य तथा अक्षय साधनों का उपयोग होता है।

ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोत

ऊर्जा के स्रोत के रूप में पवन और प्रवाहित जल का उपयोग बहुत पहले से होता रहा है। ऊर्जा के परंपरागत स्रोत—कोयला, खनिज तेल और प्राकृतिक गैस का व्यापक उपयोग बाद में शुरू हुआ है। पवन-चक्कियों और पन-चक्कियों का उपयोग क्रमशः पानी खींचने और आटा पीसने के लिए किया जाता है।

आजकल ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोतों में पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, सौर और भूतापीय ऊर्जा, जैव पदार्थों से प्राप्त ऊर्जा तथा गोबर, खेत के कूड़े-कचरे तथा मानव मल-मूत्र से प्राप्त ऊर्जा सम्मिलित है। ये सभी स्रोत नवीकरण योग्य हैं अथवा अक्षय हैं। ये कम खर्चीले भी हैं।

पवन ऊर्जा

इसका उपयोग पानी खींचने के लिए किया जा सकता है।

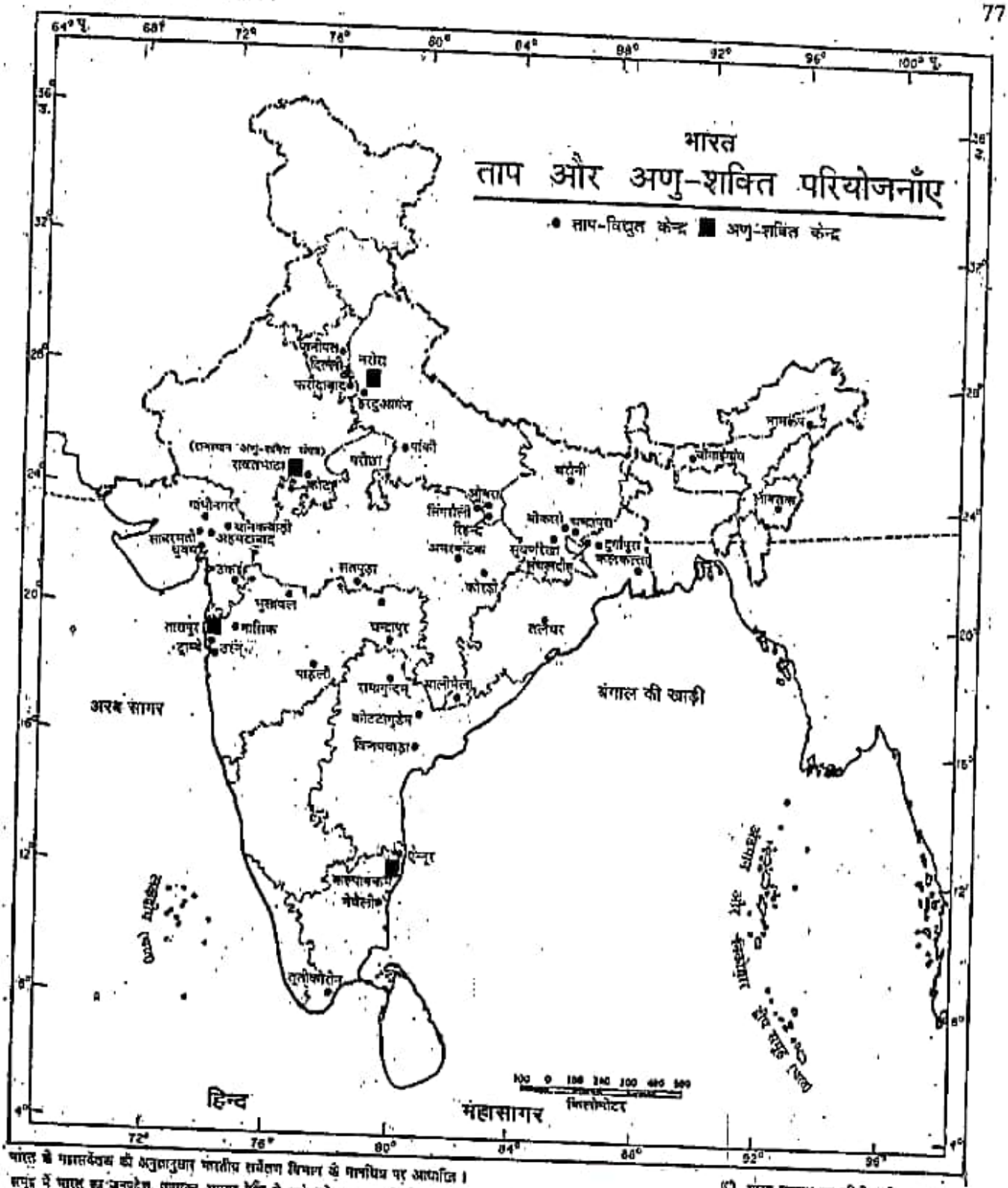

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित नामों का अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 5.5 भारत—प्रमुख तापीय और परमाणु शक्ति परियोजनाएँ

भारत में ताप और परमाणु बिजली घरों की स्थिति देखिए। किन राज्यों में ताप और परमाणु बिजलीघर नहीं है ? कुछ क्षेत्रों में अनेक ताप-बिजलीघरों के संकेन्द्रण के कारण पता कीजिए।

ग्रामीण क्षेत्रों में खेतों की सिंचाई एक प्रमुख आवश्यकता है। इससे बिजली भी बनाई जा सकती है। ऐसा अनुमान है कि पवन का उपयोग करके 2,000 मेगावाट बिजली बनाई जा सकती है। गुजरात, तमिलनाडु, महाराष्ट्र और उड़ीसा इसके लिए उपयुक्त राज्य हैं। चक्कियां उन्हीं क्षेत्रों में लगाना उचित है जहाँ पवन तेज गति से और निरंतर चलती हैं। मार्च 1987 तक 1,750 पवन चक्कियां लगाई जा चुकी थी। 3.63 मेगावाट बिजली की संस्थापित उत्पादन क्षमता वाले 5 पवन क्षेत्र भी कार्य कर रहे हैं। ये अब तक 5 लाख यूनिट बिजली का उत्पादन कर चुके हैं। इस बिजली को ग्रिड प्रणाली में सम्मिलित कर लिया गया है।

ज्वारीय ऊर्जा

यह ऊर्जा का सस्ता एवं अक्षय स्रोत है। कच्छ तथा खंभात की खाड़ियां ज्वारीय ऊर्जा से बिजली बनाने के लिए आदर्श स्थान हैं। यहाँ बहुत ही संकरी खाड़ियों में ज्वार का पानी बड़ी तेजी से बढ़ता है।

भूतापीय ऊर्जा

भारत इस साधन में संपन्न नहीं है। फिर भी हिमाचल प्रदेश में स्थित मणिकर्ण के गर्म जल स्रोत की ऊर्जा का उपयोग करने के प्रयत्न चल रहे हैं। इस प्रकार उत्पादित ऊर्जा का उपयोग शीतागारों को चलाने में किया जा सकता है।

ऊर्जा के लिए वृक्षारोपण

बंजर तथा अपरदित भूमि का उपयोग शीघ्र बढ़ने वाले एवं बहुत अधिक तापजनक गुण वाले वृक्षों तथा झाड़ियों के रोपण के लिए किया जा रहा है। इनसे जलाऊ लकड़ी, कठकोयला, चारा और शक्ति प्राप्त की जाती है। इनसे ग्रामीण रोजगार को प्रोत्साहन मिलता है। 8,000 हैक्टेयर भूमि में ऊर्जा के लिए किए गए वृक्षारोपण के वृक्षों और झाड़ियों आदि का गैसीकरण करके 1987 में 1.5 मेगावाट बिजली बनाई गई।

शहरी कचरे से ऊर्जा

दिल्ली में शहर के ठोस पदार्थों के रूप में कूड़े-कचरे से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए एक संयंत्र परीक्षण के तौर पर कार्य कर रहा है। इससे प्रति वर्ष 4 मेगावाट ऊर्जा का उत्पादन होता है।

गन्ने की खोई से चलने वाले बिजलीघर

भारत में गन्ने से चीनी बनाने के अनेक कारखाने हैं। गन्ने की पेराई के मौसम में इन कारखानों में खोई से 2,000 मेगावाट अतिरिक्त बिजली बनाई जा सकती है। एक कारखाना 10 मेगावाट बिजली बना सकता है। इसमें से 4 मेगावाट बिजली का उपयोग कारखाने की निजी आवश्यकता को पूरा करने के लिए हो सकता है। शेष 6 मेगावाट बिजली को स्थानीय ग्रिड में भेजकर खेतों की सिंचाई की जा सकती है। गन्ने की खोई की भांति खेती के दूसरे कूड़े-कचरों, जैसे धान की भूसी का उपयोग भी बिजली बनाने में हो सकता है।

कृषि, पशु तथा मानव मल-मूत्र से ऊर्जा (ऊर्जा ग्राम)

जैव पदार्थों, गोबर, मुर्गियों के अवशेष तथा मानव मल-मूत्र के उपयोग से "गोबर गैस" संयंत्र लगाए गए हैं। इनसे गाँवों को ऊर्जा की आवश्यकता पूरी हो सकती

है। गाँवों में इनसे उत्पन्न ऊर्जा का उपयोग खाना बनाने में, घरों और सड़कों पर प्रकाश के लिए तथा सिंचाई के लिए किया जाता है। गोबर गैस संयंत्रों की स्थापना व्यक्तिगत सामुदायिक तथा ग्राम स्तर पर की जा रही है। बड़े नगरों के जल-मल से भी बायो-गैस संयंत्र चलाए जा सकते हैं।

निर्धूम चूल्हे

हमारे देश में ऊर्जा की सबसे अधिक खपत रसोई में होती है। ऊर्जा के लिए लकड़ी और कंडों का व्यापक रूप से उपयोग होता है। दुर्भाग्य से हमारे देश के पारंपरिक चूल्हों पर खाना बनाते समय बहुत-सा ईंधन बर्बाद हो जाता है। इस बरबादी से बचने के लिए निर्धूम चूल्हों का उपयोग शुरू किया गया है। सन् 1998 तक देश में 2 करोड़ 85 लाख उन्नत कार्य कुशल तथा निर्धूम चूल्हे बनाए गए थे। इन चूल्हों से 20 से लेकर 35 प्रतिशत तक जलाऊ लकड़ी की बचत होती है। दूसरे शब्दों में इन चूल्हों के उपयोग से प्रतिवर्ष लगभग 1 करोड़ 10 लाख टन जलाऊ लकड़ी बच जाती है। इनके द्वारा स्वास्थ्य के खतरे, जैसे आँखों की जलन से भी बचाव हो जाता है।

सौर ऊर्जा

सूर्य, ऊर्जा का व्यापक रूप से उपलब्ध एवं नवीकरण योग्य स्रोत है। यह एक विशाल संभावनाओं वाला साधन है। इस संदर्भ में सौर चूल्हों का विकास एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। इनसे लगभग बिना किसी खर्च के भोजन बनाया जा सकता है। अब तक 5 लाख से अधिक सौर चूल्हे उपयोग में लाए जा रहे थे। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए छोटे और मध्यम दर्जे के सौर बिजलीघरों की भी योजना बनाई जा रही है। आजकल खाना पकाने, पानी गर्म करने, पानी के खारेपन को दूर करने, अंतरिक्ष ताप तथा फसलों को सुखाने में सौर ऊर्जा का सफलतापूर्वक उपयोग किया जा रहा है। यह भविष्य की ऊर्जा का स्रोत है, क्योंकि तब तक और खनिज तेल जैसे जीवाश्म ईंधन तो पूरी तरह समाप्त हो जाएगें।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए –
   (क) हमारे देश के औद्योगीकरण में ऊर्जा का क्या महत्त्व है ?
   (ख) ऊर्जा के खनिज संसाधनों के नाम बताइए।
   (ग) कोयले, खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस को जीवाश्म ईंधन क्यों कहते हैं ? इनसे ऊर्जा प्राप्त करने के दो मुख्य अवगुण कौन से हैं ?
   (घ) ऐसा सोचने का क्या कारण है कि भारत में परमाणु ऊर्जा का महत्त्व दिनों-दिन बढ़ता ही जाएगा ?

(ङ) वे कौन से खनिज है जिनमें (i) भारत बहुत संपन्न हैं या (ii) जिनका भारत में अभाव है ?

2. निम्नलिखित दो स्तंभों में से सही जोड़े बनाइए —

(क) अभ्रक	मिश्रित इस्पात
(ख) बाक्साइट	बिजली उद्योग
(ग) लिग्नाइट	बिजली का उत्पादन
(घ) कोकिंग कोयला	परमाणु ऊर्जा
(ङ) मैंगनीज	उर्वरक उद्योग
(च) प्राकृतिक गैस	अल्युमिनियम उद्योग
(छ) यूरेनियम	लौह तथा इस्पात उद्योग

3. निम्नलिखित में से उस विकल्प पर चिह्न लगाइए जो अशुद्ध है —

एक बड़ा जल विद्युत शक्ति केंद्र

(क) शीघ्र और सरलता से स्थापित किया जा सकता है

(ख) ऊर्जा के नवीकरण योग्य साधनों का उपयोग करता है

(ग) प्रदूषण मुक्त ऊर्जा का उत्पादन करता है

(घ) बनाने के बाद चालू रखने में कम खर्च आता है।

4. ऊर्जा के परंपरागत तथा गैर-परंपरागत स्रोतों की तुलना कीजिए।

5. भारत में लौह अयस्क तथा कोयले के भंडारों के विवरण का वर्णन कीजिए।

6. निम्नलिखित बातों का ध्यान रखते हुए खनिज तेल और प्राकृतिक गैस के भंडारों के विषय में एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए

(क) निक्षेपों के संभावित क्षेत्र (ग) मांग और उपभोग में वृद्धि

(ख) उत्पादन की प्रवृत्तियां (घ) परिष्करण उद्योग

7. कक्षा में विचार-विमर्श के लिए

कक्षा में निम्नलिखित में से किसी एक विषय पर विचार-विमर्श कीजिए —

(i) ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोतों का महत्त्व।

(ii) भारत में परमाणु ऊर्जा की संभावनाओं के गुणावगुण।

मानचित्र कार्य

8. भारत के रेखा-मानचित्र पर निम्नलिखित दिखलाइए —

(क) भारत में तेल-परिष्करणशालाएँ

(ख) अभ्रक-उत्पादन के तीन प्रमुख क्षेत्र

(ग) बैलाडिला की लौह अयस्क खानें और उन्हें विशाखापत्तनम से जोड़ने वाली परिवहन लाईन

(घ) तमिलनाडु के लिग्नाइट निक्षेप

(ङ) दामोदर घाटी के कोयले-भंडार।

खंड तीन

कृषि और उद्योग

हम अपने भौतिक पर्यावरण का सर्वेक्षण कर चुके हैं और हमने प्रकृति से प्राप्त संसाधनों का अध्ययन भी कर लिया है। आइए अब हम देखें कि उनका कितना और किस गति से उपयोग करने में हम समर्थ हो सके हैं।

चलवासी जीवन के अंत से लेकर आज तक, भारत में समृद्ध कृषि की एक लंबी और गौरवपूर्ण परंपरा चली आ रही है। इसी समृद्ध कृषि के द्वारा स्थाई श्रम विभाजन के आधार पर आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास हुआ है। लेकिन अब हम इसके विपरीत दिशा में बढ़ रहे हैं। इस परिवर्तन के पीछे विश्वव्यापी मूल्य व्यवस्था की प्रेरक शक्ति काम कर रही है। इसमें सामाजिक न्याय तथा प्रादेशिक श्रम विभाजन पर आधारित सामाजिक गतिशीलता सम्मिलित है। तेजी से सिकुड़ती इस दुनिया में गाँव ही नहीं अपितु देश भी एक अर्थहीन इकाई हो गए हैं। आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी का बड़ी तेजी से निरंतर चहुँमुखी विकास हो रहा है। इनसे प्राप्त ज्ञान का उपयोग करना हमारे लिए अनिवार्य हो गया है।

आज भारतीय कृषि अपने निर्वाह स्वरूप को छोड़कर व्यापारिक कृषि के एक बिलकुल भिन्न क्षेत्र में कदम रख रही है। निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आज हम मृदा की उर्वरता को बनाए रखने के परंपरागत तरीकों को छोड़ने के लिए विवश हो गए हैं। खाद का स्थान रासायनिक उर्वरक ले रहे हैं। कम उपजाऊ भूमि पर भी खेती शुरू कर दी गई है। अत्यंत शुष्क क्षेत्रों में भी बड़े पैमाने पर सिंचाई की जाने लगी है, जिससे पुराने परितंत्रों में परिवर्तन हो रहे हैं। इन सबका क्या परिणाम होगा यह अभी पता लगाना बाकी है। संपन्न किसानों के साथ प्रतिस्पर्धा में न टिक पाने के कारण छोटे किसान गाँव छोड़कर जाने लगे हैं। कृषि का उत्पादन लगभग तिगुना हो गया है। लेकिन जनसंख्या की वृद्धि को देखते हुए इसे एक बार फिर तिगुना करना होगा, क्योंकि देश की जनसंख्या आशा के अनुसार शायद अगले 4 या 5 दशकों में ही स्थिर हो पाएगी।

विकासशील कृषि की विस्तृत नींव पर हम उद्योगों का विशाल भवन खड़ा करने में लगे हुए हैं। गाँवों में ऐसे अनेक लोग हैं जिनका भरण-पोषण खेती के द्वारा कठिन होता जा रहा है। गाँव से आए ऐसे अनेक लोगों को उद्योगों में रोजगार मिल रहा है। कृषि और खनिज संसाधनों को और अधिक मूल्यवान बनाने में उद्योग सहायता कर रहे हैं। कृषि की अपेक्षा उद्योग राष्ट्रीय संपदा को अधिक तेजी से बढ़ाते हैं। औद्योगीकरण की अनिवार्य प्रक्रिया में तेजी लाने के कारण कोयला, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस जैसे ऊर्जा के संसाधनों की माँग बहुत बढ़ गई है। ये जीवाश्म ईंधन अनापूर्ति या अपूर्य संसाधन हैं। तेजी से औद्योगीकरण होने के कारण नगरीकरण में भी बहुत तेजी आई है। जनसंख्या में तीव्र वृद्धि से इसे और भी बल मिला है। औद्योगीकरण और नगरीकरण से पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है तथा पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ रहा है। इस प्रकार औद्योगीकरण तथा नगरीकरण की दोहरी चुनौतियों का सामना करने के लिए अच्छी तरह से सोच विचार कर बनाई गई नीतियों की आवश्यकता है, जिससे पर्यावरण की समुचित देखभाल सुनिश्चित हो सके तथा प्राकृतिक संसाधनों के विनाश और बर्बादी को रोका जा सके। पर्यावरण का दोहन इस प्रकार करना ही होगा कि यह सदैव ठीक बना रहे। ऊर्जा के नवीकरण योग्य तथा अक्षय साधनों के उपयोग पर अधिक बल देना होगा। मृदा, जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण को हर कीमत पर रोकना होगा।

अध्याय 6

कृषि

भारत मुख्य रूप से एक कृषि प्रधान देश है। भारतीय समाज एक खेतीहर समाज है। कृषि इसकी अर्थव्यवस्था का मूल आधार रहा है। भारत की लगभग 64 प्रतिशत जनसंख्या की जीविका का आधार कृषि ही है। यह अलग बात है कि कुल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि का योगदान निरंतर घट रहा है। सन् 1951 और 1956 के बीच कृषि से कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 60.5 प्रतिशत भाग मिलता था। 1998-99 के आंकड़ों के अनुसार यह घटकर 27.4 प्रतिशत रह गया है फिर भी आने वाले वर्षों में कृषि का महत्त्व कम नहीं हो सकता है। यह हमारी बढ़ती हुई जनसंख्या को अन्न प्रदान करती है। इसकी मुख्य विशेषता है कि यह हमारी दो-तिहाई जनसंख्या का भरण-पोषण करती है। इससे कृषि-आधारित उद्योगों को कच्चा माल मिलता है। इन उद्योगों का राष्ट्रीय आय में भारी योगदान है तथा इनमें बड़ी संख्या में लोगों को रोजगार देने की संभावनाएँ छिपी हैं। भारतीय कृषि की विस्तृत नींव पर उद्योगों का भवन तैयार हो रहा है। 1950-51 में, खाद्यान्नों के अंतर्गत क्षेत्र 76.7 प्रतिशत था। 1994-95 में यह घटकर 66.9 प्रतिशत रह गया है। इससे स्पष्ट होता है कि तीव्र औद्योगीकरण के प्रति कटिबद्ध हमारे समाज की बदलती जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि के क्षेत्र में विविधता लाने के लिए हम कितने कृत संकल्प हैं।

कृषि के अंतर्गत खेती के अलावा पशुपालन, मत्स्यन और वानिकी भी शामिल हैं। स्वतंत्रता के बाद भारतीय कृषि का बड़ी तेजी से विकास हुआ है। खाद्यान्नों का उत्पादन तिगुना हो गया है। देश के विभाजन के कारण जूट और कपास के उत्पादन में आई कमी को पूरा कर लिया गया है। यह सब देश के परिश्रमी किसानों, अनुकूल जलवायु और उपजाऊ मिट्टी के कारण संभव हो सका है। संसार के कुल क्षेत्रफल का केवल 11 प्रतिशत भाग कृषि योग्य है, लेकिन सौभाग्य से भारत के 51 प्रतिशत क्षेत्रफल में खेती करना संभव है। संसार के अधिकतर देशों में केवल एक ही फसल पैदा की जाती है, लेकिन भारत में दो फसलें उगाई जा सकती हैं। भारत के क्षेत्रफल का वह भाग जो सिंचाई के अंतर्गत लाया जा सकता है, वह चीन के कुल कृषि योग्य क्षेत्रफल के लगभग बराबर है।

इतना सब कुछ होते हुए भी भारतीय कृषि की कुछ मूलभूत समस्या है। भारतीय कृषि की क्षमताओं और कमजोरियों को समझने के लिए नीचे लिखे अभ्यासों को कीजिए।

स्वयं करने के लिए

सारणी 6.1 का अध्ययन कीजिए और उसके नीचे दिए गए प्रश्नों का उत्तर दीजिए —

सारणी 6.1

1985 में कुछ एशियाई देशों में अनाज की प्रति हैक्टेयर उपज

(किलोग्राम में)

1.	जपान	5,848	4.	बांग्लादेश	2,098
2.	चीन	3,821	5.	पाकिस्तान	1,570
3.	मलेशिया	2,781	6.	भारत	1,560

(i) निम्नलिखित में से कौन से कारण भारत में प्रति हैक्टेयर उपज कम होने के लिए उत्तरदाई हैं ?

(क) वर्षा का अनिश्चित वितरण

(ख) जनसंख्या के उच्च दबाव के कारण सीमांत भूमि को भी उपयोग में लाने की मजबूरी

(ग) कई मध्यम और निम्न उपज वाले अनाजों जैसे मोटे और छोटे अनाजों का मिश्रण

(घ) सिंचाई की समुचित सुविधाओं की कमी

(ii) भारत में अब अनाज की प्रति हैक्टेयर उपज कितनी है, यह पता कीजिए। इससे आपको क्या संकेत मिलते हैं ?

2. सारणी 6.2 का अध्ययन कीजिए और दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए —

सारणी 6.2

कुछ चुने हुए कृषि विकास कार्यक्रमों की प्रगति

(1971-1997)

कार्यक्रम	क्षेत्रफल (दस लाख हैक्टेयर)	वर्ष 1970-71	1990-91	1996-97
(i) अधिक उपज देने वाली किस्मों के अंतर्गत कुल क्षेत्रफल	"	15.4	65.0	76.4
(ii) सिंचित क्षेत्र—कुल	"	38.0	70.8	80.7
(क) मुख्य और मध्यम	"	17.3	26.0	28.4
(ख) गौण	"	20.7	44.8	52.3
(iii) मृदा संरक्षण	"	13.4	34.9	39.3
(iv) उर्वरक उपभोग	(दस लाख टन)	2:2	12.5	14.3

(i) मुख्य एवं मध्यम सिंचाई तथा गौण सिंचाई (जिसमें भौम जल का उपयोग भी सम्मिलित है) के अंतर्गत क्षेत्रफल में पिछले 27 वर्षों में हुई वृद्धि की तुलना कीजिए। इन दोनों में से किसकी भूमिका मुख्य थी ? इसके कारण बताइए।

(ii) अधिक उपज वाली बीजों की किस्मों और उर्वरकों के उपयोग ने किस प्रकार प्रति हैक्टेयर उपज को तेजी से बढ़ाने में अपना योगदान दिया है, इसकी व्याख्या कीजिए।

3. सारणी 6.3 का अध्ययन कीजिए और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए —

सारणी 6.3

1960-61 से 1996-97 तक प्रति हैक्टेयर उपज में वृद्धि

(किलोग्राम में)

	1960-61	1980-81	1996-97
1. अनाज	753	1,142	1,831
(क) चावल	1,013	1,342	1,882
(ख) गेहूँ	851	1,630	2,679
(ग) ज्वार	533	660	956
(घ) बाजरा	286	458	788
(ङ) मक्का	926	1,159	1,720
2. दालें	539	473	635
3. खाद्यान्न	710	1,023	1,614
4. तिलहन	507	532	926
5. कपास	125	152	265
6. जूट एवं मेस्टा	1,049	1,130	1,818

(i) उस एक अनाज का नाम बताइए जिसके प्रति हैक्टेयर उपज में सर्वाधिक वृद्धि हुई है।

(ii) भारतीय कृषि के आधुनिक इतिहास में इसका क्या परिणाम हुआ ?

(iii) फसलों के कौन से दो वर्ग ऐसे हैं जिनकी उत्पादकता अनाजों की तुलना में अधिक नहीं बढ़ी है ?

(iv) रेशे वाली दोनों फसलों में से किसकी उत्पादकता बेहतर हुई है ?

(v) उपज में वृद्धि के क्रम में अनाजों की सूची बनाइए।

(vi) दालों और तिलहनों के विषय में अपने निष्कर्ष निकालिए।

4. सारणी 6.4 का अध्ययन कीजिए और दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए —

सारणी 6.4

कुछ देशों में कृषि-जोतों का औसत आकार

	देश	वर्ष	हैक्टेयर
1.	आस्ट्रेलिया	1970	1992.58
2.	मिस्र	1960	1.59
3.	फ्रांस	1970	22.07
4.	भारत	1970	2.3
5.	जापान	1970	1.01
6.	संयुक्त राज्य अमेरिका	1969	157.61
7.	जायरा (कांगो)	1970	1.06

(i) उन चार देशों की सूची बनाइए जिनकी कृषि-जोतों का औसत-आकार बड़े से छोटे के क्रम में ऊपर है।

(ii) उन देशों के नाम बताइए जहाँ जोतों का औसत आकार भारत की जोतों से छोटा है।

(iii) बहुत बड़े तथा बहुत छोटे आकार की जोतों के गुणों-दोषों की तुलना निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखकर कीजिए :

(क) आर्थिक रूप से लाभकारी

(ख) गहन तथा विस्तृत कृषि

(ग) व्यापारिक और निर्वाह कृषि

(घ) मशीनीकरण

(ङ) खेती की श्रम की बचत करने वाली और अधिक श्रम वाली विधियां

(च) संबंधित सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था

5. सारणी 6.5 का अध्ययन कीजिए। नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए —

सारणी 6.5

कृषि गणना (1970-71) के आधार पर आकार के अनुसार कार्यशील जोतों की कुल संख्या तथा क्षेत्रफल

आकार वर्ग (हैक्टेयर)		संख्या (दस लाख में)	प्रतिशत	क्षेत्रफल (दस लाख हैक्ट.)	कृषि योग्य का प्रतिशत
1.	0.5 से कम	23.28	32.9	5.44	3.9
2.	05.-0.1	12.18	17.7	9.10	5.6
3.	1.0-2.0	13.43	19.1	19.30	12.0
4.	2.0-3.0	6.72	9.5	16.35	10.0
5.	3.0-4.0	3.96	5.6	13.64	8.4
6.	4.0-5.0	2.68	3.8	11.93	7.4
7.	5.0-10.0	5.25	7.4	36.30	22.4
8.	10.0-20.0	2.13	3.0	28.52	17.7
9.	20.0-30.0	0.40	0.6	9.34	5.9
10.	30.0-40.0	0.12	0.2	4.18	2.6
11.	40.0-50.0	0.04	0.1	2.05	1.3
12.	50.0 से अधिक	0.06	0.1	5.97	3.8
	संपूर्ण भारत का जोड़	70.25	100.0	162.12	100.0

(i) भारत में सबसे छोटे आकार की जोतों की संख्या तथा प्रतिशत लिखिए। इन जोतों का कुल क्षेत्रफल भारत के कृषि योग्य क्षेत्रफल का कितने प्रतिशत है? निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए अपने निष्कर्ष निकालिए :

(क) आर्थिक लाभ-हानि
(ख) भूमि पर जनसंख्या का दबाव
(ग) तीव्र नगरीकरण में कारक
(घ) ग्रामीण निर्धनता
(ङ) छिपी बेरोजगारी और अल्प रोजगार
(च) ऋण, पूंजी निवेश (लागत) तथा प्रौद्योगिकी का उपयोग
(छ) सहकारिता आंदोलन
(ज) संभावित कृषि का प्रकार

(ii) एक हैक्टेयर (पहली तथा दूसरी पंक्ति) से कम क्षेत्रफल वाली जोतों एवं 20 से 50 हैक्टेयर या अधिक वाली (9 से 12 पंक्तियाँ) जोतों के लिए उपर्युक्त अभ्यास कीजिए।

(iii) भूमि के असमान वितरण तथा इससे उत्पन्न होने वाली सामाजिक आर्थिक समस्याओं पर एक टिप्पणी लिखिए।

6. सारणी 6.6 का अध्ययन कीजिए और नीचे दिए प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

सारणी 6.6

भारत की हरित क्रांति के विषय में कुछ तथ्य
(प्रथम चरण-1970-71-1985-86)

(क) प्रति व्यक्ति आय (1985-96) (1970-71 के मूल्यों के अनुसार)
भारत – 779 रुपए
पंजाब – 1600 रुपए

(ख) कृषि का व्यापारिक स्वरूप
(1) धान – राज्य सरकार की एजेन्सियों द्वारा कुल उत्पादन के 85.7 प्रतिशत धान (चावल) की खरीद।
(2) गेहूँ – राज्य सरकार की एजेन्सियों द्वारा कुल उत्पादन के 57.3 प्रतिशत गेहूँ की खरीद।

(ग) कृषि का मशीनीकरण
(1) देश में ट्रैक्टरों की कुल संख्या का 1/3 भाग अकेले पंजाब में
(2) जुताई, बुवाई तथा गहाई का लगभग मशीनीकरण
(3) पशुओं के स्थान पर मशीनों का उपयोग

(घ) सिंचाई
(1) मशीन चालित नलकूपों द्वारा सुनिश्चित सिंचाई
(2) सिंचाई संकेतक
1970-71 : बोए गए शुद्ध क्षेत्र का 71 प्रतिशत बोए गए कुल क्षेत्र का 75 प्रतिशत
1985-86 : बोए गए शुद्ध क्षेत्र का 88 प्रतिशत बोए गए कुल क्षेत्र का 91 प्रतिशत
(3) राष्ट्रीय सिंचाई संकेतक 28 प्रतिशत (1988)

(च) अधिक उपज देने वाले बीजों के अंतर्गत क्षेत्र.
गेहूँ 100 प्रतिशत
चावल 95 प्रतिशत

(छ) उर्वरकों का उपयोग
1970-71 = 2,13,000 न्यूट्रिएण्ट टन
1985-86 = 10,98,000 न्यूट्रिएण्ट टन

(ज) फसलों की गहनता का संकेत 1.87 (प्रतिवर्ष लगभग दो फसलें)

(झ) गेहूँ का प्रति हैक्टेयर उत्पादन (1985-86)
भारत = 2032 किलोग्राम
पंजाब = 3531 किलोग्राम

(ट) कार्यशील भू-जोतों के आकार में परिवर्तन
(1) 10 हैक्टेयर से अधिक की जोतें = 7.3 प्रतिशत
इनके अंतर्गत आने वाला कुल क्षेत्र = 29.2 प्रतिशत
(2) सीमान्त कृषक = कुल 38.6 प्रतिशत
उनके द्वारा जोता गया क्षेत्र = केवल 10 प्रतिशत

(ठ) खेतिहर मजदूर
1971 = 32.06 प्रतिशत
1981 = 38.19 प्रतिशत
वृद्धि के कारण
(1) ग्रामीण शिल्पकारों के व्यवसाय में परिवर्तन
(2) काश्तकारों का इच्छानुसार मजदूर बनना
(3) बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश से श्रमिकों का भारी संख्या में अन्य राज्यों में प्रवास।

(ड) गरीबी की रेखा से नीचे के किसान (1979-80)
24 प्रतिशत छोटे किसान 31 प्रतिशत सीमान्त कृषक

(ढ) एक दशक में

सीमान्त जोतों में कमी	61.9 प्रतिशत
छोटी जोतों में कमी	23.3 प्रतिशत
कार्यशील जोतों की संख्या में कमी	3,84,000

उपर्युक्त सारणी के आधार पर निम्नलिखित कार्य करें —
(i) हरित क्रांति की विशेषताओं की सूची बनाइए।
(ii) कारण ज्ञात कीजिए कि हरित क्रांति का प्रभाव भारत के केवल उत्तर-पश्चिमी भाग पर ही पड़ा है और वह भी विशेष रूप से केवल गेहूँ की फसल पर।
(iii) हरित क्रांति के सामाजिक, आर्थिक प्रभावों की विवेचना कीजिए।

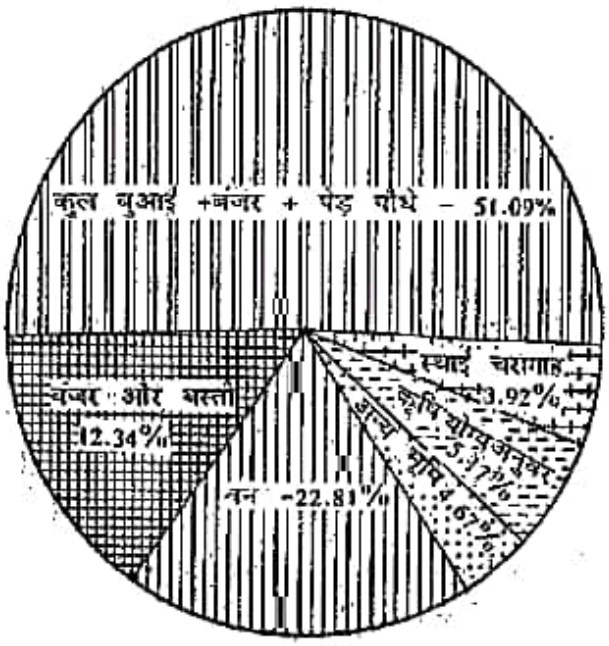

चित्र 6.1 भूमि–उपयोग प्रारूप.
भूमि के विभिन्न उपयोगों को देखिए। प्रतिशत के आधार पर उन्हें बढ़ते क्रम में लिखिए।

भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याएँ

संभवतः भारतीय कृषि की सबसे बड़ी समस्या जनसंख्या का भारी दबाव है। 300 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर के औसत जनसंख्या घनत्व के कारण भूमि के लिए भूख बढ़ती ही जा रही है। हर प्रकार की सीमांत भूमि यहाँ तक कि अनुपजाऊ भूमि को भी खेतों में बदला जा चुका है। पहाड़ों पर उसके सर्वोपरि भागों तक सीढ़ीवार खेत बन गए हैं। वनों के वृक्षों को निर्दयतापूर्वक काट डाला गया है। कृष्य (खेतीवाली) भूमि का प्रति व्यक्ति औसत घटकर केवल 1/5 हैक्टेयर रह गया है। और जब हमारी जनसंख्या दुगनी हो, जैसा कि हर 35 सालों में होता है, यह और घटकर मात्र 1/10 हैक्टेयर रह जाएगा। वर्तमान स्थिति यह है कि अधिकतर जोतें छोटी हैं। सबसे बुरी बात उनका असमान वितरण है जिससे सामाजिक तनाव, हिंसा और असंतोष पैदा

ही रहा है। एक-तिहाई जोतों का आकार आधे हैक्टेयर से भी कम है। इन जोतों में कृषि योग्य भूमि का केवल 3.9 प्रतिशत क्षेत्रफल ही आता है। इसके विपरीत, 10 से 50 या अधिक हैक्टेयर वाली जोतों की संख्या केवल 4 प्रतिशत है, लेकिन उनका कुल क्षेत्रफल कृष्य भूमि का 31 प्रतिशत है।

इस प्रकार अधिकतर किसानों की जोतें आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं हैं। इन छोटी जोतों के कारण ही भारतीय कृषि निर्वाह कृषि बनी हुई है। इसमें गरीब किसान अपना और अपने बड़े से परिवार का पेट भरने के लिए रात दिन कड़ी मेहनत करता है। इसीलिए कई दशकों से भारतीय कृषि की प्रगति रुकी हुई है।

वनों और चारागाहों के कम हो जाने के कारण मृदा की प्राकृतिक उर्वरता बनाए रखने के स्रोत भी सूखते जा रहे हैं। भौतिक साधनों की कमी तथा वैज्ञानिक तकनीकों के विषय में अज्ञानता के कारण मृदा की प्राकृतिक उर्वरता और भी घटती जा रही है। एक समय ऐसा भी था जब पशु अवशिष्ट भूमि की उर्वरता बनाए रखने के लिए काफी था। परन्तु अब देश में जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ कृषि उत्पादों की माँग बढ़ती जा रही है। इन परिस्थितियों में निर्वाह कृषि की विधि सार्थक नहीं रह गई है। हम उस दौर से गुजर रहे हैं जब भारतीय कृषि अपने निर्वाह स्वरूप को छोड़कर व्यापारिक कृषि बनती जा रही है जो विविध वैज्ञानिक तकनीकों तथा आर्थिक साधनों पर आधारित है। इसीलिए कृषि के हर कदम पर खेतों में जुताई से लेकर कटाई-गहाई और भंडारण तक, परिवर्तन जरूरी हो गया है।

सबसे पहले जोतों का आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होना बहुत आवश्यक है। इस दिशा में चकबंदी जैसा तरीका पहला कदम है। यही नहीं, भविष्य में होने वाले जोतों के बंटवारे को भी रोकना चाहिए। छोटे किसानों को खेतों की जुताई के लिए सहकारिता के आधार पर ट्रैक्टरों का उपयोग करना चाहिए। खेतों की जुताई भी वैज्ञानिक रीति से करनी जरूरी है। उदाहरण के लिए शुष्क कृषि में मेंड बन्दी तथा समोच्च रेखीय जुताई बहुत लाभकारी होती है। इससे मृदा में नमी बनी रहती है और उसका अपरदन भी नहीं होता है।

रसायनों द्वारा संसाधित तथा अधिक उपज देने वाले बीजों के उपयोग से भरपूर फसल होती है। सरकार व्यापारिक स्तर पर उन्नत किस्म के बीज उपलब्ध करवा रही है। हमारे कृषि वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों से ही उन्नत किस्म के बीजों का विकास संभव हो पाया है। विभिन्न प्रकार की जलवायु तथा विविध प्रकार की मृदाओं में प्रयोग करके ही उन्हें यह सफलता मिली है। कीड़ों, नाशक जीवों, फफूँद तथा खर-पतवार से फसलों को बचाने के लिए अब कीटनाशक, नाशकमार, फफूँद नाशी तथा खरपतवार नाशक दवाएँ उपलब्ध हैं।

सैकड़ों वर्षों से खेती होने के कारण मृदा की प्राकृतिक उर्वरता घटती जा रही है। उर्वरता बनाए रखने तथा बढ़ाने के लिए हरी तथा गोबर जैसी जैव खादों के साथ-साथ खेतों में उपयुक्त रासायनिक उर्वरकों का उचित मात्रा में उपयोग भी आवश्यक हो गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अब मृदा परीक्षण की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

बहुफसली खेती, मिश्रित खेती, पट्टीदार खेती तथा फसलों के वैज्ञानिक हेर-फेर को अपनाना भी बहुत जरूरी है। इस प्रकार पैदावार बढ़ाई जा सकती है तथा मृदा की उर्वरकता को भी बनाए रखा जा सकता है। मृदा की उर्वरता में और कमी होना, हमारी 5,000 वर्षों से अधिक पुरानी सभ्यता के लिए घातक होगा।

खेती की पैदावार बढ़ाने में कृषि-उपकरणों का भी बड़ा भारी योगदान है। इनसे न केवल उपज ही बढ़ती है, अपितु जुताई, बुवाई, निराई, कीटनाशकों और उर्वरकों के छिड़काव, सिंचाई, जलफुहार सिंचाई, कटाई, गहाई, परिवहन, तथा भंडारण में लगने वाले समय में भी काफी बचत होती है। आजकल भारतीय किसान ट्रैक्टरों, हार्वेस्टरों, कम्बाइनों, ट्रैक्टर ट्रालियाँ, जल पंपों तथा स्प्रिंकलरों का उपयोग करने लगे हैं। मंझोले आकार के जोतों की आवश्यकताओं को देखते हुए छोटे-छोटे कम शक्ति वाले ट्रैक्टर तथा ऐसे ही अन्य उपकरण भी बनने लगे हैं। कुछ कृषीय क्षेत्रों में एक ही वर्ष में एक के बाद एक करके तीन फसलें पैदा की जाती हैं। ऐसे क्षेत्रों में समय की बचत करना अनिवार्य हो गया है। उदाहरणार्थ कावेरी डेल्टा के तंजौर जिले में चावल की खरीफ की पहली फसल को जल्दी से काटकर सुखाना पड़ता है, ताकि दूसरी फसल समय पर बोई या रोपी जा सके, जिससे कि वह भी निश्चित ऋतु में पककर तैयार हो जाए। खाद्यान्नों का भंडारण भी एक बहुत बड़ी चुनौती है। हर साल कुल उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत भाग इस तरह नष्ट हो जाता है। अतः वैज्ञानिक रीति से भंडारण की सुविधाएँ उपलब्ध कराना अनिवार्य हो गया है और सरकार इस कार्य में लगी हुई है।

भारतीय कृषि में उपर्युक्त सभी निवेशों की सफलता बहुत हद तक समय पर और पर्याप्त मात्रा में सिंचाई की सुविधा मिलने पर निर्भर है। अगर जल की आपूर्ति सुनिश्चित न हो तो अधिक उपजने वाली किस्मों के बीज तथा रासायनिक उर्वरक बिलकुल बेकार हैं। विगत 50 वर्षों में भारत में खाद्यान्नों का उत्पादन लगभग चार-गुना हो गया है। सिंचित भूमि के क्षेत्रफल में भी काफी वृद्धि हुई है। अब खाद्यान्नों के अंतर्गत कुल भूमि के लगभग आधे भाग पर सिंचाई की जाती है। गेहूँ और गन्ना जैसी फसलें मुख्य रूप से सिंचाई की सहायता से ही उगाई जा रही है (लगभग 80 प्रतिशत भाग सिंचित है)।

कृषि को इसकी निर्वाह अवस्था से हटाकर आत्मनिर्भर और प्रगतिशील बनाने के लिए सरकार ने कई कदम उठाए हैं। जमींदारी प्रथा कानून बनाकर समाप्त कर दी गई है। इससे कृषक भूमि के स्वामी बन गए हैं। चकबंदी के द्वारा दूर-दूर बिखरे खेतों को बड़ी जोतों में बदला जा रहा है। सहकारिता आंदोलन को प्रोत्साहन दिया जा रहा है ताकि किसान मिलजुल कर स्वयं ही अपनी ऋण और उपज की बिक्री संबंधी समस्याओं को हल कर सकें। कृषि के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए प्रत्येक जिले में मार्गदर्शक बैंक खोले गए है। राष्ट्रीयकृत बैंक भी अब किसानों को अपेक्षाकृत आसान शर्तों पर ऋण देने लगे हैं। राष्ट्रीय बीज निगम, केंद्रीय भंडार निगम, भारतीय खाद्य निगम, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, कृषि-विश्वविद्यालयों, कृषि प्रदर्शन फार्मों, डेरी विकास बोर्ड तथा ऐसी ही दूसरी संस्थाएँ कृषि को उन्नत बनाने में लगी हैं। कृषि प्रदर्शन फार्मों ने निम्न स्तरों पर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कृषि मूल्य आयोग उपजों के लाभकारी मूल्य निर्धारित करता है। इस तरह सरकार विभिन्न फसलों का समर्थन मूल्य निर्धारित कर देती है, जिससे किसानों को मजबूरी में अपनी उपज कम कीमत में नहीं बेचनी पड़े। खेती के कामों के लिए सिंचाई और बिजली की सुविधाओं में काफी प्रगति हुई है। जहाँ भी फसलों के

मूल्य बढ़ाकर उन्हें लाभकारी बनाया गया है, कृषकों ने उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाकर सकारात्मक प्रतिक्रिया दिखाई है। भारत की दो-तिहाई जन शक्ति कुल राष्ट्रीय उत्पादन में केवल 1/3 का योगदान देती है। इस तथ्य पर सावधानी से तथा सहानुभूतिपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। किसी भी देश के लिए जो अभी भी कृषि-प्रधान और कृषक समाज देश है और जहाँ सामूहिक हित की भावना सर्वोपरि है। कोई भी उपाय महंगा नहीं कहा जा सकता।

कृषीय ऋतुएँ

भारत में जब ग्रीष्म ऋतु अपनी चरम सीमा पर होती है, खेती के काम रुक जाते हैं। मानसून-पूर्व की बौछारों के साथ खेती के काम धंधे फिर से शुरू हो जाते हैं। किसान खेतों की जुताई प्रारंभ कर देते हैं तथा धान की रोपाई के लिए पौधे बोकर वर्षा की प्रतीक्षा करने लगते हैं। वर्षा के शुरू होते ही जून तथा जुलाई के आरंभ में वे अपनी खरीफ की फसलें बो देते हैं। मानसूनी वर्षा की समाप्ति तक ये पक कर तैयार हो जाती हैं। चावल, ज्वार-बाजरा, मक्का, मूंगफली, जूट और कपास खरीफ की मुख्य फसलें हैं। इस ऋतु में दालें भी पैदा की जाती हैं। कुछ दालों, जैसे अरहर को पकने के लिए काफी लंबी अवधि की आवश्यकता होती है।

इसके बाद रबी की ऋतु शुरू हो जाती है। इस ऋतु की फसलें मुख्यतया अव-मृदा की नमी पर निर्भर रहती हैं। इस ऋतु की फसलें नवंबर में बोई जाती हैं तथा अप्रैल-मई में काट ली जाती हैं। गेहूँ, चना और सरसों तथा तोरिया जैसे तिलहन रबी की मुख्य फसलें हैं।

इन दो मुख्य ऋतुओं के अतिरिक्त सिंचित क्षेत्रों में एक छोटी अवधि की फसली ऋतु प्रारंभ हुई है, इसमें जल्दी पकने वाली फसलें बोई जाती हैं। मूंग और उड़द इस ऋतु की बहुप्रचलित फसलें हैं। ये भोजन में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाने में मदद करते हैं।

यह कथन बिलकुल सच है कि संसार में पैदा होने वाले सभी अनाज, दालें, फल और सब्जियाँ, यहाँ तक कि रेशेदार फसलें भी भारत में पैदा की जा सकती हैं। आइए सबसे पहले खाद्यान्नों पर विचार करते हैं जिनमें अनाज और दाल सम्मिलित हैं। अन्य फसलों जैसे तिलहन, गन्ना, आलू, मसालों, फलों आदि के अध्ययन से पहले राष्ट्रीय खाद्यान्न बजट पर थोड़ा सा विचार करना उचित होगा। पेय तथा रेशे वाली फसलें भी भारतीय कृषि में बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

खाद्यान्न

चावल

चावल भारत की एक मुख्य खाद्यान्न फसल है। उष्ण कटिबंधीय पौधा होने के कारण गर्म और आर्द्र जलवायु में खूब पनपता है। इसीलिए भारत में यह मुख्य रूप से खरीफ ऋतु की फसल है। इसे 25° सें. से अधिक तापमान तथा 100 सें.मी. से अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है। मानचित्र में 100 सें.मी. की सम वर्षा रेखा को देखिए। यह चावल के मुख्य उत्पादन क्षेत्रों को स्पष्ट रूप से सीमांकित कर देती है। इसके अंतर्गत ये क्षेत्र आते हैं — (1) पश्चिमी तटीय पट्टी, (2) प्रमुख डेल्टा प्रदेशों सहित पूर्वी तटीय पट्टी, (3) असम मैदान और उसके निकटवर्ती निम्न पहाड़ियाँ, (4) हिमालय की गिरीपाद पहाड़ियाँ तथा तराई प्रदेश, तथा (5) पश्चिम

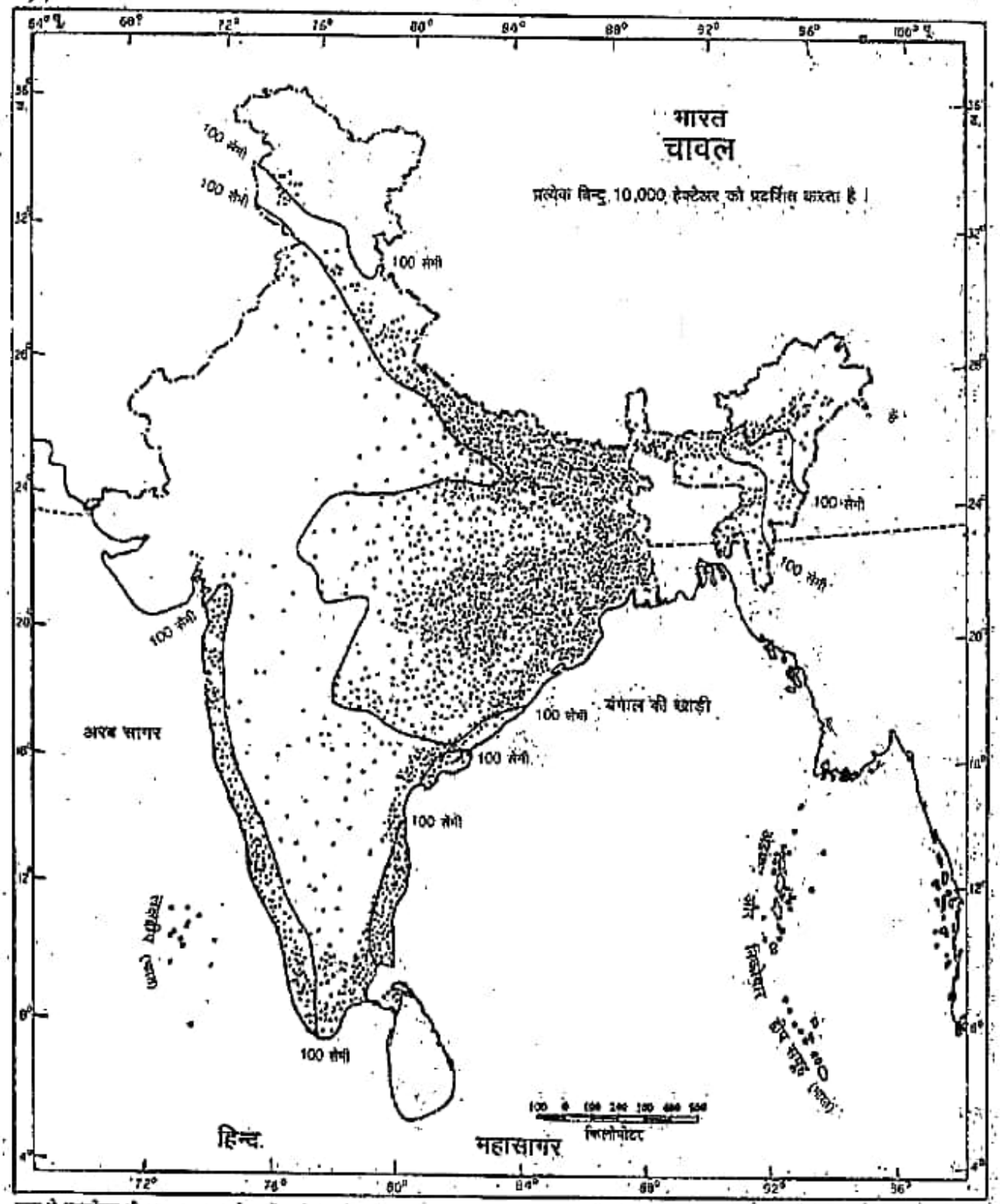

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 6.2 भारत–चावल का वितरण

ध्यान दीजिए कि चावल की खेती मुख्यतः तटीय पट्टियों, विशेष रूप से डेल्टाई प्रदेशों और 100 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में ही सीमित है। कुछ ऐसे क्षेत्र जहाँ सिंचाई की अच्छी सुविधा प्राप्त है, वहाँ भी इसकी खेती होती है।

बंगाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, पूर्वी मध्य प्रदेश, उत्तरी आंध्र प्रदेश एवं सम्पूर्ण उड़ीसा।

भारत का चावल का क्षेत्रफल संसार में सबसे अधिक है। लेकिन चावल के उत्पादन में चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान है। सन् 1950-51 में 3 करोड़ हैक्टेयर भूमि पर चावल बोया गया था। 1997-98 में यह बढ़कर 4 करोड़ 34 लाख हैक्टेयर हो गया था। इस अवधि में चावल का उत्पादन 2.5 करोड़ टन से बढ़कर 8 करोड़ 23 लाख टन हो गया। चावल की प्रति हैक्टेयर उपज भी काफ़ी बढ़ गई है। यह 668 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर से बढ़कर 1,895 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर हो गई है। यह वृद्धि लगभग 2½ गुनी है। पश्चिम बंगाल 1 करोड़ 32 लाख टन चावल का उत्पादन करके देश में प्रथम स्थान पर है। 1 करोड़ 25 लाख टन चावल का उत्पादन करके उत्तर प्रदेश इसके बाद दूसरे स्थान पर है। इसके बाद क्रमशः आंध्र प्रदेश, पंजाब और तमिलनाडु का स्थान है। चावल के कुल उत्पादन तथा प्रति हैक्टेयर उपज में चीन हमसे काफ़ी आगे है।

हमारा देश निरंतर वर्धन काल वाला देश है। कावेरी, कृष्णा, गोदावरी और महानदी के डेल्टा क्षेत्रों में सिंचाई की नहरों का सघन जाल बिछा हुआ है। यहाँ के किसान एक वर्ष में दो और कहीं-कहीं तीन फसलें भी उगाते हैं। हरियाणा और पंजाब की जलवायु शुष्क है, लेकिन सिंचाई की सुविधाओं ने यहाँ भी चावल की खेती को संभव बना दिया है। ये राज्य अपना अतिरिक्त चावल अन्य राज्यों को भेज देते हैं। पंजाब और हरियाणा में विदेशों को निर्यात के लिए उत्तम कोटि का चावल पैदा किया जाता है। कश्मीर से लेकर असम तक, पहाड़ी सीढ़ीदार खेत अपनी पुरानी सिंचाई-व्यवस्था की सुविधाओं के साथ चावल की खेती के लिए उपयुक्त हैं। अधिक उपज देने वाली किस्मों, रोपाई की सुधरी तकनीकों, सुनिश्चित सिंचाई सुविधाओं तथा उर्वरकों के उपयोग से कम समय में ही अच्छे परिणाम निकले हैं। जो प्रदेश सिर्फ वर्षा पर निर्भर हैं इसके कारण प्रति हैक्टेयर औसत उपज कम हो जाती है।

गेहूँ

गेहूँ की कहानी चावल से भी अधिक प्रभावशाली है। गेहूँ भारत की प्राचीनतम फसलों में से है। लगभग 4,000 साल पहले गेहूँ दक्षिण-मध्य, एशिया विशेष रूप से पूर्वी भूमध्य सागर तथा पश्चिमी एशिया से यहाँ लाया गया था। उत्तरी मैदान की दोमट मिट्टियों में जिसमें पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उसी क्रम में शामिल हैं, गेहूँ की उपज अच्छी होती है। मध्य प्रदेश में भी गेहूँ खूब होता है। गेहूँ के गौण क्षेत्र हैं उत्तर प्रदेश के शेष भाग, बिहार, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र। लेकिन गेहूँ मुख्य रूप से उत्तर भारत की फसल है।

गेहूँ के बोने के समय शीतल तथा आर्द्र और पकने के समय कोष्ण एवं शुष्क जलवायु होनी चाहिए। 50 सें.मी. से लेकर 75 सें.मी. तक की वार्षिक वर्षा इसके लिए उपयुक्त है। इन आवश्यकताओं को देखते हुए रबी की ऋतु गेहूँ के लिए उत्तम है। शीतकालीन वर्षा की बौछारों या सुनिश्चित सिंचाई की सुविधाओं से इसकी भरपूर फ़सल होती है। चावल की फसल की भांति यह प्रकृति की दया पर अधिक निर्भर नहीं है।

सन् 1950-51 में 97 लाख हैक्टेयर भूमि पर गेहूँ बोया गया था और इसका कुल उत्पादन 64 लाख टन था। 1997-98 में गेहूँ के अंतर्गत कुल क्षेत्रफल

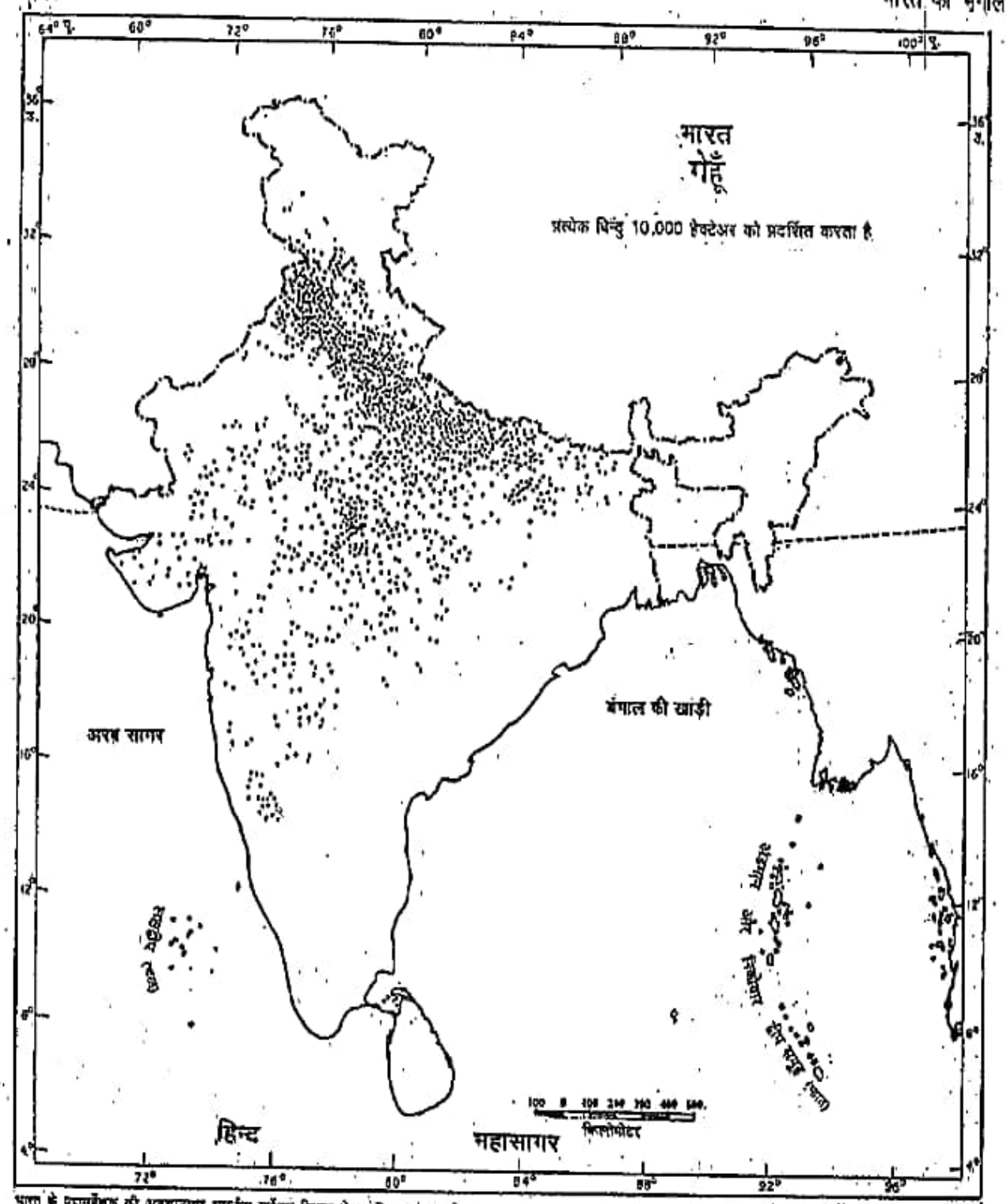

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित आधारविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

चित्र 6.3 भारत—गेहूँ का वितरण

शीतोष्ण कटिबंध की फसल होने के कारण गेहूँ उत्तरी भारत की प्रमुख फसल है। गेहूँ मध्य और पश्चिमी भारत के पठारी प्रदेशों में भी उगाया जाता है। इन क्षेत्रों में गेहूँ के उत्पादन के लिए कौन से अनुकूल कारक हैं ?

2 करोड़ 67 लाख हैक्टेयर था। पर इसका उत्पादन अपेक्षाकृत और अधिक बढ़ा और 6 करोड़ 59 लाख टन हो गया। इस प्रकार गेहूँ की प्रति हैक्टेयर उपज में तिगुनी से अधिक वृद्धि हुई है।

1997-98 में, उत्तर प्रदेश 1 करोड़ 86 लाख टन गेहूँ का उत्पादन करके सभी राज्यों में अग्रणी रहा। 1 करोड़ 27 लाख टन उत्पादन के साथ पंजाब का स्थान दूसरा था। इसके बाद क्रमशः हरियाणा, मध्य प्रदेश और राजस्थान का स्थान रहा।

गेहूँ के उत्पादन में हमें जो सफलता मिली है, उसे आमरूप से हरित-क्रांति कहा जाता है। इस सफलता का श्रेय भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के कृषि वैज्ञानिकों को जाता है। इन्होंने अपने अथक प्रयासों और प्रयोगों से गेहूँ की अधिक उपज देने वाली अनेक किस्में विकसित की हैं। इस क्षेत्र में अमेरिका के प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक श्री बीरलौग का योगदान भी उल्लेखनीय है।

ज्वार-बाजरा

ज्वार, बाजरा और रागी को मोटे अनाज भी कहा जाता है। ये खरीफ की फसल है और वर्षा के ऊपर निर्भर है। इन्हें सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती है। अतः चावल के विपरीत इन्हें कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उपजाया जाता है। मोटे अनाजों में रागी के लिए अपेक्षाकृत अधिक वर्षा चाहिए तथा ज्वार के लिए रागी से कम और बाजरे के लिए सबसे कम वर्षा की आवश्यकता होती है। रागी, जिसे अपेक्षाकृत अधिक वर्षा चाहिए, तमिलनाडु और कर्नाटक में उगाई जाती है। ज्वार की पैदावार के मुख्य क्षेत्र कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश हैं। बाजरा महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और दक्षिण पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अपेक्षाकृत शुष्क भागों में पैदा किया जाता है। ज्वार-बाजरे के उत्पादन में भारत का स्थान संसार में पहला है। इन फसलों का क्षेत्रफल तो नहीं बढ़ा है, लेकिन ज्वार-बाजरे का उत्पादन 70 लाख टन से बढ़कर 1 करोड़ 90 लाख टन हो गया है। ज्वार-बाजरे में गेहूँ और चावल की तुलना में अधिक प्रोटीन होता है।

मक्का

मक्का का मूल स्थान अमेरिका है। भारत में इसकी खेती कुछ देर से शुरू हुई। लेकिन अधिक उपज देने के कारण यह लोकप्रिय होती जा रही है। मक्का विविध प्रकार की मिट्टियों तथा विभिन्न प्रकार की जलवायु की दशाओं में पैदा की जा सकती है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार और पंजाब इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं।

सन् 1950-51 में 32 लाख हैक्टेयर में मक्का बोई गई थी। 1997-98 में इसका क्षेत्रफल बढ़कर 62 लाख हैक्टेयर हो गया। इसी अवधि में इसका उत्पादन भी 20 लाख टन से बढ़कर 1 करोड़ 6 लाख टन हो गया। इस प्रकार इसकी उत्पादकता पाँच-गुनी बढ़ गई।

दालें

भारत दालों का सबसे बड़ा उत्पादक तथा उपभोक्ता देश है। अब तक ये ही प्रोटीन का मुख्य स्रोत रही हैं, क्योंकि बहुत बड़ी जनसंख्या के लिए मांस का उपभोग उनकी पहुँच से बाहर है। चना, अरहर या तूर, मूंग, उड़द, मसूर और मटर मुख्य दालें हैं। भारी वर्षा वाले क्षेत्रों को छोड़कर देश के सभी भागों में दालें उगाई जाती हैं। ये फसलें मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर हैं।

दालें, फलीदार पौधे हैं जो मृदा की उर्वरता को बढ़ाने में सहायता करती हैं। इसीलिए इन्हें अन्य फसलों से अदल-बदल कर बोया जाता है। दालें सामान्यतः दूसरी फसलों के साथ उगाई जाती हैं।

सन् 1950-51 में दालों के अंतर्गत लगभग 1.9 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्रफल था। 1996-97 में बढ़कर यह 2.3 करोड़ हैक्टेयर से अधिक हो गया जो संसार में सबसे अधिक है। उत्पादन भी 84 लाख टन से बढ़कर 1.4 करोड़ टन हो गया है। प्रति हैक्टेयर उपज में भी थोड़ी सी वृद्धि हुई है। इसी अवधि में दालों की उपज 4.4 क्विंटल प्रति हैक्टेयर से बढ़कर 6.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हो गई है।

उपर्युक्त तथ्यों से एक बात बिलकुल स्पष्ट है कि सामान्य व्यक्तियों को और अधिक दालों के मिलने की संभावना बहुत कम है। इससे हरित क्रांति की सीमाओं का पता चलता है। इनका उत्पादन बढ़ाने के लिए सुनिश्चित सिंचाई तथा भारी मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग अनिवार्य है। इनके समर्थन मूल्य का लाभकारी होना भी आवश्यक है। दालों की खेती में एक परिवर्तन ध्यान देने योग्य है कि अब रबी की फसल के बाद छोटी अवधि वाली मूंग और उड़द की तीसरी फसल ली जाने लगी है।

हमारे खाद्यान्नों का भावी बजट

किसी देश की खाद्य-आवश्यकता का निर्धारण जनसंख्या के आकार तथा उसके जीवन-स्तर के द्वारा होता है। जनसंख्या अब हर 35 सालों के बाद दुगुनी हो जाती है। जनसंख्या की वृद्धि दर को घटाने में मिली भारी सफलता के बाद भी इस बात की आशंका है कि इस शताब्दी के मध्य तक भी जनसंख्या 150 करोड़ से नीचे स्थिर नहीं होगी। कुछ और अधिक तर्कसंगत अनुमानों के अनुसार 21वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के अन्तिम वर्षों में भारत की जनसंख्या 160 व 170 करोड़ के बीच होगी।

160 करोड़ लोगों का पेट भरने के लिए हमें 40 करोड़ टन तो केवल खाद्यान्नों की ही आवश्यकता होगी। सन् 2,010 तक अर्थात् अगले दस वर्षों में ही हमें 23-24 करोड़ टन के बीच खाद्यान्न चाहिए। यद्यपि यह असंभव नहीं है, लेकिन इस लक्ष्य को पाने के लिए हमारे सीमित आर्थिक साधनों पर भारी दबाव पड़ेगा और शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाओं समेत अनेक अन्य क्षेत्रों के विकास के लिए पर्याप्त साधन नहीं जुटा पाएंगे। सन् 2,025 तक 10.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई की क्षमताओं को प्राप्त कर लेने के बाद सिंचाई सुविधाओं को बढ़ाने की संभावना भी समाप्त हो जाएगी।

तिलहन

वनस्पति तेल भोजन बनाने के लोकप्रिय माध्यम हैं। अतः दालों की भांति तिलहन भी बहुत महत्वपूर्ण है। मूँगफली, सरसों और तोरिया प्रमुख तिलहन हैं। मूँगफली खरीफ की फसल है, जो पूर्णतया सामान्य लेकिन समय-समय पर निश्चित रूप से होने वाली वर्षा पर निर्भर है। सरसों और तोरिया रबी की फसलें हैं, और ये मुख्य रूप से असिंचित क्षेत्रों तक ही सीमित हैं। इसीलिए इनके उत्पादन और प्रति हैक्टेयर उपज में जलवायु के अनुरूप भारी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। परिणामस्वरूप इनके बाजार भाव भी तेजी से घटते-बढ़ते हैं। तिल, अलसी, रेंडी, सूरजमुखी के बीज, बिनौला और नारियल अन्य तिलहन हैं। सरसों और तोरिया उत्तरी और मध्य भारत के गेहूँ क्षेत्रों की फसलें हैं।

मूँगफली पश्चिमी और दक्षिणी भारत में मुख्य रूप से पैदा की जाती है। गुजरात इसका प्रधान उत्पादक राज्य है। भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर 2 प्रतिशत प्रति वर्ष है लेकिन तेल मांग प्रति वर्ष 5 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। ऐसा क्यों है ?

सन् 1950-51 में मूँगफली के अंतर्गत 45 लाख हैक्टेयर भूमि थी। सन् 1996-97 में यह बढ़कर 78 लाख हैक्टेयर हो गई। इसी अवधि में मूँगफली का उत्पादन 34 लाख टन से बढ़कर 90 लाख टन हो गया। इसी प्रकार की स्थिति प्रति हैक्टेयर उत्पादन की रही, जो 775 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर से बढ़कर 1,155 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर हुई।

रबी की तिलहनों, जिनमें सरसों और तोरिया हैं, की कहानी भी आशाजनक है। इस अवधि में इन फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल 20 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 68 लाख हैक्टेयर हो गया। उत्पादन भी 7 लाख टन से बढ़कर 70 लाख टन हो गया, जो दस गुनी वृद्धि है। तिलहन की प्रति हैक्टेयर ऊपज 368 कि.ग्रा. से बढ़कर 1013 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर हो गई है।

सभी नौ तिलहनों को मिलाकर इनका उत्पादन 1996-97 में 2.5 करोड़ टन हो गया। ताड़-तेल के आयात को कम करने के लिए, बड़े पैमाने पर इन वृक्षों को लगाया जा रहा है।

गन्ना और आलू

अनेक वर्षों से चीनी हमारे दैनिक भोजन का एक मुख्य अंग रही है। चीनी की अपनी दैनिक आवश्यकताओं के लिए हम गन्ने पर ही आश्रित हैं। संयोग से भारत ही गन्ने की जन्मभूमि मानी जाती है। गन्ने के क्षेत्रफल में भारत का संसार में पहला स्थान है और यही इसका उत्पादन भी सबसे अधिक होता है। इसके उत्पादन में उत्तर प्रदेश अग्रणी है। इसके बाद महाराष्ट्र, पंजाब, आंध्र प्रदेश, बिहार, तमिलनाडु तथा कर्नाटक का स्थान है।

गन्ने के लिए अच्छे जलनिकास वाली उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके लिए भारी मात्रा में खाद और उर्वरक चाहिए। इसे गर्म और आर्द्र जलवायु तथा लगभग 100 सें.मी. वर्षा चाहिए। वास्तव में भरपूर धूप वाले सिंचित क्षेत्रों में गन्ने की अच्छी फसल होती है।

भारत में गन्ना सर्वाधिक सिंचित फसल है। इसके अंतर्गत कुल क्षेत्रफल के लगभग 88 प्रतिशत भाग में सिंचाई की सुविधा है। सन् 1950-51 में 17 लाख हैक्टेयर भूमि में गन्ना बोया गया था। 1997-98 में इसका क्षेत्रफल बढ़कर 40 लाख हैक्टेयर हो गया। इसी अवधि में इसका उत्पादन 5.7 करोड़ टन से बढ़कर 27.5 करोड़ टन हो गया। इसी प्रकार इसकी प्रति हैक्टेयर उपज 33 टन से बढ़कर 70 टन प्रति हैक्टेयर हो गई। फिर भी इसकी उपज हवाई द्वीप समूह में गन्ने की प्रति हैक्टेयर उपज से बहुत कम है।

सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगाली आलू को भारत में लाए थे। आज आलू एक संग्रह सब्जी बन गया है। उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा बिहार इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। सन् 1996-97 में 12 लाख हैक्टेयर भूमि में आलू पैदा किया गया। इसका कुल उत्पादन 2.4 करोड़ टन से अधिक था। इसमें प्रति हैक्टेयर उत्पादन में भी वृद्धि हुई है जो 1960-61 में 7 टन प्रति हैक्टेयर से बढ़कर अब 19 टन प्रति हैक्टेयर हो गया है। पौलैंड, रूस तथा आयरलैंड जैसे देशों में आलू लोगों का मुख्य भोजन है। हमारे देश के हिमाचल प्रदेश में पैदा किया गया आलू का बीज बहुत अच्छा माना जाता है।

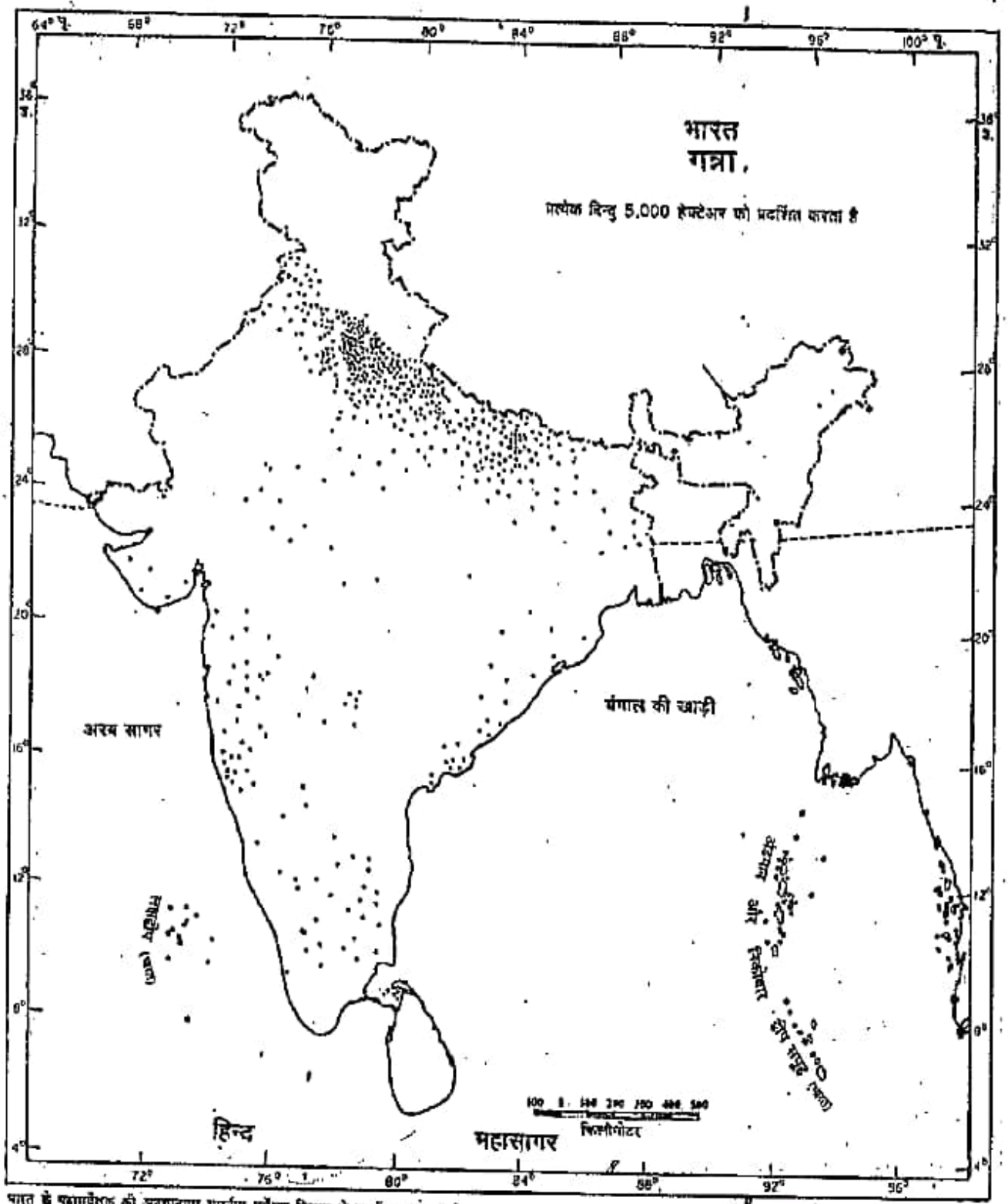

भारत के महासर्वेक्षक की अनुमतानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में वर्णित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 6.4 भारत—गन्ने का वितरण

देखिए, भारत में गन्ने का सर्वाधिक उत्पादन उत्तरी मैदान में होता है जबकि गन्ना उष्ण कटिबंध की फसल है। इसके क्या कारण है ?

मसाले तथा फल

जो काम आज प्रशीतन से होते हैं, वही काम प्राचीन काल में मसाले करते थे। शताब्दियों तक यूरोपवासी मसालों के द्वारा ही मांस आदि का परिरक्षण करते रहे थे। उनकी भारी मांग के कारण ही यूरोप में भारत के साथ मसालों के व्यापार के प्रति विशेष अभिरुचि थी। काली मिर्च, इलायची, लौंग, जावित्री, दालचीनी, अदरक, जायफल तथा तेजपात आदि को सम्मिलित रूप से मसाले कहा जाता है। ये मुख्यतः केरल तथा कर्नाटक के मालाबार तट पर उगाए जाते हैं।

1960-61 में, 47,000 टन मसालों का निर्यात किया गया। इससे 3.6 करोड़ अमेरिकन डॉलर की आमदनी हुई। 1997-98 में यह संख्या बढ़कर क्रमशः 2,41,000 टन और 37.9 करोड़ अमेरिकन डॉलर हो गई। वास्तव में यह महत्त्वपूर्ण प्रगति है।

सब्जियों, फलों और फलों की गहन खेती को सम्मिलित रूप से उद्यान कृषि कहते हैं। भारतीय आमों और केलों की विदेशों में बहुत मांग है। भारत में उष्ण कटिबंधीय फल खूब पैदा होते हैं। इनमें नारियल, कटहल, काजू, अन्नानास, केले और संतरे मुख्य हैं। शीतोष्ण कटिबंधीय फल जैसे सेब, आलू बुखारा, आड़ू, बादाम, खूमानी, अँगूर आदि भी भरपूर पैदा होते हैं। शीतोष्ण कटिबंधीय फलों के उत्पादन में जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश अग्रणी हैं। अन्य फल प्रायद्वीपीय भारत तथा उत्तरी मैदान के अनेक भागों में उगाए जाते हैं। काजू के निर्यात से भारत विदेशी मुद्रा कमाता है। कच्चे काजू का आयात भी किया जाता है तथा संसाधित करके उनको फिर से निर्यात कर दिया जाता है।

1960-61 में लगभग 4,300 टन काजू के निर्यात से 4 करोड़ अमेरिकन डॉलर की प्राप्ति हुई थी। 1997-98 में 76,000 टन काजू का निर्यात किया गया था और इससे 37 करोड़ 20 लाख अमेरिकन डॉलर मिले।

भारत फल के उत्पादन में संसार में प्रथम स्थान पर और सब्जियों के उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। 1995-96 में फलों और सब्जियों का कुल उत्पादन क्रमशः 4.1 करोड़ टन और 7 करोड़ टन था।

पेय फसलें

चाय, कहवा और कोको भारत की पेय फसलें हैं। भारत चाय का अग्रणी उत्पादक देश है। चाय की रोपण कृषि में भारत को आश्चर्यजनक सफलता मिली है। यह कृषि वैज्ञानिक पद्धति से व्यापारिक आधार पर की जाती है। यद्यपि अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिए चाय की रोपण कृषि शुरू की थी, लेकिन अब पूरी तरह से यह भारतीय हाथों में है। इसमें लाखों लोगों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिला हुआ है। इस प्रकार यह एक श्रम-प्रधान उद्योग है। यह भी उद्यान कृषि का एक हिस्सा है।

चाय का पौधा अच्छे जल निकास वाली गहरी उपजाऊ मिट्टी में खूब पनपता है। पूरे वर्ष इसे कोष्ण और आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। सारे साल बीच-बीच में होने वाली वर्षा की बौछारों से चाय के पौधों में निरंतर नई कोंपलें फूटती रहती हैं। ब्रह्मपुत्र घाटी के तरंगित मैदान तथा असम की निचली पहाड़ियों

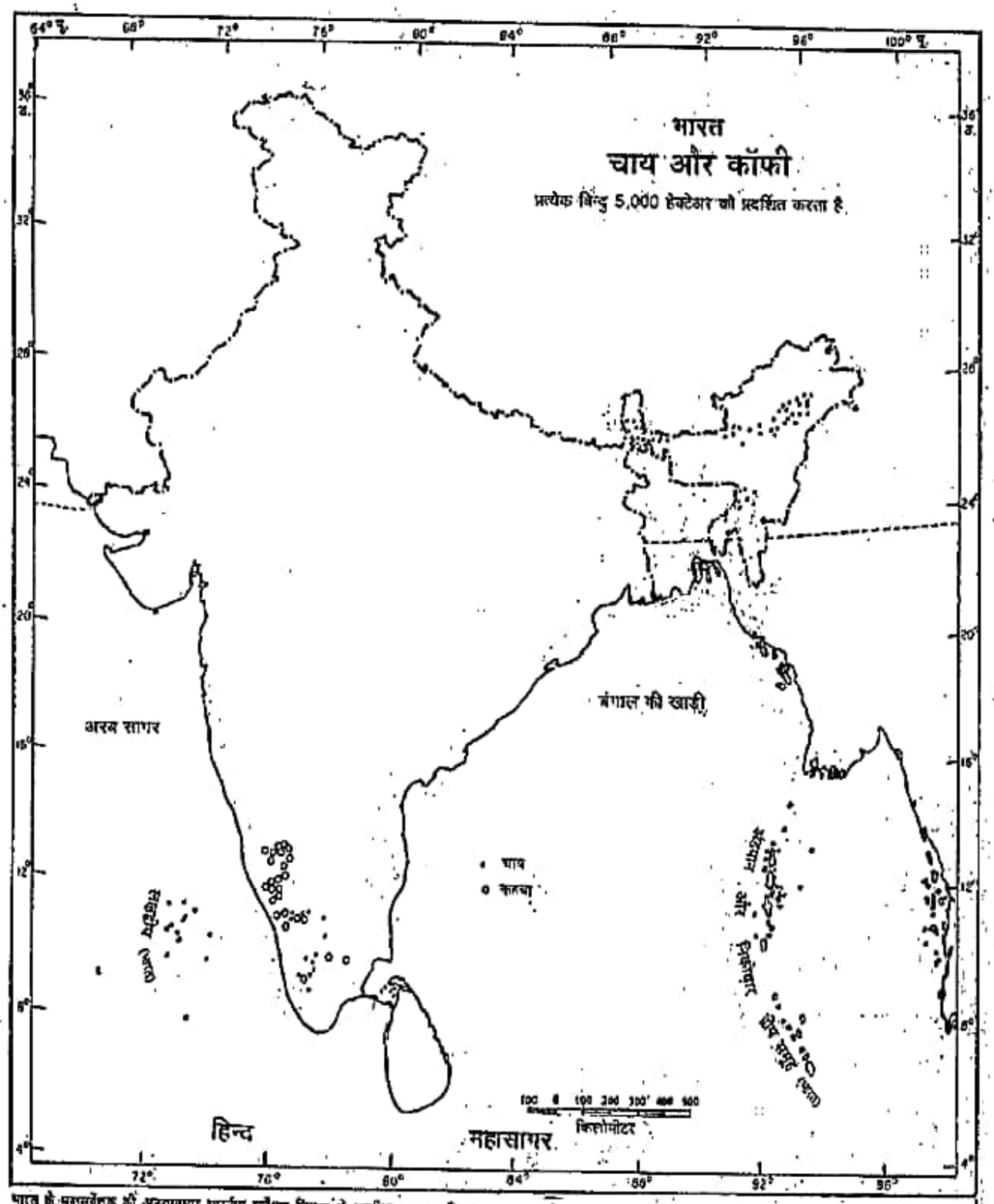

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अंतरविन्यास विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 6.5 भारत—चाय और कहवा का वितरण

चाय और कहवा का उत्पादन करने वाले क्षेत्रों को देखिए। उन राज्यों के नाम बताइए जो इनके उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हैं।

पर चाय के अनेक बागान हैं। पश्चिमी बंगाल के उत्तरी जिलों—दार्जिलिंग तथा जलपाईगुड़ी की पहाड़ियों और दक्षिण में नीलगिरी की पहाड़ियों पर भी चाय पैदा की जाती है। ये क्षेत्र अपनी उत्तम कोटि की चाय के लिए प्रसिद्ध हैं।

सन् 1950-51 में 3,00,000 हैक्टेयर से अधिक भूमि में चाय के बागान थे। 1997-98 में चाय का क्षेत्रफल 4,00,000 हैक्टेयर हो गया। इसी अवधि में चाय का उत्पादन 2,75,000 टन से बढ़कर 8,00,000 टन हो गया।

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रति हैक्टेयर उपज जो 1960-61 में 971 किलोग्राम थी, 1996-97 में बढ़कर 1,875 किलो-ग्राम हो गई। चाय की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 1956-57 में 365 ग्राम प्रति वर्ष थी। यह भी अब बढ़कर 636 ग्राम प्रति वर्ष हो गई है। श्रीलंका चाय के निर्यात में भारत के बराबरी का प्रतिद्वन्द्वी है। कीनिया भी चाय के नए निर्यातक देश के रूप में आगे आया है। भारत में चाय की घरेलू मांग बड़ी तेजी से बढ़ रही है, अतः निर्यात के लिए पर्याप्त नहीं बच पाता है।

कहवा

संसार में ही नहीं, अपितु भारत में भी लोकप्रियता की दृष्टि से चाय के बाद कहवे का दूसरा स्थान है। यदि चाय का उत्पादन संसार के उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में है, तो कहवा दक्षिण पश्चिमी क्षेत्रों में पैदा किया जाता है। चाय के बागानों की तुलना में कहवे के बागान छोटे हैं। ये 10 हैक्टेयर से कम क्षेत्रफल के ही होते हैं।

कहवे के वृक्ष उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में 900 से 1,800 मीटर तक ऊँचे पहाड़ी ढलानों पर उगते हैं। भारत में कर्नाटक का लैटराइट मिट्टी में वे अच्छी तरह पनपते हैं। सन् 1950-51 में 91,000 हैक्टेयर क्षेत्र कहवे के अंतर्गत था। इसी वर्ष इसका उत्पादन 25,000 टन था। सन् 1997-98 में कहवे का क्षेत्रफल बढ़कर 4,00,000 हैक्टेयर हो गया तथा उत्पादन 2,00,000 टन हो गया। ऊपज भी बढ़कर 818 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर हो गई है। 1997-98 में 1,47,000 टन कहवा निर्यात किया गया जिसमें 4,306 अमेरिकन डॉलर की आय हुई। यह चाय की अपेक्षा कहीं अधिक थी।

रेशे

कपास, जूट या पटसन, ऊन तथा प्राकृतिक रेशम चार प्रमुख रेशे हैं। प्रथम दो मृदा से प्रत्यक्ष रूप से मिलते हैं तथा अन्तिम दो अप्रत्यक्ष रूप से मिलते हैं।

कपास

भारत कपास के पौधों का मूल स्थान है। हमारी पुरानी सभ्यता के अवशेषों के अध्ययन से स्पष्ट हो गया है कि भारत में उस समय भी कपास पैदा की जाती थी। कपास से सूत काता जाता था तथा कपड़ा बुनकर उनका निर्यात मध्य-पूर्व के देशों को किया जाता था। उस काल में बेबीलोन के लोग यहाँ की कपास को "सिंधु" तथा यूनानी "सिंदौ" नाम से पुकारते थे।

कपास दक्कन के पठार के "कपास की काली मिट्टी" वाले अपेक्षाकृत शुष्क भागों में खूब उगती है। गुजरात और महाराष्ट्र कपास के पारंपरिक प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। अन्य उत्पादकों में पंजाब, कर्नाटक,

तमिलनाडु और मध्य प्रदेश आते हैं। सन् 1988-89 तक कपास के उत्पादक का दृश्य काफी बदल गया है। इस वर्ष पंजाब में कपास की 21 लाख गांठों, गुजरात में 17.5 लाख गांठों, महाराष्ट्र में 16.5 लाख गांठों और आंध्र प्रदेश में 13.2 लाख गांठों का उत्पादन हुआ था। अन्य उत्पादक राज्य राजस्थान, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु थे।

सन् 1950-51 में कपास के अंतर्गत 60 लाख हैक्टेयर से कम क्षेत्रफल था जो बढ़कर 1997-98 में 90 लाख हैक्टेयर हो गया। कपास का उत्पादन भी 170 किलोग्राम वजन की 30 लाख गांठों से बढ़कर सन् 1997-98 में 1 करोड़ 10 लाख गांठों तक पहुँच गया। प्रति हैक्टेयर उपज भी 88 किलोग्राम से बढ़कर 213 किलोग्राम हो गई। यह वृद्धि दुगुनी से भी अधिक है। भारत कपास की संकर प्रजाति का विकास करने वाला संसार में पहला देश है। इसी के परिणामस्वरूप कपास के उत्पादन में वृद्धि हुई है।

जूट या पटसन

जूट को भारतीय उपमहाद्वीप का "सुनहरी रेशा" कहा जाता था। देश विभाजन के पश्चात कलकत्ते के आस-पास स्थित जूट के कारखाने तो भारत में रह गए, लेकिन जूट पैदा करने वाले क्षेत्र तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान अर्थात् आज के बांग्लादेश में चले गए। विगत कुछ वर्षों में इस हानि को पूरा कर लिया गया है। बाढ़ के मैदानों की अच्छे जल निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी जूट की खेती के लिए सर्वोत्तम है, क्योंकि यहाँ नदियाँ प्रति वर्ष नई मिट्टी लाकर बिछाती रहती हैं। इसके वर्धन काल में उच्च तापमान का होना भी जरूरी है। पश्चिम बंगाल, असम और उड़ीसा जूट तथा मेस्टा (जूट की एक किस्म) के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं।

1950-51 में जूट के अंतर्गत 5.7 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल था। इसका उत्पादन 33 लाख गांठ (प्रत्येक गांठ 180 किलोग्राम भार वाली) और उपज 1 क्विंटल प्रति हैक्टेयर था। 1997-98 तक क्षेत्रफल बढ़कर 11 लाख हैक्टेयर, उत्पादन 1.1 करोड़ गांठ और उपज 1,800 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर हो गई।

रेशम

रेशम की परंपरा भारत में बहुत पुरानी है। रेशम उत्पादन एक ऐसा उद्योग है जिसमें बहुत से श्रमिकों की आवश्यकता होती है। रेशम उत्पादन के लिए रेशम के कीड़ों को पालना पड़ता है। ये कीड़े बहुत भुक्खड़ होते हैं। एक पौंड भार के कीड़े एक वर्ष में शहतूत की 1 टन पत्तियाँ खा सकते हैं। कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, असम, पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में कच्चा रेशम पैदा किया जाता है। 1980-81 में रेशम का कुल उत्पादन 5,000 टन था।

जापान ने इस उद्योग से अपने हाथ खींच लिए हैं। अतः भारत के लिए इस कमी को पूरा करने का यह बहुत अच्छा अवसर है। निकट भविष्य में भारत को 30,000 टन रेशम की आवश्यकता होगी। रेशम से बनी वस्तुओं के निर्यात से भारत ने 250 करोड़ रुपयों की विदेशी मुद्रा कमाई। रेशम के उत्पादन और निर्यात में चीन का संसार में पहला स्थान है।

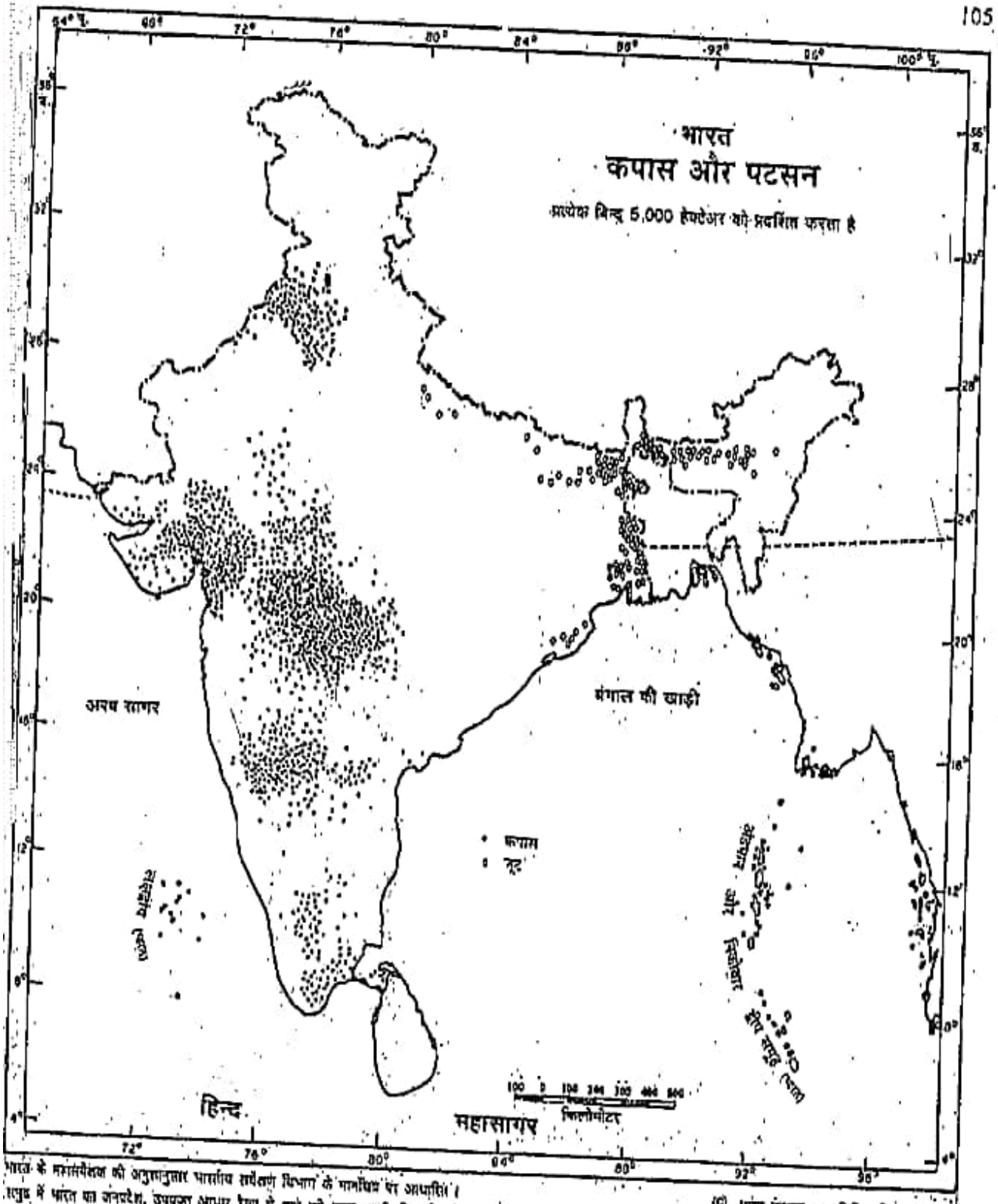

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित नामों का अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 6.6 भारत—कपास और पटसन का वितरण :

कपास और पटसन उत्पादन के क्षेत्रों को देखिए। जबकि कपास पश्चिमी राज्यों—गुजरात और महाराष्ट्र में होता है, पटसन गंगा-डेल्टा में उपजाया जाता है। क्यों ?

अन्य नकदी फसल

रबड़

रबड़ एक महत्त्वपूर्ण औद्योगिक कच्चा माल है। इसका उत्पादन मुख्य रूप से केरल में होता है।

सन् 1947-48 में रबड़ की खेती 63,000 हैक्टेयर भूमि में होती थी। 1997-98 में रबड़ का खेती क्षेत्रफल बढ़कर 4,00,000 हैक्टेयर हो गया। इसका उत्पादन भी 14,000 टन से बढ़कर 5 लाख टन हो गया। इसकी प्रति हैक्टेयर वार्षिक उपज 1,565 किलोग्राम है। रबड़ की खेती छोटी जोतों वाले किसान ही करते हैं।

तंबाकू

भारत संसार में तंबाकू का तीसरा बड़ा उत्पादक देश है। निर्यातक देशों में इसका पाँचवाँ स्थान है। तंबाकू के लिए "पाले" से रहित मौसम जरूरी है। इसके लिए बहुत उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है, क्योंकि इसकी फसल मिट्टी के पोटास के अंश को बहुत घटा देती है। तंबाकू की फसल को तैयार होने में बहुत कम समय लगता है। इसकी खेती का क्षेत्र वैसे तो बहुत व्यापक है, लेकिन आंध्र प्रदेश और गुजरात अग्रणी उत्पादक राज्य हैं। लगभग एक लाख टन उत्तम कोटि के वर्जीनिया तंबाकू का निर्यात किया जाता है। इसकी खेती पर "तंबाकू बोर्ड" का नियंत्रण है। लगभग 70,000 उत्पादक बोर्ड से पंजीकृत हैं।

पशुपालन

भारत में खेत, कृषक और उसके पशुओं से मिलकर एक "कृषि पारितंत्र" बनता है। किसानों के लिए खेती में काम आने वाले पशु मात्र पशु ही नहीं हैं। वे पशुओं को अपना साथी मानते हैं। यह कथन गाय-बैल और भैंसों के विषय में विशेष रूप से सत्य है। बैल और भैंस किसानों के भारवाही पशु हैं। ये जुताई, बुवाई, गहराई तथा कृषि उत्पादों के परिवहन में किसानों की सहायता करते हैं। गाय और भैंसों से किसानों को दूध मिलता है। इनके गोबर से बहुत अच्छी खाद बनती है। पशु पालन और डेरी विकास ग्रामीण-विकास में मुख्य भूमिका निभाते हैं। छोटे और सीमान्त किसानों के लिए पशु बहुत बड़ी संपत्ति हैं क्योंकि इनके दूध से उन्हें अतिरिक्त आय हो जाती है। भारतीय पशु अपनी गठन, ताकत और उष्ण कटिबंधीय बीमारियों की प्रतिरोधक क्षमता के लिए विश्व-विख्यात हैं। इसीलिए इनकी अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत माँग है। गाय और भैंसों की नस्ल सुधारने के लिए विशेष प्रयत्न किए जा रहे हैं, ताकि इनसे अधिक दूध मिल सके। भ्रूण स्थानान्तरण प्रौद्योगिकी का बड़े पैमाने पर उपयोग हो रहा है। देश में व्यापक रूप से कृत्रिम गर्भाधान केंद्र खोले गए हैं। संसार की कुल गाय-बैलों की संख्या का 1/6 वां हिस्सा अकेले भारत में है, जहाँ इनकी संख्या 20.5 करोड़ है। 1992 की पशुगणना के अनुसार, 8.4 करोड़ भैंसों की संख्या के साथ, भारत में संसार की कुल भैंसों की संख्या का 55 प्रतिशत भाग है। 1951 में गाय-बैलों की संख्या 15.5 करोड़ और भैंसों की 4.3 करोड़ थी। 1950 में दूध का उत्पादन 1.7 करोड़ टन था। यह 1997 में बढ़कर 7.1 करोड़ टन हो गया। भारत संसार में संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दूसरे स्थान पर है। दूध के उत्पादन में शीघ्र ही यह संयुक्त राज्य अमेरिका से आगे निकल जाएगा।

गाय, बैल और भैंसों के पालन में अग्रणी राज्य उत्तर प्रदेश है और दूसरा स्थान मध्य प्रदेश का है। इनके बाद क्रमशः बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा आंध्र प्रदेश का स्थान है। लेकिन बढ़िया नस्ल के साँड़

और भैंसें पंजाब, हरियाणा, गुजरात, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में ही मिलते हैं। गुजरात की सुर्ती तथा पंजाब की मुर्रा भैंसें बहुत प्रसिद्ध हैं। गाय बैलों की कंक्रेज नस्ल का इतिहास मोहनजोदाड़ो और हड़प्पा काल का है। हरियाणा और राजस्थान की साहीवाल और नागोरा नस्लें प्रसिद्ध हैं। दक्षिण भारत की हालीकर और खिल्लर नस्लें उल्लेखनीय हैं।

भेड़

सन् 1982 की पशुगणना के अनुसार भारत में 4.8 करोड़ भेड़ें थी। हमारे देश में संसार की सिर्फ 4 प्रतिशत भेड़ें ही हैं। इनसे निम्न कोटि की ऊन मिलती हैं तथा इनका उत्पादन भी कम है। एक भेड़ से एक किलोग्राम से भी कम ऊन मिलती है। ऊन का कुल उत्पादन 44,000 टन था। भारतीय भेड़ों की नस्ल सुधारने के लिए बढ़िया ऊन वाली उत्तम नस्ल की मेरीनों भेड़ों का आयात किया गया है। मोटे किस्म की ऊन वाली भेड़ें आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में पाली जाती हैं। लेकिन बढ़िया ऊन वाली भेड़ें पश्चिमी हिमालय के जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश राज्यों में पाली जाती हैं।

बकरियाँ

बकरी को "गरीब की गाय" कहा जाता है। भारत में काफी बकरियाँ हैं। बिहार, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश में बकरियाँ अधिक संख्या में पाली जाती हैं। संसार में बकरियों की कुल संख्या का 1/6 भाग भारत में मिलता है।

भारत में घोड़ों, टट्टुओं तथा खच्चरों की संख्या अपेक्षाकृत कम है। संसार के केवल 2 प्रतिशत घोड़े, टट्टू आदि भारत में पाए जाते हैं। ऊँट तथा याक भारत के अन्य पालतू पशु हैं।

मुर्गीपालन

यद्यपि मुर्गीपालन का धंधा बड़ा पुराना है। लेकिन विगत कुछ वर्षों में किसानों की अर्थव्यवस्था तथा भारतीय भोजन में इसका महत्त्व काफी बढ़ गया है। सन् 1950-51 में अंडों का वार्षिक उत्पादन 2 अरब से कम था। यह बढ़कर 1996-97 में 28 अरब तक पहुँच गया था। खाने योग्य मुर्गों के बड़े पैमाने पर पालन के विषय में 1961 से पहले कोई जानता तक न था। लेकिन 1986-87 में 8 करोड़ मुर्गा का उत्पादन हुआ। बत्तखें भी अब बहुत बड़ी संख्या में पाली जाती हैं।

दुग्ध व्यवसाय तथा आपरेशन फ्लड

हरित क्रांति के बाद अब श्वेत क्रांति की बात की जा रही है। इसे आपरेशन फ्लड के नाम से भी जाना जाता है। समन्वित ग्रामीण विकास की दिशा में दुग्ध-व्यवसाय का विकास एक सफल प्रयास है। इसके द्वारा छोटे और सीमान्त किसानों को अतिरिक्त आय हो सकती है तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था की उन्नति के लिए इससे खाद तथा बायो गैस भी प्राप्त की जा सकती है। दुग्ध व्यवसाय के विकास से अनेक परिवार निर्धनता की रेखा से ऊपर उठ सकते हैं। दुग्ध सहकारी समितियों से ग्रामीण विकास को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। ये समितियाँ दूध का संग्रह और विपणन करती हैं। गुजरात के खेड़ा जिले की दुग्ध सहकारी समिति एक आदर्श समिति है। इस सहकारी समिति का दूध बहुत दूर दिल्ली तक भेजा जाता है। खेड़ा सहकारी समिति का मक्खन और पनीर तो देश के अधिकतर

नगरों में पहुँचता है। आपरेशन फ्लड कार्यक्रम की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि राष्ट्रीय दुग्ध ग्रिड का निर्माण है। इससे दूध के संग्रह और वितरण के कार्य में क्षेत्रीय तथा मौसमी असमानताएँ दूर हुई हैं।

मत्स्य उद्योग

हमारे देश में स्थल क्षेत्र से मछलियों के और अधिक मात्रा में मिलने की संभावनाएँ काफी कम हैं। अतः इसके लिए हमें सागर की शरण में ही जाना होगा। हमारे देश के तट के साथ-साथ फैले सागर में 20 लाख वर्ग किलोमीटर का आर्थिक क्षेत्र है जिसमें भारी मात्रा में भोजन सामग्री प्रदान करने की क्षमताएँ हैं। विस्तृत महाद्वीपीय निमग्नतट, सक्रिय समुद्री धाराएँ तथा बड़ी-बड़ी नदियों द्वारा मछलियों के लिए निरंतर भोज्य पदार्थ लाकर जमा करने के कारण भारत को समृद्ध मत्स्य क्षेत्र होने का लाभ है। हम इनका विकास और दोहन कर सकते हैं। सन् 1950-51 में समुद्री मछली का उत्पादन 5 लाख टन था जो बढ़कर 1997-98 में 30 लाख टन हो गया। अंतःस्थलीय मछली का उत्पादन 24 लाख टन था। यंत्रचलित मत्स्यन ने छोटे मछुआरों को बुरी तरह प्रभावित किया है। समुद्र से अधिकाधिक मात्रा में मछली पकड़ने के लिए यंत्र चालित नौकाओं की आवश्यकता है। मछली पकड़ने के छोटे और बड़े बंदरगाहों में मछली पकड़ने वाली नौकाओं और जहाजों के रुकने और ठहरने की सुविधाओं को बढ़ाना भी जरूरी है। समुद्री उत्पादों को संसाधित करने की सुविधाओं को जुटाना तथा शीतागारों को उपलब्ध कराना भी बहुत आवश्यक है। इस दिशा में काफी प्रगति हो भी चुकी है। विदेशी और भारतीय पोत प्रांगणों में हमारे मछुआरों के लिए मछली पकड़ने के जहाज निर्माणाधीन हैं।

इसी प्रकार अंतःस्थलीय मत्स्य क्षेत्रों को भी और अधिक विकसित करना जरूरी है। विगत 40 वर्षों में बने बांधों के पीछे बनी विशाल झीलों में तथा नदियों में मत्स्य क्षेत्रों के विकास की काफी संभावनाएँ हैं।

इस उदीयमान क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने की काफी संभावनाएँ हैं। 1997-98 में मछलियों और मत्स्य-उत्पादों को निर्यात से 116 करोड़ अमेरिकन डॉलर की आय हुई।

वानिकी

पारिस्थितिक संतुलन तथा प्राकृतिक पारितंत्र को बनाए रखने में वनों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वे एक आर्थिक संपदा भी हैं। इनसे इमारती तथा जलाऊ लकड़ी मिलती हैं। मानसूनी क्षेत्रों में फैले सागौन के वनों से उत्तम कोटि की इमारती लकड़ी मिलती है। ये पर्णपाती वन दक्षिण में पश्चिमी घाट पर्वतों से लेकर उत्तर में उप-हिमालयी क्षेत्रों तक फैले हैं। साल इन वनों में पाए जाने वाला दूसरा प्रमुख तथा उपयोगी वृक्ष है जो देश के पूर्वी भाग में अधिकता से पाए जाते हैं। साल वनों का क्षेत्र सागौन वनों के क्षेत्र की तुलना में बड़ा है।

भारत के अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में बाँस, महोगनी और रोजवुड के वृक्ष मिलते हैं। इनका विस्तार केरल और असम राज्यों में अधिक है। सुन्दरवन क्षेत्र से मैन्ग्रोव जाति के सुन्दरी वृक्षों की लकड़ी से नावें और बक्से बनाए जाते हैं।

हिमालय के शंकुधारी वनों की मुलायम लकड़ी फर्नीचर बनाने और पैकिंग के बक्से बनाने तथा भवन निर्माण के कार्यों में इस्तेमाल होती है। मुलायम लकड़ी से लुग्दी बनाई जाती है, जिसकी बड़ी माँग है। दुर्भाग्य

से अब वह समय आ गया है, जब हमें अपने वन संसाधनों का, जहाँ तक संभव हो सके, कम से कम उपयोग करना होगा। यही नहीं वनों के अंधाधुंध विनाश की वर्तमान परिपाटी को छोड़कर, उपयोग की निरंतर पद्धति को अपनाना होगा।

इमारती लकड़ी के अलावा वनों से लाख, बेंत, राल, लुग्दी, कठ-कोयला, जलाऊ लकड़ी, गोंद, जड़ी-बूटियाँ, चारा और घास भी मिलती है। अब हमें इस विभाग को आय कमाने वाले विभाग की तरह नहीं समझना चाहिए जैसा अंग्रेजों के शासन काल में था।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए —
   (क) कृषि को भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार क्यों कहा गया है ?
   (ख) हरित क्रांति की मुख्य विशेषता क्या है ?
   (ग) भारतीय कृषि में शुष्क कृषि का विकास अनिवार्य क्यों है ?
   (घ) भारत की दो प्रमुख खाद्यान्न फसलें कौन-सी हैं ? इन दोनों के लिए आवश्यक जलवायु की दशाओं और मिट्टी की तुलना कीजिए।
   (ङ) दालों और तिलहनों का उत्पादन अभी भी कम क्यों है ?
2. अंतर स्पष्ट करिए —
   (क) समुद्री तथा अंतःस्थलीय मत्स्य-ग्रहण
   (ख) खरीफ तथा रबी
   (ग) उर्वरक तथा खाद
   (घ) दुधारू पशु तथा भारवाहक पशु।
3. निम्नलिखित में से प्रत्येक के लिए एक पारिभाषिक शब्द दीजिए —
   (क) भूमि को जोतने, फसलें उगाने, पशुओं को पालने, मछली पकड़ने तथा वानिकी की कला और विज्ञान।
   (ख) बड़े पैमाने पर की जाने वाली एक फसली कृषि जिसमें कारखानों के समान उत्पादन और पूँजी निवेश होता है तथा कृषि में कच्चे माल के संसाधन में और तैयार माल के विपणन में आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग होता है।
   (ग) रेशम के कीड़े पालना और रेशम पैदा करना।
   (घ) सब्जियों, फलों और फूलों की फसलों की गहन कृषि।

4. नीचे (क) गेहूँ (ख) चावल (ग) चाय और (घ) गन्ने की आवश्यकताएँ दी गई हैं। इनके सही जोड़े बनाइए—
   (क) काफी बड़ी संख्या में सहयोगशील श्रमिक, 25 सें. तापमान तथा 100 सें. मी. वर्षा।
   (ख) वर्धन काल में शीतल तथा आर्द्र जलवायु तथा पकने के समय धूप युक्त कोष्ण जलवायु।,
   (ग) अच्छे जल निकास वाली उपजाऊ मिट्टी, गर्म तथा आर्द्र जलवायु 100 सें.मी. वर्षा या सिंचाई की सुविधाएँ।
   (घ) अच्छे जल निकास वाली गहरी और उपजाऊ मिट्टी, कोष्ण तथा आर्द्र जलवायु और पूरे वर्ष बीच-बीच में वर्षा की बौछार।
5. स्वतंत्रता के पश्चात् प्रमुख फसलों के उत्पादन और प्रति हेक्टेयर उपज में हुई प्रगति का विवरण लिखिए।
6. वे कौन से संकेत हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि भारतीय कृषि निर्वाह स्वरूप को त्याग कर व्यापारिक कृषि बन रही है ?
7. भारतीय समाज पर हरित क्रांति के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों की विवेचना कीजिए।
8. जनसंख्या वृद्धि के कारण भारतीय कृषि में पैदा होने वाली समस्याओं पर एक आलोचनात्मक निबंध लिखिए।
9. मानचित्र कार्य

   भारत के रेखा-मानचित्र पर जिसमें राज्यों की सीमाएँ प्रदर्शित की गई हों, निम्नलिखित दिखाइए —
   (क) चावल-उत्पादन के क्षेत्र
   (ख) गेहूँ-उत्पादन के क्षेत्र
   (ग) गन्ना-उत्पादन के क्षेत्र
   (घ) कहवा और चाय के उत्पादन क्षेत्र
   (ङ) कपास और जूट के उत्पादन-क्षेत्र

कक्षा में विचार-विमर्श के लिए विषय

(क) भारतीय कृषि को अभी और अधिक अच्छा करने की आवश्यकता है।

या

(ख) यंत्रीकरण भारतीय कृषि के लिए अभिशाप है।

अध्याय 7

उद्योगों का विकास

हमारा अतीत कृषि से संबंधित था, लेकिन भविष्य उत्तरोत्तर उद्योगों पर आधारित होगा। कृषि के विकास ने हमें भूख और जीवित बचे रहने की निरंतर चिंता से मुक्त कर दिया। अब केवल उद्योग ही हमारे जीवन को और अधिक सुविधा संपन्न तथा उत्तम बना सकते हैं। दूसरे शब्दों में, जितना ही देश का औद्योगिक विकास होगा, उतना ही जीवन स्तर ऊँचा उठेगा।

इसका यह अर्थ नहीं है कि कृषि और उद्योग एक दूसरे से अलग हैं। इन दोनों को तो साथ-साथ आगे बढ़ना है। तनिक कृषि उद्योगों के विषय में सोच कर देखिए। यदि कृषि ने हमें उद्योगों की सुदृढ़ आधारशिला रखने के लिए योग्य बनाया है, तो उन्होंने बदले में उसकी उपज को बढ़ाने में भारी योगदान दिया है। कृषि में उर्वरकों, कीटनाशकों, प्लास्टिक, बिजली और डीज़ल के निरंतर बढ़ते उपयोग के कारण उसे उद्योगों के विकास तथा प्रतिस्पर्द्धा पर आश्रित रहना ही पड़ेगा। अब तो कृषि की अनेक शाखाएँ उद्योग कहलाने का दावा कर रही हैं। रोपण उद्योग, डेरी उद्योग, तथा अधिक उपज देने वाले बीज उद्योग इसके कुछ उदाहरण हैं। जैव-प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास के बाद तो कृषि और उद्योगों के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना कठिन हो गया है। विज्ञान के निरंतर बढ़ते प्रयोग ने मुर्गी को अंडा देने वाली मशीन तथा पशुओं और सुअरों को मांस उत्पादक मशीन के रूप में देखने को विवश कर दिया है।

एक समय ऐसा भी था जब उद्योगों में आत्म-निर्भरता अत्यावश्यक मानी जाती थी लेकिन अब यही काफी नहीं है। आज जब वर्तमान विश्व का भूमंडलीकरण हो रहा है, हमारे उद्योगों को अधिक से अधिक कुशलता और प्रतिस्पर्द्धा लाने की जरूरत है। हमारे उत्पादन पूरी तरह अंतर्राष्ट्रीय स्तर के ही होने चाहिए तभी हम अन्य देशों से प्रतिस्पर्द्धा कर सकते हैं और विदेशी मुद्रा अर्जित करके अपनी राष्ट्रीय संपदा बढ़ा सकते हैं। अपने देश से गरीबी हटाने के लिए इस संपदा को न्यायोचित वितरण की पहली शर्त है।

स्वयं करने के लिए

1. नीचे भारत के चार विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों की सूचियाँ दी हुई हैं। इन्हें पढ़कर, उसके नीचे दिए कार्य कीजिए:
   (क) मछलियाँ, मुर्गियाँ, मांस, खालें, कच्ची ऊन, रेशम और दूध।
   (ख) घास, लकड़ी, छाल, बेंत, बांस, फल, काष्ठफल, पत्तियाँ, फूल, लाख, गोंद, रबड़, राल और जड़ी-बूटियाँ।
   (ग) अनाज, दालें, सब्जियाँ, तिलहन, चाय, कहवा, कोको जैसे पेय, गन्ना, तंबाकू और मसाले, पौधों के रेशे जैसे जूट।
   (घ) लौह-अयस्क, बाक्साइट, कोयला, खनिज तेल, मैंगनीज, प्राकृतिक गैस, चूने का पत्थर, अभ्रक, यूरेनियम आदि।
   (i) चारों सूचियों में से प्रत्येक के लिए उपयुक्त शीर्षक दीजिए।
   (ii) ऊपर दिए गए चार वर्गों में से प्रत्येक से संबंधित विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की सूची बनाइए।
2. "क" और "ख" दो देश हैं। दोनों के पास खनिज तेल और प्राकृतिक गैस के भंडार हैं। वे अपने संसाधनों का निम्नलिखित तरीके से उपयोग करते हैं :
   "क" देश अपने सारे खनिज तेल का निर्यात करके भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा तुरंत प्राप्त कर लेता है।
   "ख" अपने कच्चे तेल का परिष्करण करता है और उससे प्राप्त निम्नलिखित उत्पादों को देशी तथा विदेशी बाज़ारों में बेच देता है :
   (i) स्नेहक तेल (ii) फर्नेस तेल (iii) डीजल (iv) मिट्टी का तेल (v) सफेद तेल (vi) पैट्रोल (vii) एल.पी.जी. अर्थात् खाना पकाने का गैस (viii) नैप्था (ix) रासायनिक गोंद (x) ग्रीस (xi) मेन्थाल (xii) नाइलोन (xiii) पोलिएस्टर
   (i) इन दोनों देशों द्वारा अपनाए गए अलग-अलग तरीकों के आर्थिक प्रभावों की निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर विवेचना कीजिए :
   (क) उद्योग (ख) रोजगार (ग) राष्ट्रीय संपदा (घ) प्राकृतिक उपहार में मूल्य अभिवृद्धि (ङ) जीवन स्तर (च) विदेशी मुद्रा का अर्जन
3. जमशेदपुर का इस्पात कारखाना
   (क) महानगर तथा अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के नदी पत्तन कलकत्ते से 250 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।
   (ख) कलकत्ता और मुंबई को मिलाने वाले मुख्य रेल मार्ग पर स्थित है।
   (ग) सुवर्ण रेखा तथा खारकई नदियों के संगम पर स्थित है।
   (घ) इसके पास नया शहर टाटा नगर है।
   (ङ) उड़ीसा के मयूरभंज तथा बोनाई जिलों से तथा बिहार के सिंहभूम जिले से

लौह-अयस्क प्राप्त करता है।

(च) बिहार में झरिया की निजी कोयला खानों से कोकिंग कोयला प्राप्त करता है।

(छ) उड़ीसा में गंगापुर से चूने का पत्थर मंगाता है।

(ज) उड़ीसा के क्योंझर तथा मयूरभंज जिलों से मैंगनीज प्राप्त करता है।

(i) जमशेदपुर में इस्पात के कारखाने की स्थिति के लिए उत्तरदाई सभी संभावित कारकों की एक सूची बनाइए।

(ii) ज्ञात कीजिए कि जमशेदपुर में इस्पात उद्योग के तेजी से विकसित होने में परिवहन और संचार के साधनों ने क्या सहायता की है।

4. विभिन्न आयामों के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जाता है।

I. स्वामित्व का आधार

(क) खनिज तेल (ड्रिलिंग परिष्करण से लेकर विपणन तक)

(ख) वनस्पति तेल उद्योग

(ग) सीमेंट उद्योग

(घ) विगत कुछ वर्षों में महाराष्ट्र तथा गुजरात में स्थापित चीनी के कारखाने

(ङ) प्रत्येक के लिए निम्नलिखित में से उपयुक्त शीर्षक चुनिए — सम्मिलित क्षेत्र, सार्वजनिक क्षेत्र, निजी क्षेत्र तथा सहकारी क्षेत्र।

II. प्रमुख कार्यों के आधार पर

(क) आधारभूत उद्योग

(ख) उपभोक्ता उद्योग

(i) निम्नलिखित को उपर्युक्त दो वर्गों में विभाजित कीजिए।

(1) रेडियो टेलीविजन सेट (2) लोहा तथा इस्पात (3) मशीनी औजार (4) कागज (5) साबुन तथा श्रृंगार सामग्री (6) आधारभूत व्यापक औषधियाँ।

(ii) एसेम्बली लाइन वाले पाँच उद्योगों के नाम बताइए।

III. उद्योगों के आकार के आधार पर

(क) बड़े पैमाने के उद्योग

(ख) छोटे पैमाने के उद्योग

(ग) ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग

निम्नलिखित उद्योगों का वर्गीकरण उपर्युक्त तीन शीर्षकों के अंतर्गत कीजिए।

(1) खादी (2) हस्तशिल्प (3) व्यापारिक वाहन (4) इलेक्ट्रॉनिक सामान (5) साइकिल (6) आधुनिक कृत्रिम, तथा (7) मिश्रित वस्त्र उद्योग।

IV. कच्चे माल और तैयार माल के परिमाण तथा भार के अनुसार

(क) भारी उद्योग

(ख) हल्के उद्योग

निम्नलिखित का उपर्युक्त दो शीर्षकों के अंतर्गत वर्गीकरण करिए —

(1) जलयान-निर्माण (2) बिजली के बल्ब (3) उपभोक्ता इलैक्ट्रॉनिक्स (4) लोहा और इस्पात (5) घड़ियाँ (6) खनिज तेल।

कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योग

वस्त्र, चीनी, वनस्पति तेल तथा रोपण उद्योग के लिए कच्चा माल कृषि से मिलता है। इसलिए इन्हें कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योग कहते हैं।

वस्त्र उद्योग

कपास, जूट, रेशम तथा ऊन वस्त्र उद्योग के लिए आधारभूत कच्चा माल है। कपास, जूट, रेशम और ऊन प्रत्यक्ष रूप से मृदा से मिलते हैं। ये कीटों और पशुओं से प्राप्त उत्पाद हैं।

सूती वस्त्र

सूती वस्त्र, भारत के सबसे पुराने उद्योगों में से एक है। इसका इतिहास सिंधु घाटी सभ्यता काल से जुड़ा है। जब यहाँ बने सूती वस्त्रों की माँग यूरोप और मध्यपूर्व में थी, उस समय यह ग्रामीण या कुटीर उद्योग था। इसकी एकमात्र मशीन चर्खा थी, जो सरल और अति कल्पनाशील थी। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में कलकत्ते के निकट फोर्ट ग्लोस्टर में पहली सूती मिल की स्थापना हुई। लेकिन इस उद्योग का वास्तविक प्रारंभ 1854 में हुआ जब मुंबई में सूती मिल की स्थापना पूरी तरह से भारतीय पूँजी से की गई।

भारतीय वस्त्र उद्योग के कई ऐसे पहलू हैं, जो उल्लेखनीय हैं। यह उद्योग विशेष रूप से कपास, अपने देश के कच्चे माल पर आधारित है। 1995-96 में वस्त्र उद्योग ने 6.4 करोड़ व्यक्तियों को रोज़गार का अवसर दिया, जो कृषि के बाद दूसरा बड़ा क्षेत्र है। श्रम-प्रधान उद्योग होने के कारण भारत जैसे देश के लिए, यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह अकेले ही कुल घरेलू (देशी) उत्पाद का 4 प्रतिशत प्रदान करता है। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उद्योगों के मूल्य अधिवृद्धि का 20 प्रतिशत इसी क्षेत्र का योगदान है। इधर के वर्षों में हमारी निर्यात हुई कुल आय का एक-तिहाई इसी से मिलता है। 1996-97 में हमने लगभग 12 अरब अमेरिकन डालर अर्जित किए।

इस उद्योग से किसानों, कपास चुनने वालों और उन श्रमिकों की आजीविका चलती है जो कपास चुनने, सूत कातने, बुनने, रंगने, नमूने बनाने, सिलाई करने और पैकेज बनाने आदि कार्यों में लगे हैं। यह भारत का सर्वाधिक परंपरागत और प्रतिष्ठित उद्योग है। इस उद्योग ने परंपरा और आधुनिकता के बीच एक विवेकपूर्ण संतुलन बनाया हुआ है। जबकि सूत कातने का कार्य काफी केंद्रित है, बुनने का कार्य विकेंद्रित है। इससे विभिन्न क्षेत्रों जैसे सूती, रेशमी, ज़री का काम और कढ़ाई आदि में लगे बुनकरों को अपनी परंपरागत कुशलताओं को प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। हाथ से कातने और बुनने वाला खादी, घरों और कुटीरों में बड़े पैमाने पर रोज़गार उपलब्ध कराने की अपनी प्राचीन परंपरा आज भी निभा रहा है। भारत में वस्त्र उद्योग हमेशा से अपनी स्वयं की पूँजी पर विकसित हुआ है। दूसरी ओर आज हमारे पास अत्याधुनिक, भारी पूँजी निवेश वाली तथा तेज गति से काम करने वाली मिलों में बने वस्त्र हैं, जिनका बहुत बड़ा बाज़ार अपने देश और विदेशों में भी है।

कपड़ों का उत्पादन मुख्यतः तीन क्षेत्रों में होता है — (i) मिल (ii) शक्ति चालित करघा, एवं

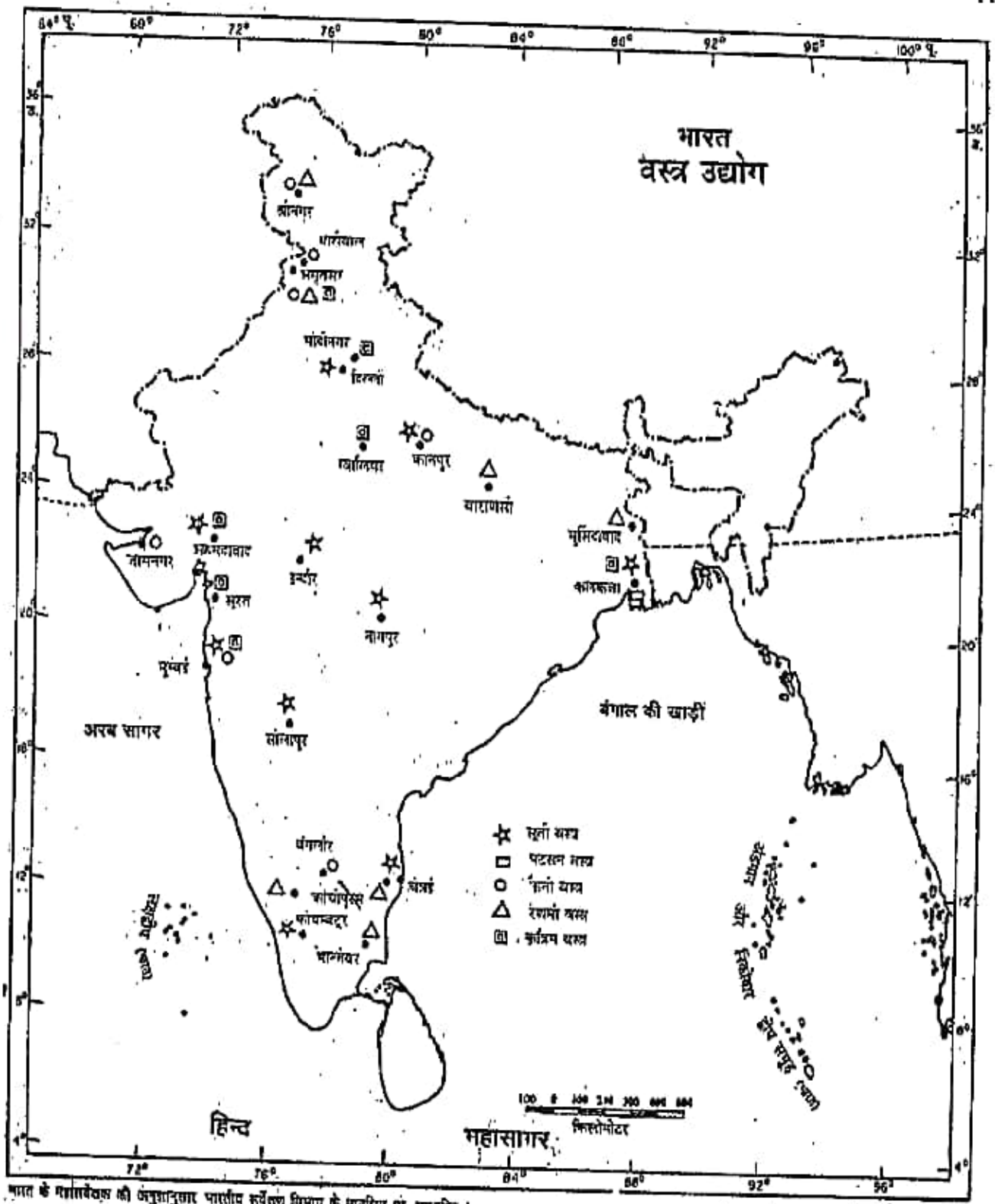

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमाएं, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित हैं, परन्तु अभी सत्यापित होनी हैं।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में वर्णित अन्तर्विन्यास विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

चित्र 7.1 भारत—वस्त्र उद्योग

भारत में वस्त्र उद्योग के प्रमुख केंद्र देखिए। किस प्रकार का वस्त्र उद्योग सर्वाधिक विस्तृत है ?

(iii) हथकरघा। इनका सम्मिलित योगदान देश के कुल कपड़ा-उत्पादन का 98.5 प्रतिशत है। इन सबका अलग-अलग योगदान ध्यान देने योग्य है। मिल क्षेत्र से सिर्फ 5.2 प्रतिशत कपड़ा-उत्पादन होता है। शक्तिचालित करघों और हथकरघों द्वारा क्रमशः 73 प्रतिशत और 20.3 प्रतिशत कपड़ा उत्पादन होता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि साड़ी-क्षेत्र को हथकरघा एवं शक्तिचालित करघा क्षेत्रों के लिए आरक्षित रखा गया है। शक्तिचालित करघा क्षेत्र बड़ी मात्रा में होज़री की वस्तुओं का निर्माण करता है जिनका मुख्य रूप से निर्यात कर दिया जाता है। हम लोग गुणवत्ता की दृष्टि से अच्छे धागों का निर्यात भी जापान और यूरोपियन आर्थिक समुदाय को करते हैं।

1997-98 में हमारे देश ने 34.5 अरब मीटर कपड़े का उत्पादन किया। प्रति व्यक्ति कपड़े की उपलब्धता बढ़कर इसी वर्ष 30.92 मीटर हो गई। 1955-56 में यह उपलब्धता केवल 15 मीटर थी। उस समय यह मात्रा सिर्फ सूती कपड़े की थी। अब सूती और मानव-निर्मित कपड़ों का अनुपात 50:50 है।

1950-51 से अब तक कुल तकुओं की संख्या लगभग तीन गुनी बढ़ गई है। कताई-मिलों की संख्या 1950-51 में 378 थी, जो बढ़कर 1997 में 1,719 हो गई। महाराष्ट्र, तमिलनाडु और गुजरात अवरोही क्रम में देश के प्रमुख वस्त्र-उत्पादक राज्य हैं।

सूती वस्त्र-उद्योग के प्रमुख केंद्र मुंबई, अहमदाबाद, कोयम्बटूर, मदुरै, इन्दौर, नागपुर, शोलापुर, कलकत्ता, कानपुर, दिल्ली, बंगलौर और हैदराबाद हैं।

हाल के वर्षों में सूती सिले-सिलाए वस्त्रों का उद्योग विदेशी बाज़ारों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए काफी तेजी से विकसित हो रहा है। भारत में सूती वस्त्र उद्योग की एक प्रमुख समस्या पुराने मिलों की पुरानी प्रौद्योगिकी और उनकी "औद्योगिक बीमारी" है। धीरे-धीरे पुरानी प्रौद्योगिकी के स्थान पर नई प्रौद्योगिकी लाई जा रही है। परन्तु हमें अभी भी उत्तम सूती कपड़ों के उत्पादन की विशाल क्षमता का उपयोग करना बाकी है, जिनके लिए संसार के औद्योगिक देशों के उच्च सामाजिक वर्ग में बहुत माँग है।

जूट या पटसन के वस्त्र

सन् 1859 में कलकत्ते के निकट पहली जूट मिल की स्थापना हुई थी। निर्यात वाला उद्योग होने के कारण इसका बड़ी तेजी से विकास हुआ। देश के विभाजन के पश्चात् अधिकतर जूट मिलें भारत में रह गईं लेकिन 3/4 जूट उत्पादन क्षेत्र बांग्लादेश (तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान) में चला गया।

1950-51 में जूट का उत्पादन 33 लाख गाँठ (प्रत्येक गाँठ 180 किलोग्राम की) था। 1996-97 तक, यह बढ़कर 97.5 लाख गाँठ हो गया। भारत संसार का दूसरा सबसे बड़ा जूट का निर्यातक देश है। जूट उद्योग में 2,50,000 श्रमिक और 40 लाख जूट की खेती करने वाले किसान लगे हुए हैं।

यह उद्योग काफी विदेशी मुद्रा कमाता था। आज इस उद्योग को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। जूट के कालीनों तथा इसके बने टाट बोरियों की माँग का घटना सबसे बड़ी चुनौती है। जूट से बनी वस्तुओं के अधिक मूल्य तथा निर्यात बाजार में इसकी कड़ी प्रतियोगिता अन्य समस्याएँ हैं। इसके अलावा निर्यात बाजार तथा घरेलू बाजार में कृत्रिम रेशों से बनी वस्तुओं का उपयोग जूट-उद्योग

के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। इसके निर्यात से हुई आय, वस्त्र उद्योग के अंतर्गत सम्मिलित है।

ऊनी वस्त्र

देश में ऊनी वस्त्रों की 50 से अधिक मिलें हैं। इनमें से अधिकतर पंजाब में हैं। यहाँ अमृतसर, धारीवाल और लुधियाना इसके प्रमुख केंद्र हैं। ऊनी वस्त्रों के अन्य केंद्र मुंबई, बंगलौर, जामनगर, कानपुर और श्रीनगर हैं। ऊन वस्त्रों का घरेलू उत्पादन 1997-98 में 44,000 टन था। ऊन वस्त्र उद्योग की माँग को पूरा करने के लिए 16 से लेकर 18 हज़ार टन ऊन विदेशों से आयात की गई।

रेशमी वस्त्र

भारत में निर्मित रेशमी वस्त्र विश्व-विख्यात हैं। रेशम के कीड़े शहतूत की पत्तियाँ खिलाकर पाले जाते हैं। रेशम के उत्पादन का 90 प्रतिशत भाग इसी किस्म का होता है। इसका उत्पादन मुख्यतः दक्षिण के तीन राज्यों — कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश में होता है। कृष्य भूमि के आधे प्रतिशत से कम भाग पर शहतूत के पेड़ लगे हैं। इसे बढ़ाकर कुल कृष्य क्षेत्रफल का एक प्रतिशत किया जा सकता है। इससे रेशम का उत्पादन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का अवसर बढ़ाने में सहायता मिलेगी। पहले जापान कच्चे रेशम के प्रमुख उत्पादक देशों में से एक था। अब यह इस क्षेत्र से हटता जा रहा है। परन्तु चीन में रेशम का उत्पादन 4,000 टन से बढ़कर 35,000 टन हो गया है। भारत में रेशम का उत्पादन 10,000 टन से कम होता है। रेशमी वस्त्र उत्पादन के प्रमुख केंद्र मैसूर, कांचीपुरम, वाराणसी, श्रीनगर, मुर्शिदाबाद और अमृतसर हैं।

कृत्रिम वस्त्र

भारत में रेयान, नाइलोन, टैरीन और डेकरोन का उत्पादन होता है। ये मानव निर्मित कृत्रिम रेशे हैं। इन्हें रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा लकड़ी की लुग्दी, कोयले और पैट्रोलियम से बनाया जाता है। कृत्रिम रेशों को सूती, रेशमी और ऊनी धागों के साथ मिलाकर अच्छे वस्त्र बनाए जाते हैं। इसके बहुत अच्छे परिणाम निकले हैं। ऐसे वस्त्र न केवल आकर्षक होते हैं बल्कि अधिक टिकाऊ भी हैं और इनका रख-रखाव भी बहुत आसान है। मुंबई, अहमदाबाद, दिल्ली, सूरत, कलकत्ता, अमृतसर तथा ग्वालियर में कृत्रिम रेशों से वस्त्र बनाने के प्रमुख केंद्र हैं। कृत्रिम वस्त्रों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता पिछले दो दशकों के दौरान 15 मीटर के लगभग हो गई है।

नारियल जटा उद्योग

इस उद्योग का प्रमुख कच्चा माल नारियल का छिलका और जटाएँ हैं। इसका अधिकतर कच्चा माल केरल राज्य से मिलता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस उद्योग से अनेक लोगों को विशेषकर महिलाओं को रोजगार मिल सकता है। नारियल की जटाओं से बने सामान का निर्यात करके विदेशी मुद्रा कमाई जाती है। इस उद्योग से 5 लाख से भी अधिक लोगों की जीविका चलती है। नारियल की रस्सियाँ और चटाइयाँ प्रमुख उत्पादित वस्तुएँ हैं। 1997-98 में नारियल जटा से बनी वस्तुओं के निर्यात से 6.8 करोड़ अमेरिकन डॉलर की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई।

चीनी उद्योग

भारत संसार में गन्ने का सबसे बड़ा उत्पादक है। गुड़ और खांडसारी को मिलाकर चीनी के उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान है। 1950-51 में देश में 138 चीनी मिलें थी। जिनकी संख्या अब 460 हो गई है। गन्ना एक शीघ्र नष्ट होने वाला पदार्थ है। इसलिए यह उद्योग विस्तृत क्षेत्र में फैला है। इसका मुख्य आधार गाँव हैं। चीनी का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। फिर भी यदा-कदा इसके उत्पादन में उतार चढ़ाव आते रहे हैं। चीनी का उत्पादन 1950-51 में 11.3 लाख टन था जो 1997-98 में बढ़कर 1.28 करोड़ टन हो गया है। 1998-99 में यह 1.5 करोड़ टन तक पहुँच सकता है। लेकिन साथ-ही-साथ चीनी का घरेलू उपभोग भी काफी बढ़ गया है। इस उद्योग में अभी भी दो प्रकार से मूल्य निर्धारित होता है और सार्वजनिक वितरण प्रणाली में अनिवार्य उगाही लगाई जाती है। अब दो प्रकार से निर्धारित मूल्यों के बीच का अंतर बहुत कम है।

चीनी उद्योग का प्रारंभ निजी क्षेत्र में हुआ और सबसे ज्यादा चीनी मिलें उत्तर प्रदेश और बिहार में हुआ करती थीं। लेकिन अब इसका वितरण बहुत व्यापक हो गया है। चीनी की कुल 460 मिलों में से 256 सहकारी क्षेत्रों में हैं। चीनी की मिलों की स्थापना सिंचित क्षेत्रों में ही हुई है। ऐसे क्षेत्रों में आर्थिक समृद्धि भी खूब आई है। यह मौसमी उद्योग है अतः इसके लिए सहकारी क्षेत्र ही उपयुक्त है। महाराष्ट्र और अन्य दक्षिणी राज्यों के गन्ने में चीनी का अंश अधिक लगभग 10.5 प्रतिशत होता है। इसीलिए इन राज्यों में चीनी उद्योग का विस्तार तेजी से हो रहा है।

वनस्पति तेल उद्योग

तिलहनों से तेल निकालना भारतीय गाँवों की प्राचीन परंपरा है। हमारा देश संसार में तिलहनों और वनस्पति तेलों का सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत में खाना बनाने के लिए वनस्पति तेल बहुत लोकप्रिय है। इसीलिए यह इनका सबसे बड़ा उपभोक्ता बन गया है। तिलहनों की भरपूर फसल के बावजूद हमें खाद्य तेलों का आयात करना पड़ता है। मूँगफली, सरसों तथा तोरिया, सूरजमुखी के बीज, सोयाबीन और नारियल भारत के प्रमुख तिलहन हैं। विगत कुछ वर्षों में इन सभी स्रोतों से प्राप्त तेल की कमी को पूरा करने के लिए भारी मात्रा में पामआयल का आयात किया गया था। 1950-51 में खाद्य तेलों का घरेलू उत्पादन 1.7 लाख टन था, जो बढ़कर 1995-96 में 64.2 लाख टन हो गया। इसी अवधि में इसकी माँग बढ़कर 72 लाख टन हो गई। अतः इसके आयात की आवश्यकता हुई।

घी जैसा लगने के कारण हाइड्रोजन तेलों ने सामान्य तेलों का स्थान ले लिया है। लेकिन सच्चाई यह है कि हाईड्रोजनेटेड तेलों की तुलना में प्राकृतिक वनस्पति तेल अधिक पौष्टिक है। अब परिष्कृत वनस्पति तेलों (रिफाइण्ड आयल) का उपभोग बढ़ रहा है। यह तेल मुहरबंद डिब्बों और पैकिटों में उपलब्ध है। वनस्पति तेलों, विशेषकर मूंगफली के तेल के उत्पादन में गुजरात राज्य अग्रणी है। यह उद्योग भारत के विस्तृत क्षेत्रों में फैला है क्योंकि सभी जगह कोई न कोई तिलहन अवश्य पैदा होता है तथा सभी क्षेत्रों में इसकी माँग भी रहती है। विगत कुछ वर्षों में वनस्पति तेलों के मूल्यों में भारी वृद्धि होने के बावजूद चीनी की भांति इनका उपभोग भी तेजी से बढ़ रहा

है। इस दृष्टि से तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन की स्थापना उचित ही है। थोड़े समय में ही इसके अच्छे परिणाम भी सामने आने लगे हैं।

कागज उद्योग

भारत में सन् 1812 में पहली बार मशीनों से कागज बनाया गया। स्वतंत्रता से पूर्व कागज की 15 मिलें थीं, जिनमें एक लाख टन कागज बनाया जाता था। जनसंख्या में वृद्धि तथा शिक्षा के व्यापक प्रसार के कारण कागज की माँग दिनों-दिन बढ़ती ही जा रही है। वन संसाधनों के सीमित होने के कारण लकड़ी की लुग्दी की आपूर्ति कम है। इसीलिए कागज बनाने में बाँस, सवाई घास तथा गन्ने की खोई का उपयोग निरंतर बढ़ता रहा है। रद्दी कागज तथा फटे पुराने कपड़ों का पुनर्चक्रण करके कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जाता है। सन् 1997-98 में कागज की 380 मिलें थीं। इनमें 28 बड़ी और शेष छोटी इकाइयाँ थीं, जिनमें से प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 33,000 टन थी। 1997-98 में कागज और गत्ते का कुल उत्पादन 40 लाख टन हुआ। हमें अपनी 10 प्रतिशत माँग की पूर्ति के लिए कागज का आयात करना पड़ता है।

जिस कागज पर अखबार छपते हैं, उसे अखबारी कागज (न्यूजप्रिंट) कहते हैं। इसकी माँग का बढ़ना भी अवश्यंभावी है। नेपानगर (मध्य प्रदेश) में अखबारी कागज बनाने वाली भारत की पहली मिल स्थापित की गई थी। अब इसकी क्षमता प्रति वर्ष 7,500 टन अखबारी कागज़ बनाने की कर दी गई है। पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र इस उद्योग में अग्रणी राज्य हैं। लेकिन अब देश के विभिन्न भागों में कागज की नई मिलें खुल गई हैं। देश में अखबारी कागज का कुल उत्पादन 4 लाख टन है फिर भी 5 लाख टन का आयात अनिवार्य है।

खनिजों पर आधारित उद्योग

भारत में धातुओं का व्यापक रूप से उपयोग होता आ रहा है। किसानों तथा घरेलू उपयोग के लिए वस्तुएँ बनाने का दायित्व गाँव के लुहार का होता है। कुतुब मिनार के पास स्थित जंग-रहित विशाल लौह स्तम्भ चौथी शताब्दी में लगाया गया था। यह इसका प्रमाण है कि हमारे पूर्वजों को उत्तम कोटि के इस्पात बनाने की निपुणता थी। धातु कर्म के आधुनिक कारखाने बहुत बड़े होते हैं। इन्हें किसी अनुकूल स्थान पर ही लगाया जाता है। लोहा और इस्पात उद्योग इसका एक उदाहरण है।

लोहा और इस्पात उद्योग

पश्चिम बंगाल के कुल्टी नामक स्थान पर सन् 1870 में आधुनिक रीति से इस्पात बनाने का छोटा-सा कारखाना खोला गया था। लेकिन बड़े पैमाने पर इस्पात बनाने के लिए विचार को मूर्त रूप तब मिला जब 1907 में बिहार के जमशेदपुर में लोहे और इस्पात का कारखाना स्थापित किया गया। इसमें सन् 1912 में उत्पादन शुरू हुआ। इस नगर का नामकरण जमशेदजी टाटा के नाम पर किया गया। इसके बाद बर्नपुर और भद्रावती में क्रमशः 1919 तथा 1923 में लोहे और इस्पात के कारखाने खोले गए। लेकिन भारतीय लोहा और इस्पात उद्योग की वास्तविक उन्नति स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही हुई। जमशेदपुर में स्थित टाटा के कारखाने को छोड़कर शेष सभी कारखाने सार्वजनिक क्षेत्र में हैं और इनकी देखभाल स्टील ऑथरिटी ऑफ इंडिया (सेल) करती है।

भिलाई और बोकारो के इस्पात के कारखाने सोवियत संघ की सहायता से लगाए गए थे। दुर्गापुर और राउरकेला कारखाने क्रमशः ब्रिटेन तथा जर्मनी की तकनीकी सहायता से स्थापित किए गए थे।

सारणी 7.1
सार्वजनिक क्षेत्र के इस्पात कारखानों (सेल) में बिक्री योग्य इस्पात का उत्पादन (1996-97)

कारखाना	उत्पादन (दस लाख में)
भिलाई	3.4
दुर्गापुर	1.1
राउरकेला	1.2
बोकारो	3.0
मिश्र इस्पात कारखाना	0.2
सेलम	0.1
कुल (सेल)	9.1
इस्को (बर्नपुर-कुल्टी)	0.3
कुल	9.4

लोहा और इस्पात एक भारी उद्योग है। इसका सारा कच्चा माल भारी और अधिक परिमाण वाला होता है। लौह-अयस्क, कोकिंग कोयला तथा चूने का पत्थर इसके प्रमुख कच्चे माल हैं। अतः ये कारखाने वहीं स्थापित किए गए हैं जहाँ आस-पास ही कच्चा माल विशेषरूप से कोकिंग कोयला विपुल मात्रा में मिलता है। इसके तैयार उत्पाद भी भारी होते हैं। अतः इनके वितरण के लिए परिवहन की उत्तर व्यवस्था भी अनिवार्य है। यही कारण है कि इस उद्योग का केंद्रीकरण पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश में फैले छोटानागपुर के पठारी क्षेत्र में हुआ। लोहा और इस्पात एक आधारभूत उद्योग है। भारी मशीन तथा औजार उद्योग इसी पर आधारित हैं। अनेक हल्के, मध्यम, छोटे और कुटीर उद्योग भी इसी पर आश्रित हैं। परिणामस्वरूप लोहे और इस्पात के उत्पादन को किसी देश के आधुनिकीकरण तथा औद्योगीकरण का सूचकांक माना जाता है। इस उद्योग की स्थापना के लिए बहुत बड़ी मात्रा में पूँजी, बुनियादी सुविधाएँ जैसे – आधुनिक परिवहन तथा संचार के अच्छे साधन, तथा शक्ति के साधनों की आवश्यकता होती है। फिर भी भारी पूँजी निवेश के अनुपात में रोजगार के अवसर नहीं पैदा होते। इसकी प्रौद्योगिकी को सदैव आधुनिक बनाए रखना पड़ता है। अनुसंधान और विकास की निरंतर आवश्यकता होती है। इसके अलावा बड़ी लंबी प्रतीक्षा के बाद लाभांश मिलना शुरू होता है। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही सरकार ने इस आधारभूत उद्योग के क्षेत्र में कदम रखा तथा भारी पूँजी लगाकर कई बड़े कारखाने स्थापित किए हैं।

विशाखापत्तनम का इस्पात कारखाना दक्षिण भारत का पहला तट पर स्थित एकीकृत कारखाना है। इसे विदेशों से उत्तम कोटि के कोकिंग कोयला इस्पात का आयात करने और अपने उत्पादों को सीधे विदेशी बाज़ार में निर्यात करने की सुविधा है। 1997-98 में इसने 22 लाख टन बिक्रीयोग्य इस्पात और 5 लाख टन कच्चे लोहे का उत्पादन किया। इसी वर्ष 8 लाख टन इस्पात और कच्चे लोहे का निर्यात किया जिससे इसे 600 करोड़ रुपयों की विदेशी मुद्रा मिली। यह दक्षता के अंतर्राष्ट्रीय स्तर को बनाए रखने में सफल हुआ है।

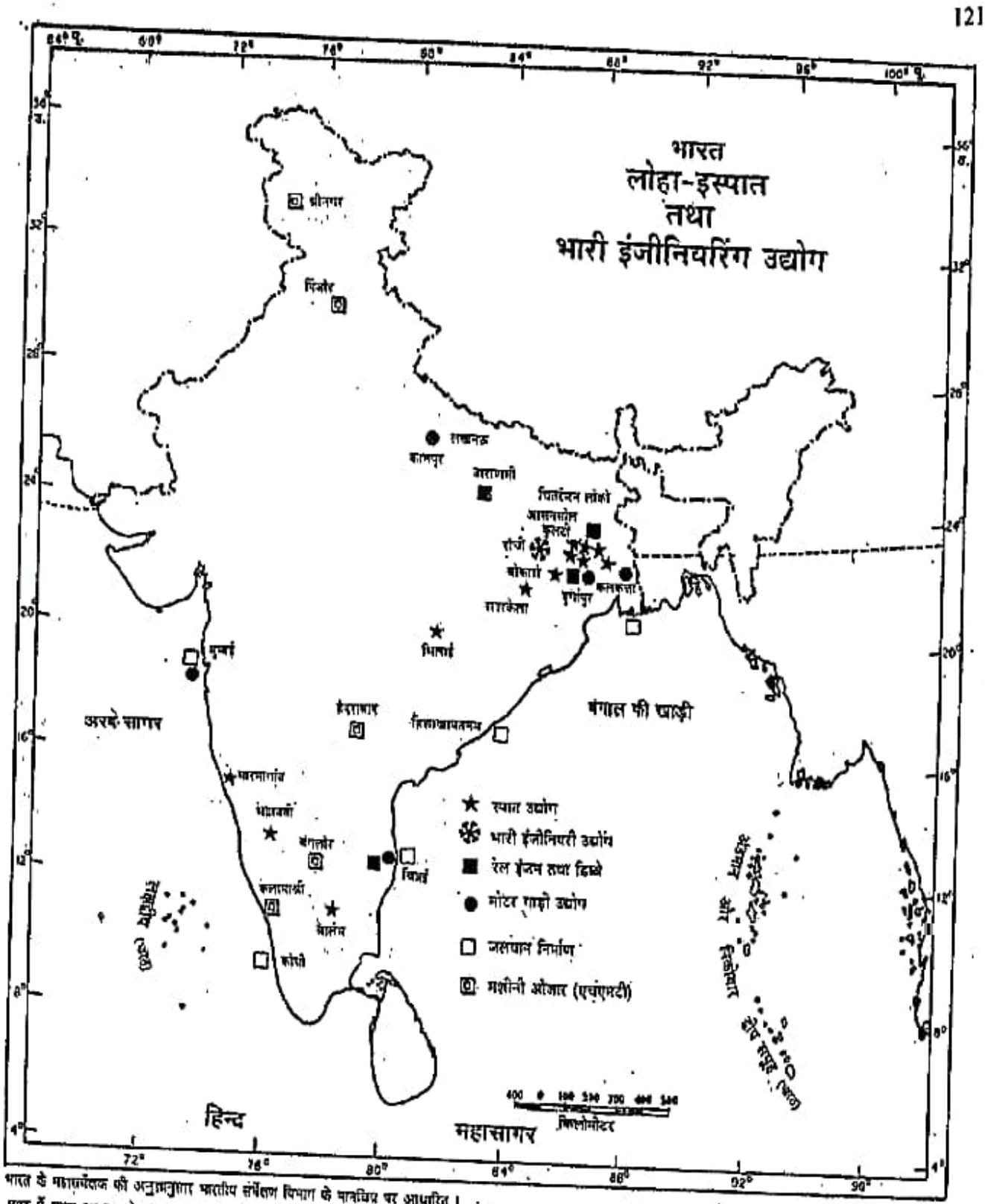

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अंतर्राज्यीय विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1990

चित्र 7.2 भारत—लोहा-इस्पात एवं भारी इंजीनियरिंग उद्योग

लोहा-इस्पात, भारी इंजीनियरींग और यातायात उद्योगों के केंद्रों को देखिए। इन सभी उद्योगों का सम्मिलित रूप से संकेद्रण कहाँ है ?

छोटे इस्पात कारखाने : जैसा इनके नाम से स्पष्ट है, ये कारखाने अपेक्षाकृत छोटे आकार के हैं। इनमें इस्पात बनाने के लिए रद्दी (स्क्रैप) धातु और स्पंज लोहे को कच्चे माल के रूप में और उन्हें गलाने के लिए विद्युत ताप भट्टियों का उपयोग किया जाता है। इन कारखानों में मृदु एवं मिश्र, दोनों ही प्रकार के इस्पात दिए गए विनिर्देशों के अनुसार बनाए जाते हैं। 1997-98 में इन्होंने 85 लाख टन इस्पात पिंड का उत्पादन किया। देश में लगभग 200 छोटे कारखाने हैं।

चीन की अपेक्षा हमारे देश में इस उद्योग का प्रारंभ बहुत अच्छा था। 1950-51 में भारत ने 17 लाख टन कच्चे लोहे और 15 लाख टन इस्पात का उत्पादन किया। अब चीन हमसे कई गुना अधिक इस्पात बनाता है। 1988 में वहाँ 5.9 करोड़ टन इस्पात का उत्पादन हुआ था।

सारणी 7.2

तैयार इस्पात का कुल उत्पादन (दस लाख टन में)

1950-51-1997-98

1950-51	1960-61	1970-71	1980-81	1990-91	1997-98
1.04	2.39	4.64	6.82	13.53	23.4

जैसा कि सारणी 7.2 में दिया गया है, लोहे और इस्पात उद्योग का विकास बहुत धीमी गति से हुआ है। पिछले दशक में आकर इसका उत्पादन कुछ तेजी से बढ़ा। 1997-98 में उत्पादन 2.3 करोड़ टन से अधिक बढ़ा।

इंजीनियरिंग उद्योग

एक समय था जब हम उद्योगों में बनी सभी वस्तुओं के लिए विदेशों पर आश्रित थे। इसके बाद अपने देश में हमने अनेक वस्तुएँ बनानी शुरू कर दीं। इनके लिए सभी मशीनें विदेशों से मंगानी पड़ती थी। लेकिन आज बहुत कुछ बदल गया है। अब हम वस्त्र, चीनी, कागज, चाय, सीमेंट, खनन तथा पेट्रो रसायन उद्योगों के लिए सम्पूर्ण मशीनें स्वयं बनाते हैं। संसार के बहुत से देशों में हम अनेक परियोजनाएँ प्रारंभ से अंत तक पूरी कर चुके हैं। रांची का भारी इंजीनियरिंग कारखाना लोहे और इस्पात के कारखानों के लिए डिजाइन तथा विशालकाय मशीनें बनाता रहा है। विविध प्रकार के इंजीनियरिंग के समान न केवल घरेलू बाजार के लिए अपितु विदेशी बाजारों के लिए भी तैयार किए जाते हैं। इनसे अत्यावश्यक विदेशी मुद्रा का अर्जन होता है।

हिन्दुस्तान मशीन टूल्स, बहुत ऊँचे अंतर्राष्ट्रीय स्तर की विभिन्न प्रकार की मशीनें तथा सूक्ष्म उपकरण तैयार करता है। इसके कई उत्पादन केंद्र हमारे देश में हैं।

हल्के इंजीनियरिंग सामान के उत्पादन में भारत विकासशील देशों में अग्रणी है। हमारे देश ने अफ्रीका और एशिया के अनेक देशों में औद्योगिक एस्टेटों की स्थापना की है।

परिवहन उपकरण उद्योग

रेल

भारतीय रेल यात्रियों और सामान के परिवहन के साथ-साथ अपनी आवश्यकता के उपकरण जैसे रेल इंजन, सवारी और मालगाड़ियों के डिब्बे भी बनाती है। यह अनुसंधान और विकास का काम भी स्वयं करती है। रेलवे जनता के लिए देश में विकसित होने वाली प्रौद्योगिकी के ऊँचे उठते हुए स्तर की प्रतीक बन गई है।

रेल इंजन तीन प्रकार के हैं — भाप इंजन, डीजल इंजन तथा विद्युत चालित इंजन। कोयले से चलने वाले भाप इंजनों का उपयोग घटता जा रहा है। इसका स्थान डीज़ल तथा विद्युत चालित् इंजन लेते जा रहे हैं। ये इंजन अधिक शक्तिशाली होते हैं तथा इनमें ईंधन की खपत भी कम होती है।

भारत में डीज़ल इंजन वाराणसी में तथा विद्युत चालित इंजन चितरंजन में बनते हैं। मीटर गेज के इंजन "टेल्को" द्वारा जमशेदपुर में बनाए जाते हैं। तमिलनाडु में चेन्नई के पास पैराम्बूर में सवारी गाड़ी के डिब्बे बनाए जाते हैं। पंजाब के कपूरथला नगर में भी रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना लगाया गया है। मालगाड़ी के डिब्बे भारत में कई स्थानों पर बनाए जाते हैं।

1996-97 में चितरंजन के कारखाने ने बड़ी लाईन के लिए 155 विद्युत इंजन बनाए। वाराणसी में बड़ी और छोटी लाईनों के लिए क्रमशः 157 और 14 डीज़ल इंजनों का निर्माण किया गया। भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, भोपाल ने भी इस क्षेत्र में अनुसंधान और विकास का काम किया है। पेराम्बूर और कपूरथला में क्रमशः 1,010 और 920 सवारी डिब्बों का निर्माण हुआ। बंगलौर में रेल के पहिए की धुरी बनाने का एक कारखाना है। अपने उपकरण आदि के निर्माण में रेलवे पूरी तरह आत्मनिर्भर है। रेल विभाग दूसरे देशों के लिए सलाह तथा रेल उपकरण बनाने के ठेके भी लेता है।

सड़क

रेलों की तुलना में सड़क परिवहन अधिक व्यापक है। स्वतंत्रता के समय भारत में व्यापारिक वाहन जैसे लारी, ट्रक तथा बसें आदि बहुत कम बनते थे। 1950-51 में व्यापारिक वाहनों का कुल उत्पादन 8,600 था। अन्य वाहन जैसे कार, जीप और लैंडरोवर आदि का उत्पादन 7,900 था। 1997-98 में 2,19,000 व्यापारिक वाहन और 32,03,600 कार, मोटर साइकिलें, स्कूटर तथा मोपेडों का निर्माण किया गया।

भारत संसार में तिपहिया गाड़ियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। 1997-98 में इसने 2,34,000 तिपहिया गाड़ियों का उत्पादन किया। यह उद्योग दिल्ली, मुंबई, पुणे, चेन्नई, कलकत्ता, लखनऊ, इंदौर, हैदराबाद और बंगलौर में है।

देश में साइकिलों का वार्षिक उत्पादन लगभग 1 करोड़ है। भारत में निर्मित साइकिलों के निर्यात के लिए अच्छा बाजार उपलब्ध है।

पोत निर्माण

मुंबई, कलकत्ता, कोची, विशाखापत्तनम तथा मार्मागाओं भारत के प्रमुख पोत निर्माण केंद्र हैं। ये सभी सार्वजनिक क्षेत्र में हैं। निजी क्षेत्र के पोत प्रांगण स्थानीय मांग की पूर्ति करते हैं। जापानी सहायता से विकसित कोची का पोत प्रांगण देश का नवीनतम तथा सबसे बड़ा पोत प्रांगण है। इसमें 86,000 अचल टन भार (डी.डब्ल्यू. टी) की क्षमता वाले पोत बनाए जा सकते हैं। विशाखापत्तनम में 45,000 अचल टन भार वाले पोत बनाए जा सकते हैं। सन् 1947 से अब तक विशाखापत्तनम पोत प्रांगण में 89 पोतों का निर्माण हो चुका है।

सूखी गोदियाँ बड़े पोतों की मरम्मत के लिए होती हैं। सामान्यतः ऐसी गोदियों में 10,000 अचल टन भार वाले जहाजों की मरम्मत होती है। लेकिन मुंबई की एक गोदी में 20,000 अचल टन भार वाले

पोत आ सकते हैं। विशाखापत्तनम में 70,000 अचल टन भारत तथा कोची में 1,00,000 अचल टन भार वाले पोतों की मरम्मत की जा सकती है। कोची के पोत प्रांगण में 75,000 अचल टन भार वाले तीन पोतों का निर्माण हो चुका है। अब भारतीय नौसेना के लिए युद्ध पोतों का निर्माण होता है। भारत में अब विमान वाहक पोतों के निर्माण की योजना भी बनाई जा रही है। कार्य के प्रारंभ होने के बाद ऐसे पोतों का निर्माण पूरा करने में कुछ वर्ष लगेंगे। 62 मत्स्यन पोतों का निर्माण पूर्णतः स्वदेशी है। 26 और ऐसे पोत बनाए जा रहे हैं।

वायुयान उद्योग

भारत में नागरिक विमानों का निर्माण शुरू नहीं हुआ है। लेकिन रक्षा-उपकरणों में आत्मनिर्भरता की दृष्टि से बंगलौर, कोरापुट, नासिक, हैदराबाद, कानपुर तथा लखनऊ में वायुयान उद्योगों की स्थापना की गई। इनमें से प्रत्येक स्थान को कुछ निश्चित कार्यों में विशेषज्ञता प्राप्त है। भारत ने किरण एम के-2 नामक जेट प्रशिक्षण वायुयान का विकास किया है। अब हम इसका निर्माण भी करने लगे हैं। देश में चेतक और चीता नामक हेलीकॉप्टर भी बन रहे हैं। अपने देश में जगुआर, मिग-21 तथा मिग-27 नामक युद्धक वायुयान तथा उनके इंजन बनाए जाते हैं।

बिजली का सामान तथा भारी विद्युत उपकरण

भारत में विभिन्न प्रकार के बिजली के सामान तथा उपस्कर बनाए जाते हैं। लेकिन उससे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि बिजली के भारी और बड़े-बड़े उपकरणों का भी उत्पादन करता है। इनमें बिजली के मोटर, ट्रांसफार्मर, जल-टरबाइन और बिजली के ट्रैक्शन मोटर प्रमुख हैं। भोपाल, हरिद्वार, त्रिची, हैदराबाद, रानीपेट, बंगलौर और जगदीशपुर बिजली के भारी उपस्कर बनाने वाले प्रमुख केंद्र हैं। उद्योगों की अनेक इकाइयाँ घरेलू तथा विदेशी बाजारों के लिए ट्रांसमिशन लाइनों की टावर्स बनाती हैं।

इलैक्ट्रॉनिक उद्योग

सन् 1940 के दशक के अंतिम वर्षों में हमारे देश में केवल रेडियो सेट बनाए जाते थे। इसके बाद इलैक्ट्रॉनिक उद्योग ने बड़ी तेजी से उन्नति की है। सन् 1983 में 1,360 करोड़ रुपयों के इलैक्ट्रॉनिक सामान का उत्पादन हुआ जो बढ़कर 1988 में 6,500 करोड़ रुपयों का हो गया। यह वृद्धि लगभग पाँच गुनी है। 1987-88 की केवल एक वर्ष की अवधि में इसके उत्पादन में 37.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस उद्योग में अनेक प्रकार के उपकरण बनाए जाते हैं। इनमें उपभोक्ता इलैक्ट्रॉनिक के अंतर्गत रेडियो तथा टी.वी. सेट, नियंत्रण यंत्र और औद्योगिक इलैक्ट्रॉनिक, कंप्यूटर प्रणाली, संचार और प्रसारण उपकरण, वायु अंतरिक्ष तथा प्रतिरक्षा उपकरण इलैक्ट्रॉनिक पुर्जे मुख्य हैं। भारत इलैक्ट्रॉनिक सामान का निर्यात करने वाला प्रमुख देश बनता जा रहा है। कंप्यूटर के हार्डवेयर के अलावा साफ्टवेयर के निर्माण में भारत की बड़ी ऊँची प्रतिष्ठा बन गई है। इसकी विदेशों में बहुत माँग है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में इलैक्ट्रॉनिक सर्वाधिक तेजी से विकसित होने वाला उद्योग है। 1997-98 में इसका कुल उत्पादन 32,070 करोड़ रुपयों के मूल्य का था, जो पिछले वर्ष की अपेक्षा 920% की वृद्धि थी। इसी वर्ष निर्यात 9,500 करोड़ रुपए तक पहुँच

गया। नवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक यह 49,000 करोड़ रुपए तक पहुँचने की आशा है। औद्योगिक एस्टेट की तरह इलैक्ट्रॉनिक प्रोद्योगिकी पार्कों की स्थापना कई स्थानों पर की जा रही है।

रसायन उद्योग

लोहा तथा इस्पात, इंजीनियरिंग तथा वस्त्र उद्योग के बाद रसायन उद्योग का चौथा स्थान है। पिछले कुछ वर्षों में कार्बनिक तथा अकार्बनिक रसायन उद्योग ने बड़ी तेजी से विकास किया है। इन भारी रसायनों से अनेक उत्पाद बनाए जाते हैं। इनमें औषधियाँ, रंगाई के सामान, नाशकमार, प्लास्टिक, पेंट आदि उत्पादन उल्लेखनीय हैं।

नाशकमार दवाओं में कीटनाशक, खरपतवार नाशक, फफूंद नाशक और कृंतकनाशी, कृषि और जन स्वास्थ्य के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। डी.डी.टी. बनाने का कारखाना दिल्ली में सन् 1954 में लगाया गया था। 1996-97 में इसका उत्पादन 900 अरब रुपए मूल्य का था। निर्यात में इसका हिस्सा 10% था और कस्टम में 20% था।

औषधि निर्माण उद्योग के क्षेत्र में भारत तीसरी दुनिया के देशों में अग्रणी बन गया है। इसमें विभिन्न प्रकार की औषधियों का निर्माण किया जाता है। देश मूलभूत तथा व्यापक (बल्क) औषधियों के उत्पादन में लगभग आत्मनिर्भर बन गया है। अब भी कुछ आयात आवश्यक है। लेकिन इसकी क्षति पूर्ति एक सीमा तक कुछ औषधियों के निर्यात से हो जाती है। सन् 1996-97 में लगभग 12,680 करोड़ रुपए मूल्य की औषधियों का निर्यात किया गया।

पेट्रो-रसायन उद्योग

अपने उत्कृष्ट गुणों के कारण पेट्रो रसायन उत्पाद, परंपरागत कच्चे माल जैसे लकड़ी, शीशा और धातु का स्थान ले रहे हैं। घरों, कारखानों और खेतों में इनका उपयोग हो रहा है। उदाहरण के लिए, प्लास्टिक के उपयोग से क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहे हैं। आप अब तक अशुद्ध पेट्रोलियम के शोधन से प्राप्त अनेक उत्पादकों के विषय में जान चुके हैं। यह उद्योग मुंबई के निकट तथा वदोदरा में केंद्रित हो गया है। अब इसका प्रसार देश के अन्य भागों में भी हो रहा है।

मुख्य पेट्रो रसायनों का उपभोग 1995-96 में 30 लाख टन था और 2002 तक यह बढ़कर 68 लाख टन होने की संभावना है। अभी हमारे देश में 14 खनिज तेल परिष्करणशालाएँ हैं। इनमें 3 परिष्करणशालाएँ असम में, 2 महाराष्ट्र में, और एक-एक गुजरात, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश और हरियाणा में हैं। इनको मानचित्र पर दिखाइए।

उर्वरक उद्योग

1950-51 में हमारे देश में उर्वरकों का औसत उपभोग, संसार के औसत उपभोग का एक-चौथाई भी नहीं था। आज भारत नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक के उत्पादन में तीसरे स्थान पर है। 1998-99 में देश में 1 करोड़ टन नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक और 30 लाख टन फास्फेट का उत्पादन हुआ। उर्वरकों का कुल उपभोग 1 करोड़ 65 लाख टन था। इस प्रकार हमें अपनी बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लगभग 35 लाख टन उर्वरक का आयात करना पड़ा।

सारणी 7.3
उर्वरकों का उत्पादन (दस लाख टन में)
(1950-51 – 1997-98)

	1950-51	1970-71	1990-91	1997-98
नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक	0.009	0.830	6.99	10.5
फास्फेट	0.009	0.229	2.05	3.0
कुल	0.018	1.059	9.04	13.7

उर्वरकों का उत्पादन मुख्यतः सार्वजनिक और सहकारी क्षेत्रों के हाथ में है। इनका मूल्य आंशिक रूप से अनियंत्रित कर दिया गया है लेकिन सरकार किसानों को 'सबसीडी' के रूप में भारी छूट देती रही है क्योंकि यह हमारे बढ़ते खाद्यान्न की आवश्यकताओं को पूरा करने में एक महत्त्वपूर्ण निवेश है। अब हमारे देश में 63 उर्वरक के कारखाने हैं। अभी तक ये कारखाने कच्चे माल के स्रोत के पास लगाए जाते थे। अब प्राकृतिक गैस का उपयोग कच्चे माल के रूप में हो रहा है। चूँकि प्राकृतिक गैस को पाईप द्वारा कहीं भी ले जाया जा सकता है, उर्वरक कारखानों को अब बाजार के नज़दीक बनाया जा रहा है। उर्वरक कारखाने सार्वजनिक, सहकारी, निजी और संयुक्त सभी क्षेत्रों में हैं। कुछ कारखाने पश्चिम एशिया के देशों में वहाँ के स्थानीय तथा भारतीय सहयोग से बनाए गए हैं। एक सुनिश्चित मात्रा में उर्वरक भारत को घटाए गए परिवहन व्यय पर उपलब्ध कराया जाएगा।

सीमेंट उद्योग

भवन एवं अन्य निर्माण कार्यों में मुख्य भूमिका के कारण इसे आधारीय संरचना का क्रोड उद्योग कहा जाता है। सीमेंट का पहला कारखाना सन् 1904 में स्थापित किया गया था। देश के विभिन्न भागों में आज सीमेंट के 115 बड़े और 350 छोटे कारखाने हैं जिनकी कुल क्षमता 1.10 करोड़ टन से अधिक है। 1997-98 में कुल उत्पादन 8.3 करोड़ टन था। इसमें 42.5 लाख टन का निर्यात दक्षिण, दक्षिण-पूर्व और मध्य एशिया के देशों को किया गया।

रक्षा उत्पादन

स्वतंत्रता की रक्षा निरंतर सतर्कता से ही हो सकती है। अपनी बहादुर थल, जल तथा वायु सेनाओं के लिए हमने देश में ही प्रतिरक्षा उपस्कर बनाने को प्राथमिकता दी है। हम अब अपने देश में ही भारी टैंक, युद्धपोत, तथा ध्वनि की गति से भी तेज उड़ने वाले युद्धक विमान बनाने लगे हैं। हम अब प्रक्षेपास्त्रों तथा प्रतिरक्षा के विविध प्रकार के इलैक्ट्रॉनिक उपकरणों का विकास कर रहे हैं। इसमें अनुसंधान तथा विकास के कार्यों का बहुत महत्त्व है। इनमें धन भी बहुत व्यय होता है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए –

   (क) स्पष्ट कीजिए कि कृषि और उद्योग किस प्रकार साथ-साथ बढ़ रहे हैं।

(ख) उद्योगों में हमारी प्राथमिकता क्या है – आत्मनिर्भरता या उच्च कोटि की कार्यकुशलता और प्रतिस्पर्धा ?

(ग) उद्योगों के विभिन्न वर्गीकरण कौन-से हैं ?

(घ) राष्ट्रीय संपदा को बढ़ाने में मूल्य अभिवृद्धि का क्या महत्त्व है ?

(ङ) भारत में कृषि पर आधारित उद्योग कौन-से हैं ? भारतीय अर्थव्यवस्था में उनका क्या महत्त्व है ?

(च) लोहे और इस्पात को आधारभूत उद्योग क्यों कहा जाता है ?

2. भारत में वस्त्र उद्योग तथा लोहे तथा इस्पात उद्योग की तुलना कीजिए।

3. सही जोड़े बनाइए

(क) बंगलौर	विद्युत रेल इंजन
(ख) कलकत्ता	विद्युत टरबाइन
(ग) चितरंजन	रेल के डिब्बे
(घ) कोची	तेल की बड़ी परिष्करणशाला
(ङ) गुड़गाँव	वायुयान
(च) हरिद्वार	स्टेनलेस स्टील
(छ) कपूरथला	उर्वरक
(ज) मथुरा	मणि-रत्न उद्योग
(झ) सेलम	तट पर स्थित इस्पात उद्योग
(ञ) सिंदरी	छोटी कार
(ट) सूरत	पोत-निर्माण
(ठ) विशाखापत्तनम	पटसन-वस्त्र उद्योग

4. पारिभाषिक शब्द लिखिए

(क) उद्योग, जिसका कच्चा माल तथा तैयार माल भारी और अधिक परिमाण वाला होता है, परिणामस्वरूप जिसका परिवहन व्यय बढ़ जाता है।

(ख) उद्योग; जिसके आर्थिक क्रिया-कलापों, उत्पादन तथा वितरण पर सरकार या उसकी प्रतिनिधि संस्था का नियंत्रण होता है।

5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए –

(क) पेट्रो-रसायन उद्योग

(ख) पोत निर्माण उद्योग

(ग) उर्वरक उद्योग

(घ) चीनी उद्योग

6. निम्नलिखित में से किसी एक पर कक्षा में विचार-विमर्श कीजिए।
   (क) औद्योगीकरण के तीव्र विकास में सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका
   (ख) मूल्य अभिवृद्धि में उद्योगों का योगदान
   (ग) क्या औद्योगीकरण से गरीबी दूर हो सकती है ?

मानचित्र कार्य

7. निम्नलिखित उद्योगों में से प्रत्येक के दो केंद्र भारत के मानचित्र पर दिखलाइए —
   (क) कपड़ा उद्योग
   (ख) जूट (पटसन) और ऊन (एक-एक केंद्र)
   (ग) लोहा और इस्पात उद्योग (एक अंतस्थलीय और एक तटीय)
   (घ) पोत निर्माण और
   (ङ) पेट्रो रसायन।

खंड चार

भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखाएँ

श्रम के क्षेत्रीय विभाजन तथा कृषि और उद्योगों में बड़े पैमाने पर उत्पादन के परिणामस्वरूप हमारे रहन-सहन के तरीकों में काफ़ी परिवर्तन आ गया है। आधुनिक औद्योगिक समाज के लिए परिवहन तथा संचार के साधन, पहली आवश्यकता बन गए हैं। सड़क, रेल, जल मार्ग तथा वायु मार्ग और संचार के विभिन्न साधन राष्ट्रों और उनकी अर्थव्यवस्थाओं की जीवन रेखाएँ माने जाते हैं। वे कच्चे तथा तैयार माल के द्रुतगामी यातायात में सहायता करते हैं। इस प्रकार वे उत्पादन तथा वितरण दोनों में ही सहायक हैं। वे लोगों की गतिशीलता बढ़ाने में और इससे उनकी आमदनी, रोजगार और अन्य प्रकार के संतोष में वृद्धि लाने में मदद करते हैं।

परिवहन के तीव्र साधनों और उनके साथ मिलकर और भी अधिक शक्तिशाली एवं तात्क्षणिक क्षण भर में संचार के साधनों ने हमारे विश्व को रहने के लिए एक छोटा संहत स्थान बना दिया है। बहुत से परिवार विभिन्न महाद्वीपों में फैले हुए हैं और उनके सदस्य तत्काल एक दूसरे से बात कर सकते हैं तथा कुछ घंटों के नोटिस पर एक स्थान पर मिल सकते हैं। किसी एक देश के बाजारों में हुए परिवर्तनों का प्रभाव दूसरे अनेक देशों के बाजारों पर पड़ता है। अब हम ऐसी दुनियाँ में रहते हैं जिसकी परस्पर-निर्भरता दिनों-दिन बढ़ती जा रही है।

अपने आकार, विविधताओं तथा भाषाई तथा अन्य भिन्नताओं के बावजूद आज का भारत एक सुगठित परिवार है। रेल, वायु परिवहन, समाचारपत्र, पुस्तकें, रेडियो, दूरदर्शन तथा सिनेमा इसकी भावात्मक एकता को सुदृढ़ कर रहे हैं तथा इसके सामाजिक-आर्थिक पुनरुत्थान में संलग्न हैं।

स्थानीय से लेकर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार ने देश की अर्थव्यवस्था को मज़बूत किया है। इसके द्वारा हमारा जीवन संपन्न और समृद्ध हो गया है। इससे जीवन तरह-तरह की सुख-सुविधाओं से पूर्ण बन गया है। व्यापार ने मानव संस्कृतियों की आधारी सर्वव्यापकता को बल दिया है।

अध्याय 8

व्यापार, परिवहन तथा संचार

आजकल हम निरंतर छोटी होती जा रही दुनिया में रह रहे हैं। पृथ्वी के तीनों मंडल, स्थल, जल और वायु परिवहन के उत्तम साधन बन गए हैं। सड़कों और रेलमार्गों के रूप में स्थल परिवहन का एक जाल सा बिछ गया है। जलमार्गों के अंतर्गत गहरे समुद्री, तटीय तथा अंत:स्थलीय नौपरिवहन सम्मिलित हैं। वायुमंडल केवल वायुयानों द्वारा यात्रा ही संभव नहीं बनाता अपितु इससे ही बेतार संचार संभव हो पाता है, जो संचार का तीव्रतम माध्यम है।

स्वयं करने के लिए

1. निम्नलिखित सूची में दिए गए परिवहन के साधनों को ध्यान से पढ़िए तथा इन्हें स्थल, जल और वायु, शीर्षकों के अंतर्गत वर्गीकृत कीजिए —

परिवहन के साधन

(1) वायुयान (2) बैलगाड़ी (3) बोझा ढोने वाले पशु (4) नाव (5) बस (6) नौका (7) कार (8) डोंगी (9) हेलिकाप्टर (10) जेट विमान (11) जल यान (12) बेड़ा (13) रेल गाड़ी (14) पालदार जहाज़ (15) मस्तूल युक्त पालदार जहाज़ (16) स्लेज (17) अंतरिक्ष यान (18) अंतरिक्ष शटल (19) स्टीमर (20) ट्रक (21) ट्राम (22) दूध का टैंकर

तीनों वर्गों के वाहनों की (क) काल क्रमानुसार तथा (ख) मंदतम गति से तीव्रतम गति के क्रम में अलग-अलग सूचियाँ बनाइए।

2. एक दिन ऐसा आया कि मुंबई और लंदन के बीच जलमार्ग की दूरी 7,000 किलोमीटर घट गई। इसका कारण ज्ञात कीजिए।

एक समय ऐसा भी था जब मुंबई से लंदन संदेश भेजने में कुछ महीने लग जाते थे। आज इन दोनों के बीच की दूरी केवल कुछ घंटों में तय की जा सकती है तथा

संदेशों का आदान-प्रदान तो तत्काल हो जाता है। इसी प्रकार के अन्य तथ्य एकत्रित कीजिए तथा निरंतर छोटी होने वाली दुनिया पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

3. सारणी 8.1 का अध्ययन ध्यानपूर्वक कीजिए तथा निष्कर्ष निकालकर बताइए कि प्रत्येक देश के लिए अपनी सभी आवश्यकताएँ पूरी करने का सबसे अच्छा ढंग कौन-सा हो सकता है।

सारणी 8.1

क्रम सं.	देश	आवश्यकता से अधिक उत्पादन की जाने वाली वस्तुएँ	आवश्यकता पर उत्पादन की जाने वाली वस्तुएँ	आवश्यकता से कम पड़ने वाली वस्तुएँ
1.	म्यांमार (बर्मा)	चावल और सागौन	कपास	मशीनें तथा उपकरण
2.	भारत	सूती वस्त्र, चाय, जूट, लौह-अयस्क, चमड़े का सामान	खाद्यान्न	खनिज तेल, पैट्रो-रसायन युद्ध के शस्त्रास्त्र
3.	रूस	खनिज तेल, पैट्रो-रसायन, युद्ध के शस्त्रास्त्र	खाद्यान्न, इमारती लकड़ी, कागज	सूती वस्त्र, चमड़े का सामान, चाय, उपभोक्ता वस्तुएँ
4.	जापान	कार, बस आदि इलैक्ट्रॉनिक सामान, जलयान	इमारती लकड़ी, कागज, मछली	खनिज, अयस्क, कोयला, पेट्रोलियम, खाद्यान्न, ऊन, कपास

4. सारणी संख्या 8.2 का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए और इसके नीचे दिए गए प्रश्नों का उत्तर दीजिए —

सारणी 8.2

राष्ट्रीय और राज्य महामार्ग, सड़कों का घनत्व और सवारी गाड़ियाँ

		1950-51	1995-96
1. सड़कों की लंबाई	(हजार किलोमीटर में)		
कुल	"	400.0	3,319.5
पक्की	"	157.0	1,517.3
2. राष्ट्रीय महामार्ग की लंबाई	"		
कुल (पूर्णतः पक्की)	"	22.0	34.5
3. राज्य महामार्ग की लंबाई (कुल 97% पक्की)	"	अनुपलब्ध	135.2
4. सड़कों पर रजिस्टर्ड गाड़ियों की संख्या	(हज़ार में)		
कुल गाड़ियाँ	"	306.0	33,588.0
माल वाहक गाड़ियाँ	(हजार में)	82.0	1,785.0
बस	"	34.0	449.0
5. सड़कों का घनत्व			
(क) प्रति 100 वर्ग किलोमीटर		12	63
(ख) सड़क/क्षेत्रफल घनत्व भारत (1 मानकर) की अपेक्षा जापान में			12 गुना अधिक
(ग) सड़क/जनसंख्या अनुपात भारत (1) की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमेरिका में			3 गुना अधिक

(i) ज्ञात कीजिए क्या हमारी राष्ट्रीय सरकार, राष्ट्रीय महामार्गों पर जितना महत्त्व दे रही है उतना उसे मिलना चाहिए।

(ii) सड़कों के घनत्व में जापान की अपेक्षा भारत की स्थिति कैसी है ?

(iii) सड़क/जनसंख्या अनुपात मे संयुक्त राज्य अमेरिका की तुलना में हमारी क्या स्थिति है?

(iv) स्वतंत्रता के बाद से अब तक सड़कों पर गाड़ियों की कुल संख्या में कितनी गुना वृद्धि हुई है।

5. सारणी 8.3 का अध्ययन कीजिए और उसके नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

सारणी 8.3
बदलता आर्थिक और औद्योगिक दृश्य
(रेल द्वारा ढोए गए स्थूल माल से परिलक्षित)
1961-1998 (अरब टन-किलोमीटर में)

	वस्तु	1960-61	1997-98
1.	कोयला	20.35	127.52
2.	इस्पात कारखानों के लिए कोयले को छोड़ अन्य कच्चा माल	1.99	13.39
3.	इस्पात कारखाने से प्राप्त कच्चा लोहा और तैयार इस्पात	3.32	11.56
4.	लौह-अयस्क निर्यात के लिए	अनुपलब्ध	6.81
5.	सीमेंट	2.47	20.95
6.	खाद्यान्न	9.62	30.96
7.	उर्वरक	नगण्य	22.01
8.	खनिज तेल	2.56	19.66
9.	अन्य वस्तुएँ	31.65	31.39
	कुल माल का परिवहन	72.33	284.25

(i) पिछले 37 वर्षों से किस वस्तु का परिवहन रेल द्वारा सर्वाधिक होता रहा है ?

(ii) इसी अवधि में किस वस्तु का स्थान लगातार दूसरा रहा है ?

(iii) किन दो विभिन्न तरीकों से भारतीय रेल ने यहाँ की कृषि के विकास में अपना योगदान दिया है ?

(iv) किन तीन तरीकों द्वारा भारतीय रेल ने भारी और आधारभूत उद्योगों के विकास में सहायता पहुँचाई है ?

6. सारणी 8.4 का अध्ययन कीजिए और उसके नीचे दिए प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

सारणी 8.4
भारतीय रेल पर एक दृष्टि
(1950-51 – 1996-97)

			1950-51	1996-97
1.	रेल मार्ग की कुल लंबाई	(कि.मी.)	53,596	62,725
2.	कुल चालू मार्ग	(कि.मी.)	59,315	80,754
3.	विद्युतीकृत मार्ग	(कि.मी.)	388	13,018
4.	यात्रियों की संख्या (यात्रा के प्रारंभिक स्थान से)	(दस लाख में)	1,284	4,153
5.	माल प्रारंभ होने के स्थान पर	(दस लाख टन में)	93	423
6.	इंजनों की कुल संख्या		8,209	6,967
	भाप		8,120	85
	डीजल		17	4,363
	विद्युत		72	2,519
7.	सवारी डिब्बों की संख्या		19,628	39,257
8.	माल डिब्बों की संख्या		2,05,596	2,72,127
9.	माल से हुई आय	(करोड़ रुपए में)	98	7,509
10.	यात्रियों से हुई आय	(करोड़ रुपए में)	139	19,595

(i) रेल मार्ग की कुल लंबाई और कुल चालू मार्ग में अपेक्षाकृत किसकी अधिक वृद्धि हुई है ? आप इसकी व्याख्या कैसे करेंगे ?

(ii) माल और यात्री परिवहनों में कौन भारतीय रेल के लिए वित्तीय रूप से अधिक लाभकारी है ?

(iii) भारतीय रेल के प्रभावशाली विकास के बावजूद रेल इंजनों की संख्या में भारी कमी क्यों आई है ?

(iv) भारतीय रेल के कुल रेलमार्ग का कितना भाग विद्युतीकृत हो चुका है ? इसके तीन प्रमुख लाभ क्या हैं ?

आखेटक और भोजन संग्राहक के रूप में आदि मानव घलवासी जीवन जीने के लिए विवश था। लगभग 5000 वर्ष पूर्व हुई कृषि क्रांति ने मानव के लिए स्थाई रूप से किसी स्थान पर रहने की नई संभावनाओं के द्वार खोल दिए। यह एक छोटा कदम आधुनिक औद्योगिक सभ्यता की ओर एक बड़ी छलांग थी। आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था जो भारत की उल्लेखनीय विशेषता भी थी, वास्तव में मानव के ऐसे ही जीवन के तलाश की स्वाभाविक परिणति थी। यह मानव की सफलता की बड़ी उपलब्धता थी। आज हम दूसरी ही चरम सीमा पर पहुँच गए हैं, जहाँ सारा देश ही एक बाज़ार बन गया है और संपूर्ण संसार परस्पर निर्भर विश्वजनीन अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ रहा है। इस अध्याय में आप देखेंगे कि परिवहन और संचार के आधुनिक साधन किस प्रकार हमारे राष्ट्र तथा इसकी अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा हैं। आज स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए यातायात और संचार के सघन और सक्षम जाल का होना पहली शर्त है।

यातायात

सड़क मार्ग

सड़कें रेलों से पुरानी हैं। निर्माण में सुविधा एवं रखरखाव की दृष्टि से सड़कें रेलों से अच्छी हैं। उन्हें वनों और मरुस्थलों से होकर बनाया जा सकता है। पुल द्वारा ये बड़ी से बड़ी नदियों को बाढ़ के समय भी पार करते हैं। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें हमारे दरवाज़ों तक लाया जा सकता है। यहाँ तक कि इन्हें तीव्र ढलानों पर भी बनाया जा सकता है। इसलिए ये हिमालय जैसे पहाड़ों को भी पार कर सकती हैं। मजबूती और बनावट की दृष्टि से सड़कें कच्ची और पक्की दो प्रकार की हैं। पक्की सड़कें, कच्ची सड़कों से अच्छी होती हैं। पक्की सड़कों का निर्माण सीमेंट, कंक्रीट या कोलतार से किया जाता है। पक्की सड़कों पर हर मौसम में यातायात चलता रहता है जो कच्ची सड़कों पर संभव नहीं है। वे बारिश में बेकार हो जाती हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात् पक्की सड़कों की लंबाई आठ गुनी से अधिक हो गई है। सभी राष्ट्रीय महामार्ग पक्की सड़कें हैं। राज्य महामार्गों का लगभग 97% भाग पक्का है। राष्ट्रीय महामार्ग परिवहन के लिए मुख्य धमनी जैसी हैं। 1997-98 में ये पूरे देश में 49,600 किलोमीटर में फैली थी। भारत की सड़कों की कुल लंबाई का बहुत छोटा हिस्सा होते हुए भी वे अकेले देश की सड़क यातायात की कुल मांग का 40 प्रतिशत हैं। आधुनिक जीवन मूल्य और भौतिक सुख-सुविधाएं इन्हीं सड़कों से होकर गाँवों तक पहुँचती हैं। भारत में आज भी डेढ़ करोड़ बैलगाड़ियाँ हैं, जिनसे 90 करोड़ टन माल ढोया जाता है। परन्तु इनसे छोटी दूरियों की ही यात्रा होती है। बैलगाड़ियों द्वारा अधिकतर माल कच्ची सड़कों पर ही ढोया जाता है।

सड़कों का घनत्व

प्रति 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में सड़कों की लंबाई को सड़कों का घनत्व कहा जाता है। 1950-51 में भारत में सड़कों का घनत्व 12 किलोमीटर था जो 1997-98 में बढ़कर 63 किलोमीटर हो गया। परन्तु देश में इसका वितरण बहुत असमान है। चित्र 8.1 देखिए। सड़कों का सबसे निम्न घनत्व (10 किलोमीटर) जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मिज़ोरम और मेघालय में पाया जाता है, जो पहाड़ी राज्य हैं। इसके बाद 10 से 20 किलोमीटर का घनत्व राजस्थान, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार, सिक्किम, असम, मणिपुर और त्रिपुरा में पाया जाता है। 20 से 40 किलोमीटर का घनत्व उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात में पाया जाता है। 40 किलोमीटर

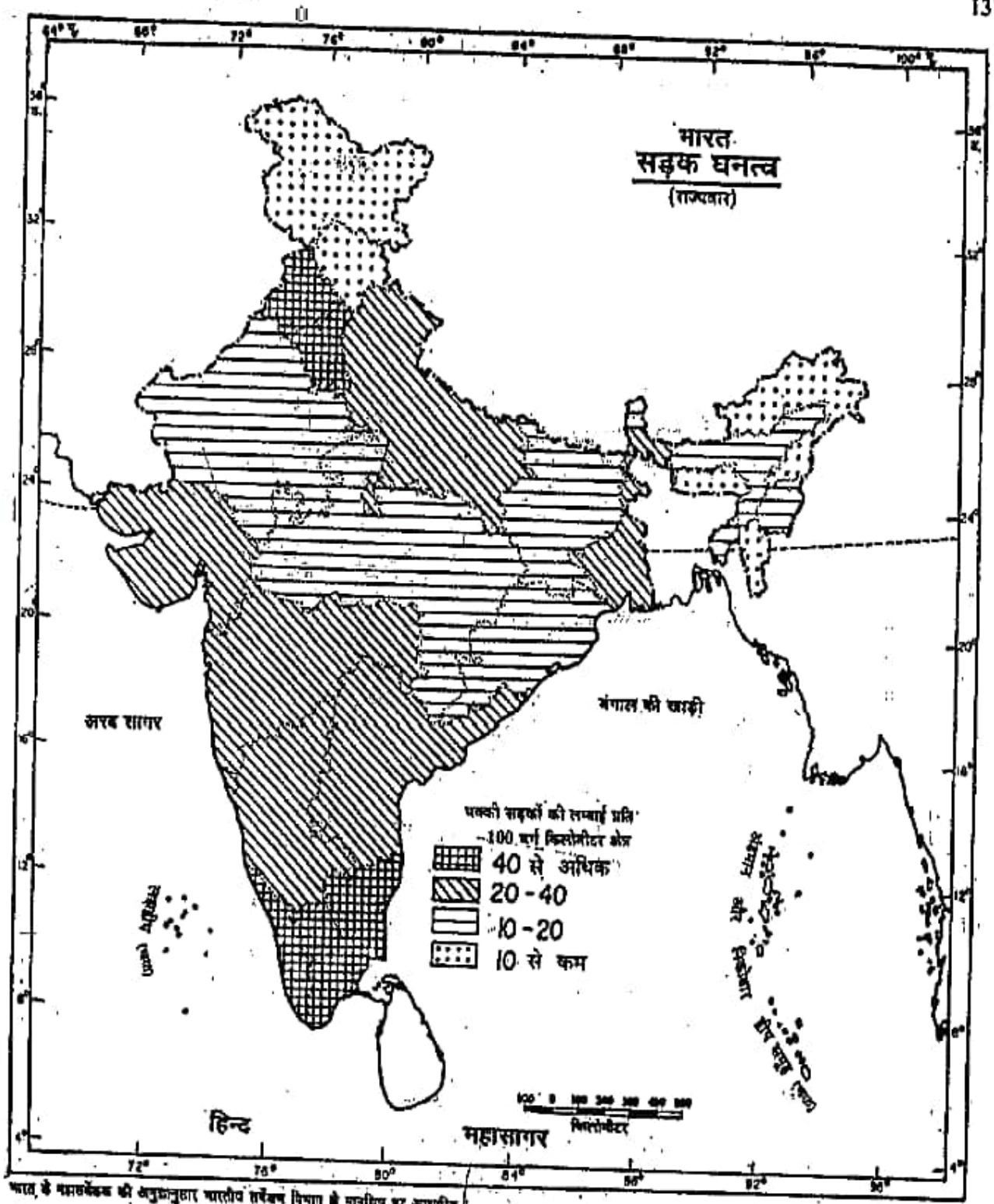

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित आधारविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, [illegible]

चित्र 8.1 भारत–सड़कों का घनत्व

उन राज्यों को देखिए जहाँ सड़कों का घनत्व क्रमशः 40 वर्ग कि.मी. और उससे अधिक तथा 10 वर्ग कि.मी. और उससे कम है। जिन राज्यों में सड़कों का घनत्व कम है, उसके कारण बताइए।

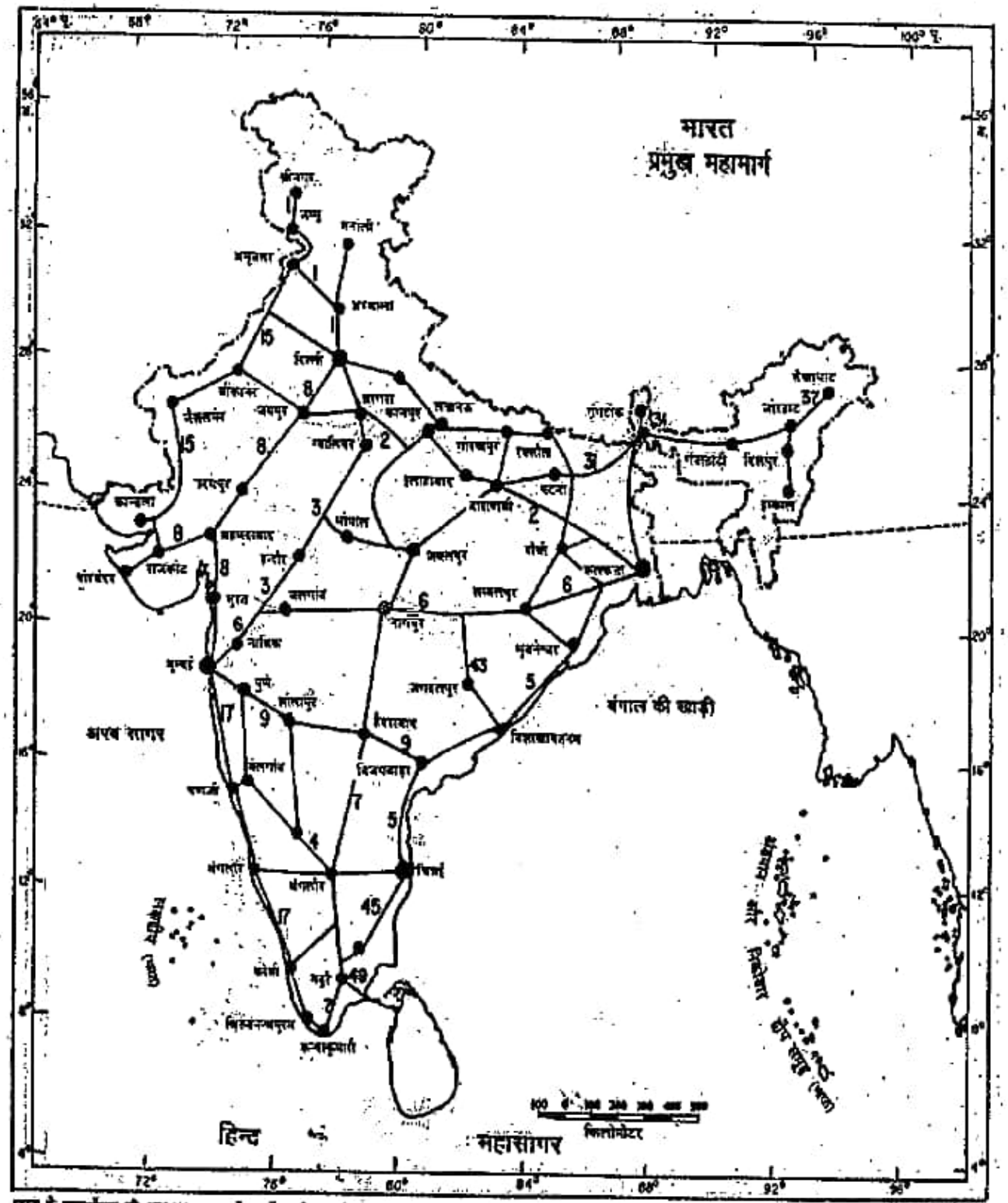

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमायें, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित नामों का अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 8.2 भारत—प्रमुख महामार्ग

भारत के सबसे लंबे राष्ट्रीय महामार्ग और उन स्थानों के नाम बताइए जिन्हें वह जोड़ता है। प्रत्येक दिशा—पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण में उन अन्तिम स्थानों की स्थिति देखिए जो सड़कों द्वारा जुड़े हैं।

से अधिक का घनत्व उत्तर में पंजाब और हरियाणा तथा दक्षिण में तमिलनाडु और केरल में मिलता है। जापान में सड़कों का घनत्व भारत का 14 गुना है। सं.रा. अमेरिका में सड़कों और जनसंख्या के बीच का अनुपात भारत का 33 गुना है।

सड़कों के घनत्व का सामाजिक-सांस्कृतिक महत्त्व केरल के उदाहरण से समझा जा सकता है।

लेकिन कच्ची सड़कों का महत्त्व भी कम नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में आसानी से पहुँच पाने के परिणामस्वरूप ही वहाँ साक्षरता को जल्दी व्यापक बनाने में सफलता मिली है। निम्न शिशु-मृत्यु दर, अधिक आयु तथा जनसंख्या के जन्म दर और वृद्धि दर का कम होना भी इसी के परिणाम हैं। केरल में यह पता करना मुश्किल है कि कहाँ एक गाँव खत्म होता है और कहाँ दूसरा शुरू होता है। वे लगभग संतत और रैखिक हैं।

भारत सरकार राष्ट्रीय महामार्गों के निर्माण और उनकी देखभाल के लिए उत्तरदायी है। यही उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का ग्रामों और जिलों की सड़कों तथा राज्य महामार्गों के लिए है। भारत सरकार सीमावर्ती सड़कों को बनाने और उनकी देखभाल करने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी करती है। हमारी सीमाएँ ऊँचे पर्वतों, मरुस्थलों, दलदली और वर्षा वाली भूमियों एवं घने वनों जैसे अत्यंत दुर्गम क्षेत्रों में हैं। ऐसे कठिन प्रदेशों में अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की रक्षा करते और पहरा देते जवानों के लिए खाद्य सामग्री और शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति इन्हीं सीमावर्ती सड़कों द्वारा निरंतर बनाई रखी जाती है। सीमा-सड़क संगठन ने मनाली-लेह के बीच की सड़क का निर्माण किया है, जो संसार में सबसे ऊँची बनी सड़क है। इसकी औसत ऊँचाई समुद्र तल से 4,270 मीटर है। यह सड़क चार दर्रों से होकर गुज़रती है। इन दर्रों की ऊँचाई समुद्रतल से 4,875 और 5,485 मीटर के बीच है।

हमारी सड़कों का रूपान्तरण

हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विश्वजनीकरण की नई नीति एवं कृषि और औद्योगिक उत्पादों के निर्यात पर बल देने के साथ ही सड़क जाल का सघन और सक्षम होना आवश्यक है। सरकार ने अब सड़कों को बनाने और उसकी देखभाल के काम का द्वार निजी क्षेत्रों और विदेशी सहयोग के साथ बनी कम्पनियों के लिए खोल दिया है। सरकार की एक नीति निजी क्षेत्र को अपने द्वारा चुनी गई सड़क को निर्मित, संचालित और हस्तांतरित करने के उद्देश्य से आमंत्रित कर सकती है। इसके अनुसार निजी क्षेत्र सड़कों को बनाने का खर्च स्वयं वहन करेगी, एक निश्चित अवधि तक उसे संचालित कर उसका उपयोग करने वालों से "कर" वसूल करेगी और फिर अवधि पूरा होने पर उसे सरकार को सौंप देगी। कई अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने इस प्रकार के कार्य में अपना पैसा लगाया है।

रेलमार्ग

भारत में रेल मार्गों का निर्माण मुख्यतः साम्राज्यवादी शक्तियों के सामरिक एवं आर्थिक हितों को पूरा करने के लिए हुआ था। इसके अतिरिक्त इनमें ब्रितानी पूंजी का लाभकारी निवेश भी था। परिवहन के अन्य सभी साधनों की अपेक्षा आज भारतीय अर्थव्यवस्था में रेलों का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। भारत में रेल मार्गों का जाल निर्विवाद रूप से यातायात का सर्व प्रमुख साधन है। भारतीय रेल देश का सबसे बड़ा सार्वजनिक क्षेत्र का प्रतिष्ठान है जिसमें 1 करोड़ 60 लाख नियमित कर्मचारी हैं।

प्रमुख रेल मार्ग

यदि हम पूरे देश में विस्तृत रेलों के जाल के प्रमुख मार्गों पर एक दृष्टि डालें तो ऐसा लगेगा जैसे दिल्ली,

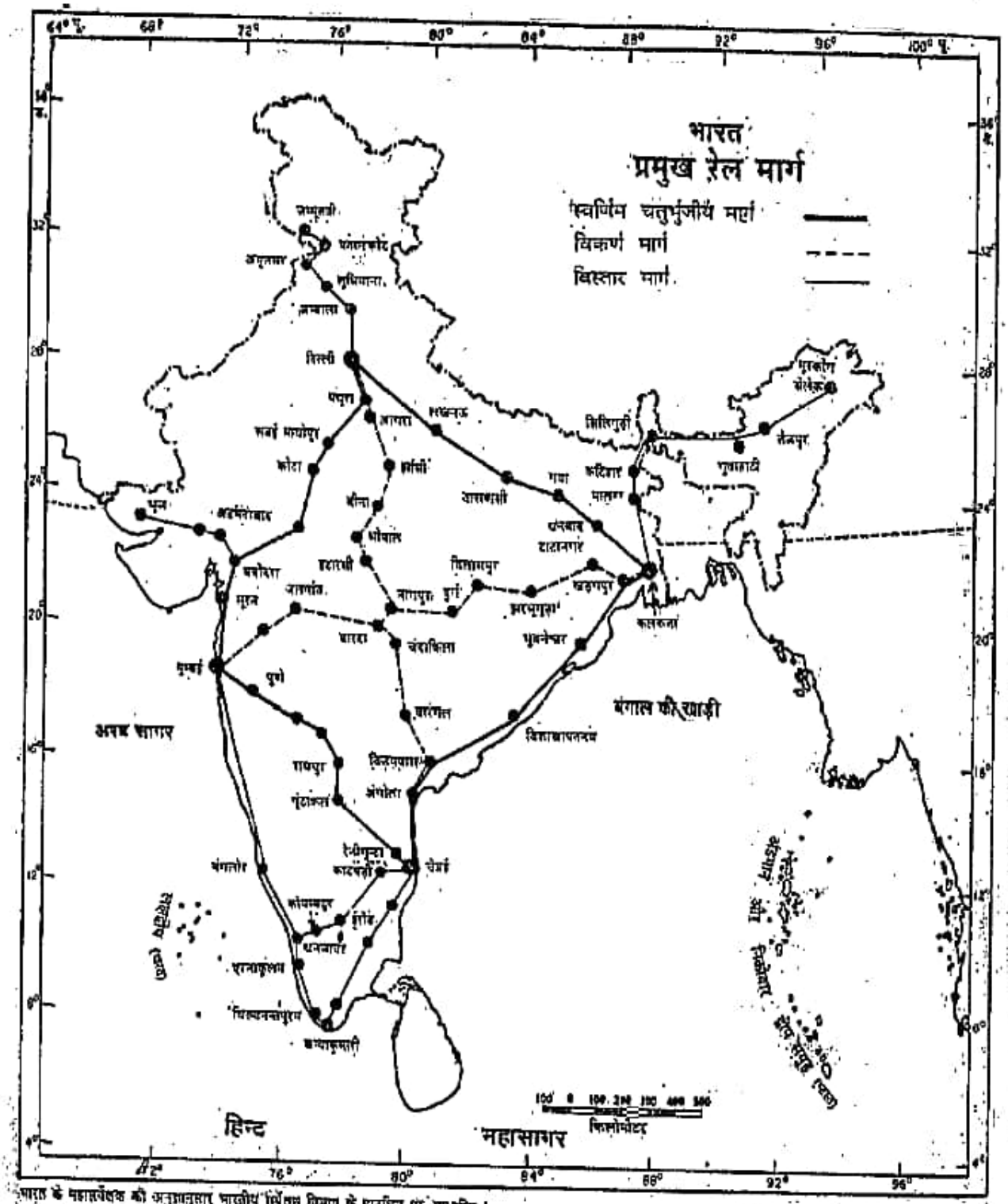

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और नेपाल के मध्य की दर्शायी गयी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्देशानुसार दर्शित है, परन्तु अभी स्थापित होनी है।

अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षांश-देशान्तर विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 8.3 भारत—प्रमुख रेलमार्ग

देश के कौन-से भाग रेलमार्गों द्वारा भली-भाँति जुड़े हुए हैं ? सर्वाधिक रेल-यातायात वाले रेलमार्गों को देखिए।

कलकत्ता, चेन्नई और मुंबई शहर खूँटियाँ हैं जिनके चारों तरफ यह जाल फैला हुआ है। इनमें दिल्ली शहर एक प्राचीन राजधानी के रूप में लंबे ऐतिहासिक काल से पूरे उप महाद्वीप का केंद्र रहा है। अंग्रेज़ों ने भी इसका महत्त्व, अनिच्छापूर्ण ही सही, समझा था और अपनी राजधानी कलकत्ता से खिसका कर पहले दिल्ली और फिर नई दिल्ली ले आए। नई राजधानी को बनाने में उन्होंने अपने साम्राज्यवादी आडंबर और प्रतिष्ठा का प्रदर्शन किया। बाकी तीन शहरों — कलकत्ता, चेन्नई और मुंबई मुख्य रूप से अंग्रेज़ों के ही बसाए हुए हैं। इन्हीं से होकर उन्होंने अपने साम्राज्य का विस्तार पूरे उप महाद्वीप में किया। आज ये शहर देश के चार सबसे बड़े महानगर हैं। वे राष्ट्रीय यातायात के चाहे वह भूमि से हो या वायु द्वारा, केंद्र बिंदु या अंतिम बिंदु हैं। दिल्ली को छोड़कर बाकी तीनों, भारत के सबसे महत्त्वपूर्ण पत्तन भी हैं। इससे शायद इस बात की व्याख्या भी हो सकती है कि भारत सरकार ने दिल्ली को देश के उत्तरी भाग के लिए शुष्क पत्तन का दरजा क्यों दिया है। ये चारों शहर, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही प्रकार के व्यापार और वाणिज्य के महत्त्वपूर्ण केंद्र हैं।

भारतीय रेल के प्रमुख कार्य क्षेत्र

विभिन्न सांख्यिकीय आंकड़ों के अध्ययन से यह पता चलता है कि भारतीय रेल निम्नलिखित क्षेत्रों को महत्त्व दे रही है।

1. नई पूंजी निवेश के अभाव में भारतीय रेल अपनी वर्तमान क्षमता के अधिकतम उपयोग के ऊपर ध्यान केंद्रित कर रही है। नए मार्गों को बनाने के स्थान पर उन्हीं पर गाड़ियों की संख्या बढ़ाई जा रही है क्योंकि इसके द्वारा मध्यम पूंजी निवेश करके व्यापार, वाणिज्य और यात्रियों की बढ़ती मांग को जल्दी और सक्षम तरीके से पूरा किया जा सकता है। उदाहरण के लिए अधिकतर मुख्य मार्गों पर गाड़ियों की संख्या दुगुनी और कहीं-कहीं तीन गुनी अधिक बढ़ गई है। सवारी डिब्बों या माल के डिब्बों की संख्या में ज्यादा वृद्धि नहीं हुई है। परन्तु बेहतर और कम्प्यूटरीकृत प्रबंधन द्वारा उनका आर्थिक दृष्टि से अधिकतम उपयोग किया जा रहा है।
2. रेलों को ऐसे ईंधन या ऊर्जा संसाधनों का उपयोग करना अधिक पसंद है जो अधिक प्रभावी हों। इसलिए कोयले को लंबी दूरी तक ढोकर लाने और उसके उपयोग की तुलना में डीज़ल और विद्युत का उपयोग ज्यादा होता है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि भाप से चलने वाले इंजनों की संख्या नगण्य क्यों हो गई है और लगभग समस्त मुख्य मार्गों का जो यातायात की दृष्टि से व्यस्ततम थे, विद्युतीकरण क्यों हुआ। इससे यात्रियों और माल गाड़ियों का परिवहन तीव्र गति से हो गया। इसके अलावा विद्युतीकरण से साफ-सुथरी और प्रदूषण रहित यात्रा की जा सकती है।
3. बढ़ती हुई यात्राओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए रेल विभाग बेहतर सुविधाओं के साथ अधिक संख्या में और तीव्र गति वाली यात्री-गाड़ियाँ चलाने के लिए प्रतिबद्ध है। रेलवे ने बहुत लंबी दूरियों तक भारी और स्थूल माल, जिनमें कंटेनर भी सम्मिलित हैं, ढोने की विशिष्टता प्राप्त की है। इसके मुख्य स्थूल मालों में कोयला, खनिज अयस्क, कच्चा लोहा, तैयार स्टील, भारी उद्योगों के लिए कच्चा माल, और उनके द्वारा तैयार माल, खाद्यान्न, उर्वरक और सीमेंट हैं।

4. रेलवे महानगरों के चारों ओर उपनगरीय क्षेत्र में रहने वाली विशाल जनसंख्या के लिए तीव्र यातायात तंत्र के लिए भी प्रतिबद्ध है। उनके टिकटों की दर अत्यधिक रियायती हैं। प्रतिदिन आने-जाने वाले यात्रियों के लिए मुंबई और चेन्नई के स्थानीय (लोकल) ट्रेन और कलकत्ता का मेट्रो महत्त्वपूर्ण सेवा प्रदान कर रहा है।
5. रेलवे पूरे देश में छोटी लाईन को बड़ी लाईन में बदल कर एक ही लाईन करने के लिए सैद्धान्तिक रूप से प्रतिबद्ध है। इनसे यातायात की क्षमता बढ़ेगी और मालों को एक लाईन के डिब्बों से उतार कर दूसरी लाईन के डिब्बों में चढ़ाने में हुई देरी और नुकसान की बचत भी होगी।
6. भारतीय रेल द्वारा आधुनिक प्रौद्योगिकी संसार के किसी भी देश से प्राप्त की जाती है परन्तु बड़े पैमाने पर देश के भीतर इसके उपयोग के लिए इसका उत्पादन अपने देश में ही किया जाता है।
7. भारतीय रेल विदेशों में भी आरंभ से लेकर अंत तक पूरा करने के आधार पर परियोजनाएँ लेती है। इसके अंतर्गत रेलवे लाईनों को बिछाना तथा अन्य सलाहकार सेवाएँ अफ्रीकी-एशियाई देशों को बहुत बड़े पैमाने पर दी जा रही है।

पाइपलाइन परिवहन

भारत के परिवहन मानचित्र पर पाइपलाइनों के परिवहन का जाल एक बिलकुल नई बात है। खनिज तेल और प्राकृतिक गैस को उत्पादन क्षेत्रों से परिष्करणशालाओं तक ले जाने में तथा वहाँ से उन्हें उपभोक्ताओं तक पहुँचाने में पाइपलाइनों के परिवहन से बड़ी सुविधा हो गई है। बरौनी, मथुरा और पानीपत की देश के आंतरिक भाग में स्थित तेल परिष्करणशालाओं तथा प्राकृतिक गैस पर आधारित उर्वरक कारखानों की बात पाईप लाइनों के कारण ही सोची जा सकी। पाइप लाइनों के बिछाते समय प्रारंभ में बहुत धन व्यय होता है लेकिन बाद में इन्हें चालू रखने में बहुत कम खर्च होता है। इनमें सामान्य परिवहन के दौरान होने वाली देरी और नुकसान, दोनों से ही बचा जा सकता है। इस समय नहरकटिया तेल क्षेत्रों में गुवाहाटी तथा बरौनी तक, गुवाहाटी से सिलीगुड़ी, कोयाली से अहमदाबाद, हल्दिया से बरौनी तक पाइप लाइनें हैं। इनके अतिरिक्त गुजरात के तेल क्षेत्रों से कोयाली तक पाइपलाइनों का एक जाल बिछा है। गुजरात में सतारा से वीरमगाम होकर मथुरा तक 1,220 किलोमीटर लंबी पाइप लाइन बिछाई गई है। बरौनी से कानपुर होकर दिल्ली

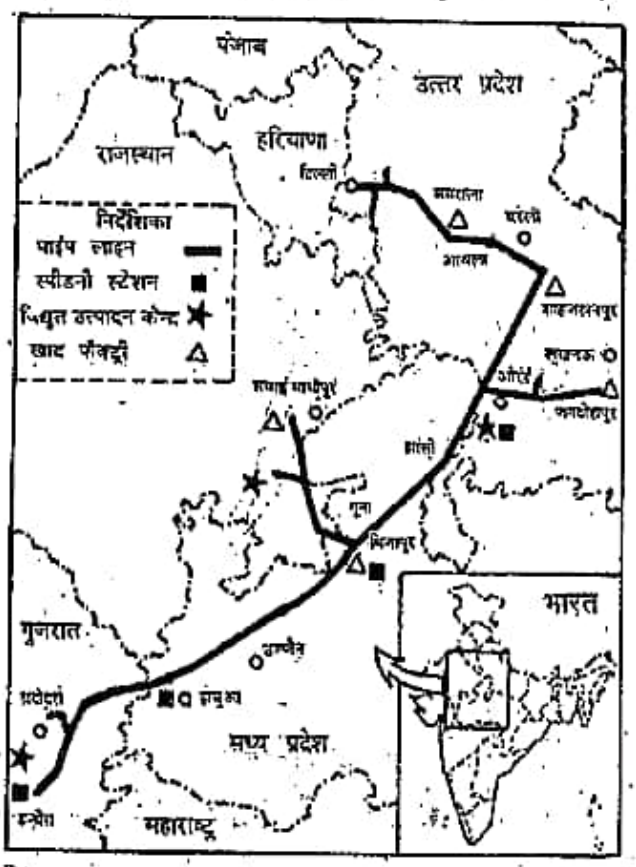

चित्र 8.4 भारत—हज़ारा-विजयपुर-जगदीशपुर पाइपलाइन

हज़ीरा-विजयपुर-जगदीशपुर पाईपलाईन को देखिए जिसका निर्माण 1700 कि.मी. की दूरी तक प्राकृतिक गैस के परिवहन के लिए किया गया है। इस गैस पर आधारित 6 उर्वरक कारखानों के निर्माण की योजना है। उनके नाम पता कीजिए।

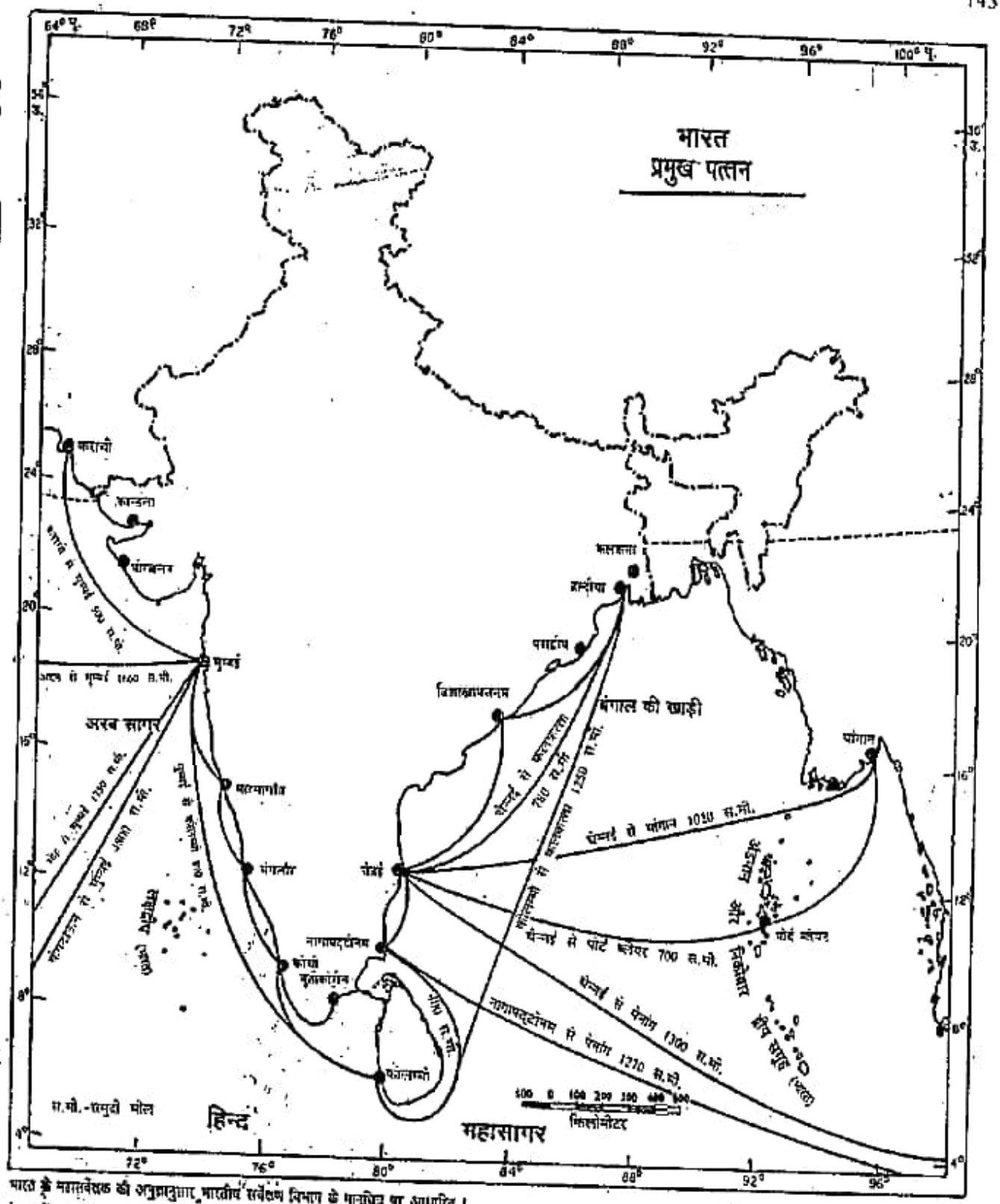

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार, भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलक्षेत्र, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्देशानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आनुक्रमिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शाये अक्षांश-देशान्तर विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किये गये हैं।

चित्र 8.5 भारत—प्रमुख पत्तन और समुद्री मार्ग

भारत के पूर्वी और पश्चिमी तटों पर स्थित प्रमुख पत्तनों को देखिए।

तक पेट्रोलियम पदार्थों के परिवहन के लिए पाइपलाइन बन गई है। दिल्ली और अंबाला होकर मथुरा से जालंधर तक भी इसी प्रकार की एक पाइप लाइन है। महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा आंध्र प्रदेश के कुछ भागों में उपभोक्ताओं तक पेट्रोलियम उत्पाद पहुँचाने के लिए एक पाइप लाइन मुंबई और पुणे के बीच बनाई गई है।

हजीरा (गुजरात) से विजयपुर (मध्य प्रदेश) से होकर जगदीशपुर (उत्तर प्रदेश) तक प्राकृतिक गैस पहुंचाने के लिए एक पाइप लाइन बनाई गई है। हजीरा-विजयपुर जगदीशपुर गैस पाइपलाइन 1,730 किलोमीटर लंबी है। इससे 6 उर्वरक कारखानों तथा दो ताप बिजली घरों को प्राकृतिक गैस भेजी जाती है। इसकी प्रारंभिक क्षमता 1.82 करोड़ मानक घन मीटर गैस प्रतिदिन परिवहन करने की है। इन्हीं सुविधाओं के कारण दिल्ली ने विद्युत निर्माण के लिए क्रमशः प्राकृतिक गैस पर निर्भर होने का निर्णय लिया है।

जल मार्ग

प्राचीन काल में भारत में भी समुद्री यात्राएँ खूब होती थीं। हमारे नाविकों ने दूर-दूर तक भारतीय व्यापार और संस्कृति का प्रसार किया। नेपोलियन के युद्धों के समय भी भारत एक प्रमुख पोत निर्माता देश था। अंग्रेजों के राज्य काल में आकर हमारे नौपरिवहन की दशा शोचनीय हो गई। स्वतंत्रता के बाद नौपरिवहन की उन्नति के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। भारत को एक लंबी तट रेखा तथा अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में स्थित द्वीपों की रक्षा करनी पड़ती है। तटीय तथा गहरे समुद्रों के मत्स्य उद्योग की रक्षा तथा विकास भी अनिवार्य है। तट के साथ-साथ 12 समुद्री मीलों तक फैले सागर क्षेत्र पर भारत की प्रभुसत्ता है। समुद्र तट से दूर गहरे सागरों में इसके कुछ प्रमुख खनिज तेल क्षेत्र हैं। "बंबई हाई" तेल-क्षेत्र तट से 115 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है। हमारे आर्थिक क्षेत्र का विस्तार सागरों में तट के साथ-साथ 200 किलोमीटर की दूरी तक है। यह क्षेत्र लगभग 20 लाख वर्ग किलोमीटर का है। इसकी रक्षा भी आवश्यक है।

प्रमुख पत्तन

न्हावा शेवा का नया पत्तन बन जाने के बाद अब हमारे प्रमुख पत्तनों की कुल संख्या 12 हो गई है। यह मुंबई पोताश्रय के उस पार है। इसका निर्माण मुंबई पत्तन की भीड़-भाड़ को कम करने के उद्देश्य से किया गया है।

विभाजन के समय कराची का पत्तन पाकिस्तान में चला गया था। परिणामस्वरूप मुंबई के पत्तन पर दबाव बढ़ गया था। इस दबाव को कम करने के लिए स्वतंत्रता के बाद कांधला में सबसे पहले एक प्रमुख पत्तन का विकास किया गया। इसके निर्माण से भारत के उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्र के राज्यों राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश को काफी सुविधा हो गई है। कांधला एक ज्वारीय पत्तन है। इसके विकास को प्रोत्साहन देने के लिए यहाँ एक मुक्त व्यापार क्षेत्र भी स्थापित किया गया है। इस पत्तन से खनिज तेल, पेट्रोलियम उत्पाद, उर्वरक, खाद्यान्न, नमक, कपास, सीमेंट, चीनी और खाद्य तेलों का व्यापार होता है। मुंबई प्रमुख पत्तनों में सबसे बड़ा है। इसका प्राकृतिक पोताश्रय बहुत विस्तृत है। भारत का लगभग एक चौथाई विदेशी व्यापार यहाँ से होता है। आयात की प्रमुख वस्तुओं में पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद मशीनें तथा अन्य शुष्क पदार्थ मुख्य हैं।

गोवा में स्थित मार्मागाओ एक अन्य प्रमुख पत्तन है। व्यापार की मात्रा की दृष्टि से इसका स्थान चौथा है। यहाँ से लौह-अयस्क बहुत बड़ी मात्रा में निर्यात किया जाता है। कर्नाटक राज्य में नया मंगलौर

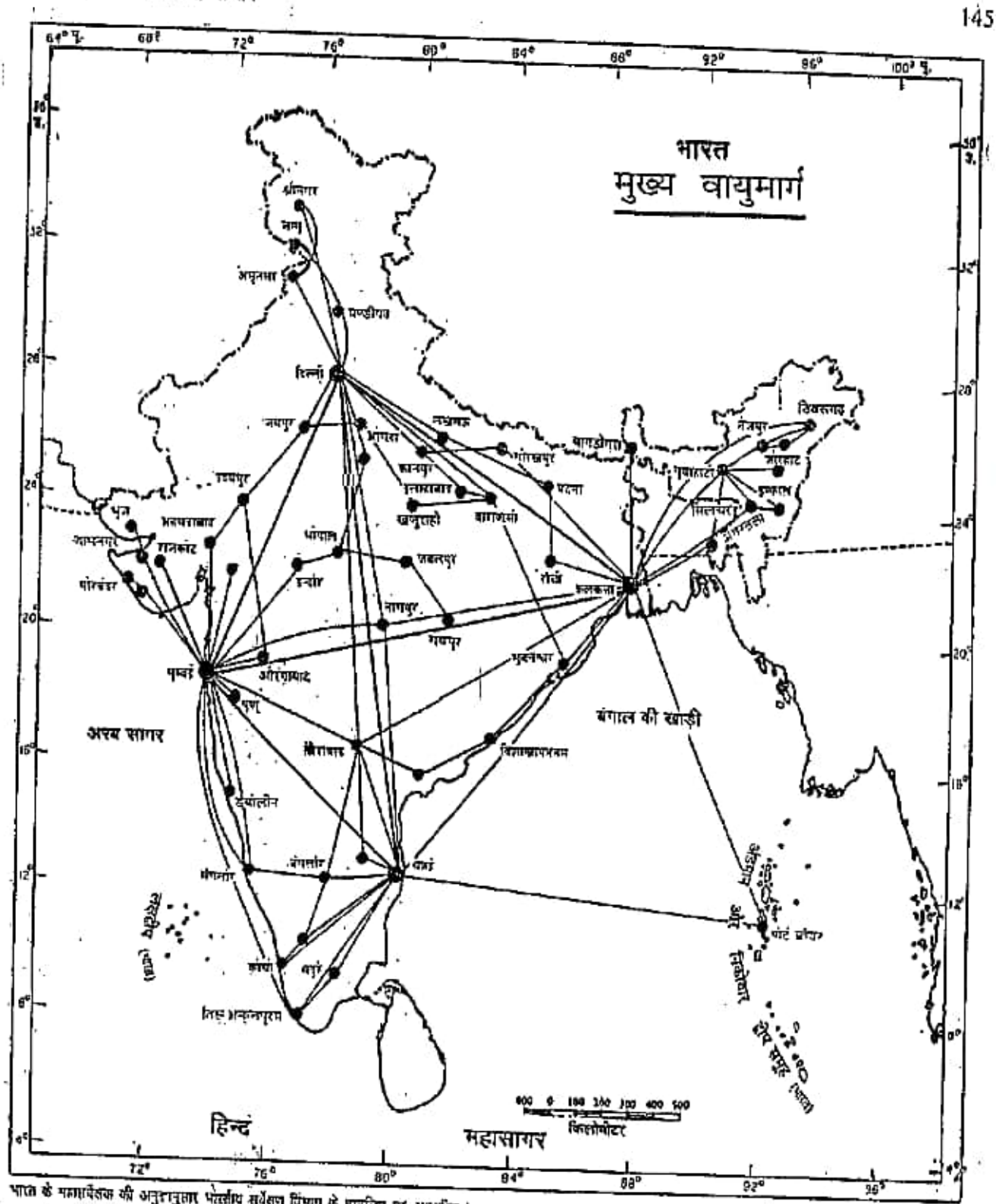

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 8.6 भारत—प्रमुख वायुपत्तन और वायुमार्ग

उन नगरों को देखिए जिनके बीच वायु यातायात बहुत अधिक है। वे स्थान भी देखिए जो वायुमार्ग से नहीं जुड़े है। ऐसा क्यों है ?

नामक एक प्रमुख पत्तन का विकास किया गया है। यहाँ से कुद्रेमुख के लौह-अयस्क एवं लौह सांद्र का निर्यात किया जाता है। इस पत्तन से उर्वरक, खाद्य तेलों और पालिश किए हुए ग्रेनाइट पत्थरों का व्यापार भी होता है। पश्चिमी तट पर कोची भारत का छठा प्रमुख पत्तन है। यह बेम्बानाद अनूप (झील) के प्रवेश द्वार पर स्थित है। इसका पोताश्रय प्राकृतिक है। यहाँ से पेट्रोलियम उत्पादों, उर्वरक, कच्चे माल और अन्य सामान्य वस्तुओं का व्यापार किया जाता है।

देश के दक्षिण-पूर्वी छोर पर तमिलनाडु राज्य में तूतीकोरिन् एक नया प्रमुख पत्तन है। इस पत्तन से विविध प्रकार की वस्तुओं का आयात-निर्यात किया जाता है। इनमें कोयला, नमक, खाद्य तेल और रसायन आदि मुख्य हैं। पूर्वीतट पर चेन्नई सबसे पुराने पत्तनों में से एक है। यह एक कृत्रिम पोताश्रय है। यहाँ से सामान्य वस्तुओं का आयात-निर्यात होता है। मुंबई के बाद इसका दूसरा स्थान है। इस पत्तन से होने वाले व्यापार की वस्तुओं में मुख्य रूप से पेट्रोलियम उत्पाद, कच्चा तेल, उर्वरक, लौह-अयस्क और शुष्क नौभार है।

विशाखापत्तनम् आंध्र प्रदेश के समुद्र तट पर स्थित है। इसका स्थल रुद्ध पोताश्रय सबसे गहरा तथा सुरक्षित है। लौह-अयस्क और पेट्रोलियम उत्पादों के निर्यात के लिए इसके बाहर पोताश्रय का विकास किया गया है। इससे सामान्य वस्तुओं का व्यापार भी होता है। उड़ीसा के तट पर पारादीप एक नया विकसित पत्तन है। लौह-अयस्क का निर्यात इसकी विशेषता है। कोयले और अन्य सामान्य वस्तुओं का व्यापार भी इस पत्तन से होता है। कलकत्ता समुद्र तट से लगभग 125 किलोमीटर दूरी पर स्थित है। यह एक नदीय पत्तन है। यह गंगा-ब्रह्मपुत्र बेसिन के विस्तृत और समृद्ध पृष्ठ प्रदेश को लाभ पहुँचाता है। यह एक ज्वारीय पत्तन है। इसे चालू रखने के लिए हुगली नदी से तल कर्षण द्वारा निरंतर गाद और मिट्टी हटानी पड़ती है। हुगली नदी का एक निश्चित जलस्तर बनाए रखने के लिए जिससे वह नाव्य बनी रहे। गंगा नदी पर बने फरक्का बांध से इसमें पानी की आपूर्ति की जाती है। कलकत्ता पत्तन की भीड़-भाड़ कम करने के लिए हुगली नदी पर ही दक्षिण की ओर हल्दिया में एक नए प्रमुख पत्तन का विकास किया गया है। इससे कलकत्ते के पत्तन में उपलब्ध सुविधाओं का विस्तार हो गया है। कलकत्ता हल्दिया सम्मिलित रूप से खनिज तेल, पेट्रोलियम उत्पाद, उर्वरक तथा अन्य शुष्क नौभारों का आयात-निर्यात करते हैं।

गौण पत्तन

भारत में इसकी 5,700 किलोमीटर लंबी तटरेखा पर 139 गौण और मध्यम पत्तन हैं। तटीय बेड़े में 244 जहाज़ हैं जिनकी भार वहन क्षमता 62 लाख टन है।

नौपरिवहन बेड़ा

1947 में भारत के समुद्रगामी पोतों का भार ढोने की क्षमता 2 लाख टन भी नहीं थी। लेकिन 31 मार्च 1998 को भारतीय नौपरिवहन बेड़े की भार वहन क्षमता बढ़कर 68 लाख टन हो गई। इस प्रकार इसमें 34 गुनी से भी अधिक वृद्धि हुई है। विकासशील देशों में भारत का व्यापारिक नौपरिवहन बेड़ा सबसे बड़ा है और जहाज़ी टन भार में इसका विश्व में सत्रहवाँ स्थान है।

अंतर्देशीय जलमार्ग

अंतर्देशीय नौपरिवहन ईंधन सक्षम पर्यावरण और सस्ता यातायात का साधन है। भारत में लगभग 14,500 किलोमीटर का नाव्य जलमार्ग है जिसमें नदियाँ, नहरें, निवेशिकाएँ और पश्चजल विशेष रूप से केरल में

सम्मिलित हैं। 3,700 किलोमीटर लंबी मुख्य नदी मार्ग का केवल 2,000 किलोमीटर ही उपयोग में लाया जा रहा है। अंतर्देशीय जलमार्गों द्वारा लगभग 1·6 करोड़ टन माल का परिवहन होता है। अभी गंगा, भागीरथी और हुगली (पश्चिम बंगाल), ब्रह्मपुत्र और बराक (असम), मांडवी (गोवा), केरल के पश्चजल और आंध्र प्रदेश में कृष्णा और गोदावरी के डेल्टाई भागों में ही नौपरिवहन होता है। भविष्य में गंगा में नौपरिवहन की योजना फरक्का से पटना और फिर इलाहाबाद तक की है।

वायु परिवहन

अचानक ही हमारी यह बड़ी दुनिया छोटी लगने लगी है। एक समय था जब देश के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने में महीनों लग जाते थे। लेकिन मोटर कारों तथा रेलगाड़ियों के आने से परिस्थिति बड़े नाटकीय ढंग से बदल गई। तीव्र गति वाली राजधानी एक्सप्रेस द्वारा दिल्ली से कलकत्ता या मुंबई जाने में अब केवल 17 घंटे लगते हैं। आपको कितना अद्भुत लगेगा जब आप उतनी ही दूरी वायुयान द्वारा केवल 2 घंटे से भी कम समय में तय कर सकते हैं। वायुयान आज यात्रा का न केवल सबसे तेज़ साधन है अपितु, सबसे आरामदायक भी है।

वायु परिवहन की एक दूसरी बड़ी उपयोगिता यह भी है कि इससे दुर्गम भूभागों जैसे ऊँचे-नीचे, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों, सुनसान मरुस्थलों, घने जंगलों तथा विस्तृत गहरे सागरों को बहुत आसानी से पार किया जा सकता है। तनिक भारत के उत्तर-पूर्वी भाग के बारे में विचार कीजिए। यहाँ की बड़ी-बड़ी नदियों में अक्सर बाढ़ आती रहती है। सघन वन हैं, ऊँची-ऊँची पर्वत शृंखलाएँ हैं, और बीच-बीच में अंतर्राष्ट्रीय सीमाएं हैं। ये सब स्थल परिवहन के लिए बड़ी बाधाएं उपस्थित करते हैं। लेकिन वायु परिवहन के द्वारा यहाँ यात्रा करना अत्यंत सुविधाजनक हो गया है। मान लीजिए आप कलकत्ते में हैं और सड़क, रेल या जल मार्ग द्वारा त्रिपुरा की राजधानी अगरतल्ला जाना चाहते हैं। क्या आप इस यात्रा में लगने वाले समय और व्यय का अनुमान लगा सकते हैं ? जल या स्थल मार्ग की तुलना में वायु परिवहन द्वारा न केवल आपका बहुमूल्य समय बचेगा अपितु खर्च भी बहुत कम बैठेगा। हाल में, भारत सरकार ने "मुक्त आकाश" की नीति अपनाई है। अब निजी क्षेत्र की कम्पनियाँ भी यदि आवश्यक हो तो कुछ हद तक विदेशी सहयोग से भारत की दो प्रमुख सार्वजनिक प्रतिष्ठानों — "इंडियन एयरलाइन्स" और "एयर इंडिया" से मुकाबला कर सकती है। इंडियन एयरलाइन्स के अलावा अब दो निजी क्षेत्र की एयरलाइन्स भी हैं जो नियमित देशी वायु परिवहन की सेवाएँ उपलब्ध कराती हैं। इसके अलावा 31 वायुटैक्सी भी हैं जो आम टैक्सियों की भाँति आवश्यकतानुसार किराए पर चलाई जाती हैं। इनका मार्ग व्यक्ति के अनुसार निर्धारित होता है। देश में मुंबई-दिल्ली व्यस्ततम वायुमार्ग है। 1997 में कुल देशीय वायु यातायात का 37% निजी क्षेत्र की वायुसेवाओं द्वारा हुआ। 1997 में इनके द्वारा 42 लाख यात्रियों ने यात्रा की।

1997-98 में एयर इंडिया के 26 और इंडियन एयरलाइंस के 54 विमान थे। 1980-81 में एयर इंडिया 14 लाख यात्रियों को संसार के विभिन्न भागों में ले गया। 1997-98 में यह संख्या बढ़कर 30 लाख हो गई। इसी प्रकार उस अवधि में इंडियन एयरलाइंस द्वारा यात्रा करने वाले यात्रियों की संख्या 54 लाख से बढ़कर 83 लाख हो गई। भारतीय विमान पत्तनों द्वारा संचालित कार्गो उसी अवधि में 1,78,000 टन से बढ़कर 7,05,000 टन हो गया। इससे अधिक

मूल्य वाले निर्यात, जिसमें जल्दी नष्ट होने वाले सामान जैसे फूल और सब्जियाँ शामिल हैं, में हुई वृद्धि का पता चलता है। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण भारत के 92 नागरिक विमानपत्तनों की देखभाल करता है। पवन हंस हेलिकॉप्टर लिमिटेड दूरस्थ प्रदेशों जैसे उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में अपनी सेवाएँ उपलब्ध कराता है। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण का कार्य सुरक्षित और दक्ष वायुयातायात एवं वैमानिक संचार सेवाएँ प्रदान करना है।

संचार

यातायात और संचार एक दूसरे पर पूर्णतः निर्भर थे और साथ-साथ ही आगे बढ़ते रहे। वास्तव मे यह कहना कठिन था कि कौन-सा कहाँ खत्म हुआ और कहाँ शुरू। परन्तु आज संचार यातायात से बहुत आगे बढ़ गया है। किसी भी स्थान से आधुनिक संचार यंत्र द्वारा तत्काल सेवा उपलब्ध होना अर्थव्यवस्था के तीव्र विकास की पहली शर्त है। प्राकृतिवश सामाजिक होने के कारण मनुष्यों के लिए संचार ऐशो आराम नहीं वरन् आधारभूत आवश्यकता है। इससे सांस्कृतिक एकता का विकास होता है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संचार एक दूसरे के पूरक हैं और एक दूसरे को मज़बूत भी बनाते हैं। इनके महत्त्व का एहसास दुर्घटनाओं, प्राकृतिक प्रकोपों और मानवीय संघर्षों के दौरान होता है।

डाक सेवाएँ

ज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के भीषण विस्फोट के बाद भी पुराने समय से चली आ रही डाक सेवा न सिर्फ जीवित रह पाई है बल्कि इसकी माँग और अधिक बढ़ी है। 1837 में भारत में पहली बार जनता के लिए डाक सेवाएँ शुरू की गई थी। 1854 तक यहाँ 700 डाकघर खुल गए। स्वतंत्रता के समय हमारे यहाँ 23,000 डाकघर थे। 1997-98 में इनकी कुल संख्या बढ़कर 1,53,000 हो गई। इनमें से 1,37,000 ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि आज एक डाकघर औसत 5,500 की जनसंख्या और 21.5 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को अपनी सेवा देता है। ग्रामीण क्षेत्रों में डाकघरों को 66% तक और दुर्गम्य क्षेत्रों में 85% तक की आर्थिक सहायता दी गई है।

तार और टेलीफोन की सेवाएँ

सर्वप्रथम कलकत्ता में तार की सेवाएँ 1851 में प्रारंभ की गई थीं। संयुक्त राज्य अमेरिका में आविष्कार के बाद टेलीफोन की सेवा भी सबसे पहले कलकत्ता में ही 1881-82 में शुरू की गई। आज 40,000 से अधिक तारघर हमारे देश में हैं। हमारे यहाँ 1997-98 में 23,000 से अधिक टेलीफोन एक्सचेंज थी। हमारा दूरसंचार का जाल एशिया में सबसे बड़ा है। भारत में 1.8 करोड़ टेलीफोन कार्यरत हैं। एस.टी.डी. (सीधे नंबर मिलाने की सुविधा) और आई.एस.डी. (सीधे विदेश से संपर्क) की सुविधाएँ भी बहुत लोकप्रिय हो रही हैं जबकि उनमें पैसे अधिक लगते हैं। इसी प्रकार सेल्यूलर फोन, मोबाइल फोन और पेजर का उपयोग बढ़ रहा है। महानगर टेलिफोन निगम एक स्वायत्त संस्था है जो दिल्ली और मुंबई में टेलीफोन सेवाओं का कार्य देख रही है। टेलेक्स द्वारा सूचनाओं को मुद्रित रूप में बहुत जल्दी भेजा जा सकता है। भारत के लगभग 200 नगरों में यह सुविधा उपलब्ध है। इलैक्ट्रॉनिक अथवा "ई मेल" सस्ता होने के कारण बहुत लोकप्रिय हो रहा है।

रेडियो, टेलीविजन तथा सिनेमा

रेडियो, टेलीविजन तथा सिनेमा जनसंचार के इलैक्ट्रॉनिक माध्यम हैं और डाक, तार, टेलीफोन और टेलेक्स सुविधाएं, जो मुख्य रूप से वैयक्तिक उपयोग की हैं, से

अलग हैं। टेलीफोन के विपरीत रेडियो बिना तार के संचार का साधन है। यह महत्त्वपूर्ण सूचनाओं, समाचार और विविध प्रकार के मनोरंजन के कार्यक्रमों जिनमें खेलकूद सम्मिलित हैं, को प्रसारित एवं ग्रहण करने का सशक्त माध्यम है।

स्वतंत्रता के समय भारत में 6 आकशवाणी केंद्र थे। अप्रैल 1998 को इनकी संख्या 195 थी। इनके द्वारा देश की 97.3 प्रतिशत जनसंख्या और 90% भूक्षेत्र तक पहुँचा जा सकता है। इनके द्वारा प्रत्येक दिन 300 समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं।

दूरदर्शन भारत की राष्ट्रीय टेलीविज़न सेवा है। यह 1959 में प्रारंभ किया गया था। यह संसार के सबसे बड़े और आवश्यक संचार जाल में से एक है, जिसमें 897 से अधिक ट्रांसमिटर लगे हुए हैं। इनके द्वारा देश की 87% जनसंख्या तक पहुँचा जा सकता है। यह राष्ट्रीय उपग्रहों के कई ट्रांसपांडरों का उपयोग करता हैं। इनके द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों को 35 करोड़ लोग अपने घरों में बैठकर देखते हैं। 1997-98 में इसके व्यापारिक विज्ञापनों से 500 करोड़ रुपए का राजस्व प्राप्त हुआ। इसके कार्यक्रमों को बनाने के लिए देश के 42 नगरों में इसकी अपनी सुविधाएँ हैं। अब कई निजी क्षेत्र की कम्पनियाँ भी टेलीविजन पर अपने-अपने चैनलों से कार्यक्रम प्रसारित करती हैं। "प्रसार भारती" नामक स्वायत्त संस्था रेडियो और टेलीविजन का प्रबंधन संसदीय कमेटी की देखरेख में करती है।

भारत में सिनेमा मनोरंजन का सबसे लोकप्रिय साधन हैं। यह संसार में सबसे अधिक "फीचर फिल्मों" का निर्माण करता है। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा हिन्दी फिल्मों का है। लगभग सभी प्रादेशिक भाषाओं में भी फिल्में बनाई जाती हैं। व्यक्तिगत कंप्यूटर और इंटरनेट की सुविधाओं ने तो सूचना प्रौद्योगिकी के विस्फोट काल में नई क्रांति ला दी है।

मुद्रण माध्यम

31 दिसंबर 1997 को भारत में छपने वाली कुल समाचारपत्रों और पत्रिकाओं की संख्या 41,000 से अधिक थी। वे 100 भाषाओं में प्रकाशित और मुद्रित होती हैं और इनकी कापियों की कुल संख्या 10.5 करोड़ थी। कुल संख्या का 40% तो सिर्फ हिंदी प्रकाशन का था। पुस्तकें भी ज्ञान, सूचना और मनोरंजन के संरक्षण और प्रसार के लिए संचार के महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

व्यापार, अर्थव्यवस्था के तृतीयक खंड का एक भाग है क्योंकि इसके द्वारा लोगों को बहुमूल्य सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। लेकिन हमने देखा है कि किसी भी फलते-फूलते व्यापार के लिए सबसे पहली शर्त यातायात और संचार के सघन और सक्षम जाल का होना है।

भारत सदियों से अपने पास और दूर-दराज़ के देशों के साथ व्यापार करता रहा है। आज हम एक बहुत तेजी से सिकुड़ती दुनिया में रह रहे हैं जो यातायात और संचार दोनों ही क्षेत्रों में हुई प्रगति के कारण संभव हुआ है। हम लोग जिस परस्पर आश्रित संसार में रहते हैं वह स्वयं एक आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था वाले भूमंडलीय गाँव में परिवर्तित हो रहा है। अगर ऐसा नहीं है तो आप इस तथ्य की व्याख्या कैसे करेंगे कि भारत का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार 190 देशों के साथ है जिनमें 7,500 से अधिक प्रकार की वस्तुओं की सूची है।

आज महासागर, देशों और लोगों को विभाजित नहीं करते हैं बल्कि वे दूर स्थित महादेशों के बीच आर्थिक कड़ी का काम करते हैं और जीवंत पुलों के रूप में उन्हें जोड़ते हैं। मुख्य पत्तन अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वाणिज्य के लिए द्वार का काम करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय नाव्य नहरों जैसे स्वेज़, पनामा, कील एवं सू का महत्त्व खुले सागरों की अपेक्षा कहीं अधिक है। यह महत्त्व उनके कारण दूरी में कमी आने से हुआ है। उदाहरण के लिए स्वेज़ नहर के द्वारा मुंबई और लंदन के बीच 7,000 किलोमीटर की दूरी कम हो गई है।

एक समय वस्तुओं का आयात सिर्फ देशी उपभोग के लिए होता था। परन्तु आज भारत सहित कई देश कुछ कच्चे मालों या आधे तैयार मालों का आयात करके तैयार माल बनाते हैं जिससे उनके मूल्य में अधिवृद्धि होती है और फिर वे उसका निर्यात कर देते हैं। इस प्रकार देश वास्तव में अपनी मानवीय कौशलों का निर्यात अप्रत्यक्ष रूप से करता है। उदाहरण के लिए, जापान सूती और ऊनी वस्त्रों का निर्यात करता है जबकि वह इसके लिए आवश्यक कच्चा माल दूसरे देशों से प्राप्त करता है। यही बात खनिज आधारित उद्योगों के लिए भी सही है। यह भारत में कच्चे काजू का आयात कर उसे निर्यात के उद्देश्य से पुनःसंसाधित करते हैं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि हम कच्चे हीरे और अन्य बहुमूल्य पत्थरों (रत्नों) का आयात करते हैं और उन्हें फिर तराश कर इस प्रकार संसाधित करते हैं कि उनका मूल्य अपेक्षाकृत बहुत बढ़ जाता है। इस रूप में उन्हें निर्यात कर देश को तैयार माल से अधिक आमदनी होती है। इसी प्रकार भारत में सोने का आयात कर उनसे अतिसुंदर आभूषण बनाए जाते हैं और फिर उनका निर्यात किया जाता है।

सारणी 8.5

भारत : निर्यात, आयात और व्यापार-संतुलन

(दस लाख संयुक्त राज्य अमेरिकन डॉलर)

व्यापार	निर्यात	आयात	व्यापार-संतुलन
अ (50-60)			
1950-51	1,269	1,273	-4
1960-61	1,346	2,353	-1,007
अ (1990-97)			
1990-91	18,143	24,075	-5,932
1997-98	33,980	40,779	-6,719

उपर्युक्त दी गई न्यूनतम संख्याओं की सहायता से पिछली आधी शताब्दी में व्यापार में हुए परिवर्तन को समझा जा सकता है। स्वतंत्रता के बाद के दशक (1950-60) में निर्यात की मात्रा कम और लगभग रुकी हुई थी। इससे आर्थिक विकास की धीमी गति का पता चलता है। इस अवधि में आयात बढ़ना प्रारंभ हो गया था क्योंकि देश को अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए मशीनों और यहाँ तक कि खाद्य सामग्री का भी आयात करना पड़ रहा था।

यह एक प्रकार से आगे होने वाले तीव्र विकास की पूर्व तैयारी थी, जो वास्तव में 1990 के लगभग प्रारंभ हुई। इसी अवधि में आयात में 32 गुनी वृद्धि हुई जो औद्योगीकरण की गति को तीव्र करने के लिए था। उस अवधि में आत्म-निर्भरता पर बल दिया जा रहा था। 1990 के दशक में निर्यात को बड़े पैमाने पर बढ़ावा दिया जाने लगा। हमारी अर्थव्यवस्था में सामान्य रूप से और उद्योगों में विशेष रूप से निर्यात उन्मुख विकास की नई दिशा थी। पिछले चार दशकों में (प्रतिकूल व्यापार-संतुलन) व्यापार घाटा साढ़े छह गुना बढ़ा है। हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि वे धीरे-धीरे धनी बन जाते हैं जहाँ व्यापार संतुलन उनके

पक्ष में रहता है यानि उनके आयात की तुलना में निर्यात अधिक होता है।

हमारे निर्यात

अभी हमने अपने व्यापार का मूल्य और प्रतिकूल व्यापार-संतुलन पर दृष्टि दौड़ाई है। यह मूल्य डॉलर में है जो भूमंडलीय बाज़ार की प्रमुख मुद्रा है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में हमारे देश की मुद्रा का कोई खास महत्त्व नहीं है। इसके अलावा राष्ट्रीय मुद्रा यानि रुपए का विनियम दर बहुत अधिक घटता-बढ़ता रहता है।

हमें यह जानना चाहिए कि हमारे मुख्य निर्यात क्या हैं और समय के साथ उनमें कोई परिवर्तन आता है या नहीं। निर्यात की मात्रा और मूल्य के अलावा हम उसके स्वरूप के बारे में भी जानना चाहेंगे। एक समय ऐसा था जब हमारे निर्यात में मुख्य रूप से कृषि और खनिज के कच्चे माल सम्मिलित थे। इनमें जूट, कपास, चाय, मसाले, तिलहन — मुख्य रूप से मूँगफली, खाल और चमड़ा जैसी वस्तुएँ थी। इनके अलावा खनिजों में लौह-अयस्क, अभ्रक मैंगनीज़ और बॉक्साइट थे। यद्यपि हम इन वस्तुओं का निर्यात अभी भी कर रहे हैं पर अब उन्हें हम संसाधित करके भेजते हैं।

कच्चे जूट और कपास को निर्यात करने के स्थान पर अब हम जूट से बनी पैकिंग सामग्री जैसे जूट का थैला, कालीन आदि का निर्यात करते हैं। कपास की जगह अब हम उसे संसाधित कर उससे बने अच्छी किस्म के धागे, सूती कपड़े और वस्त्र जिनमें सिले सिलाए वस्त्र, होज़री आदि सम्मिलित हैं, का निर्यात करते हैं। इसके द्वारा लाखों लोगों को धागे बनाने, कपड़े बुनने, रंगाई करने, सिलने और उनकी पैकिंग करने जैसा काम दे रहे हैं। इस प्रकार हम सिर्फ कच्चे मालों का ही नहीं बल्कि कुशल श्रम का भी निर्यात कर रहे हैं जिसकी कीमत हमें तैयार माल के बदले में मिलती है। इस प्रक्रिया में श्रमिक स्वयं भी अपने रहने का स्तर ऊँचा उठाने में सहायक होते हैं। हमारे देश द्वारा रेशमी, ऊनी और कृत्रिम रेशों से बने वस्त्रों का विशेष रूप से तैयार माल के रूप में निर्यात होता है। अब हम चाय का भी निर्यात "उपयोग करने के लिए तैयार" अवस्था में करते हैं। इसी तरह कॉफी एक अन्य बागानी फसल है जिससे चाय की भाँति बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा मिलती है। संसाधित समुद्री उत्पाद और चमड़े से बनी सामग्रियों का भी निर्यात किया जाता है। हम लोग खेल-कूद की सामग्रियों जैसे क्रिकेट के बल्ले, हॉकी की छड़ी आदि का निर्यात भी बड़े पैमाने पर करते हैं। हल्की इंजीनियरिंग की वस्तुएँ जैसे पंखें, सिलाई की मशीनें, साईकिलें, तिपहिया वाहन, स्कूटर आदि का भी अब निर्यात किया जाता है। रसायनों और उससे संबंधित उत्पादों, मोटरगाड़ियों और व्यापारिक वाहनों का भी निर्यात होने लगा है। परंपरागत हाथ से बनी वस्तुएँ, जिनमें खादी और हथकरघा से बने वस्त्र शामिल हैं, कई देशों को निर्यात की जाती हैं। कालीन और सीमेंट कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण निर्यात की वस्तुएँ हैं।

हमारे आयात

अभी तक हमारे आयात की सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु खनिज तेल है। एक दर्जन से अधिक खनिज तेल परिष्करणशालाएँ खनिज तेल को संसाधित करके उनसे विविध प्रकार के पेट्रोलियम उत्पाद जैसे किरासन तेल, डीज़ल, पेट्रोल और खाना बनाने की गैस आदि बनाने में लगी हुई हैं। अन्य आयातित वस्तुओं में कागज़ तथा अखबारी काग़ज़ हैं। इनके अलावा मोती, बहुमूल्य पत्थर और सोना भी हम अपने देश में उपभोग के लिए आयात करते हैं। लेकिन इनका एक बड़ा भाग उनके संसाधन के बाद औद्योगिक हीरों, आभूषण

और गहनों के रूप में पुनः निर्यात कर दिया जाता है। इस क्षेत्र में हमारी परंपरागत कुशलताओं के लिए हमें विदेशी बाज़ार में अच्छी कीमत मिलती है। हमारे आयात का एक बहुत बड़ा भाग अत्याधुनिक उच्च तकनीकी मशीनों का है जिन्हें नई वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने की दृष्टि से मंगाया जाता है ताकि उनके निर्यात में वृद्धि हो सके। हम लोग रसायनों और दवाओं का आयात भी करते हैं। हमारे देश में रसायनिक उर्वरकों का उत्पादन बढ़ने के बाद भी हमें अपनी बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उनका आयात करना पड़ता है। हमारी आयात की अन्य वस्तुएँ हैं — दालें, खाने का तेल, लकड़ी, कृत्रिम लुग्दी; तांबा जैसी अलौह धातुएँ और कोकिंग कोयला, क्योंकि इसकी हमारे देश में कमी है।

अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार की नई उभरती प्रवृत्ति को देखते हुए निरंतर कई नीतियों और तरीकों से संबंधित निर्णय लेने पड़ते हैं। तीव्र औद्योगीकरण का एक मुख्य उद्देश्य व्यापार को बढ़ावा देना है।

व्यापार संतुलन के लगातार प्रतिकूल होने के बाद भी हम तीन विशिष्ट तरीको से विदेशी मुद्रा की कमी को पूरा करने में कुछ हद तक सफल होते रहे हैं। प्रथम, बहुत बड़ी संख्या में भारतीय नागरिक अब विदेशों में काम कर रहे हैं जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, तथा पश्चिम एशिया। उनमें से अधिकांश अपनी बचत को विदेशी मुद्रा के रूप में भारत में अपने परिवारों को भेजते हैं। यह एक बहुत बड़ी धनराशि है। द्वितीय, हमारे देश में प्रतिवर्ष विदेशी पर्यटक बहुत बड़ी संख्या में आते हैं। इनमें प्रवासी भारतीय भी शामिल हैं। वे अपने साथ लाई गई विदेशी मुद्रा को यहाँ खर्च करते हैं। यह भी विदेशी व्यापार का एक अप्रत्यक्ष रूप है और हमारे देश के लिए विदेशी मुद्रा का एक बहुत बड़ा स्रोत है। तृतीय, हाल के वर्षों में हम सॉफ्टवेयर इलैक्ट्रॉनिक सामग्री का निर्यात बहुत बड़े पैमाने पर संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों को करने लगे हैं। इस निर्यात को व्यापारिक माल की श्रेणी में नहीं रखा जाता है। परन्तु इनसे अर्जित विदेशी मुद्रा से ही हम देश में इसकी कमी को पूरा कर पाते हैं। राजकोषीय और मुद्रा नीतियों को सुगम बनाते हुए और उपयुक्त तरीके अपनाकर कुल राष्ट्रीय उत्पाद के इन सभी स्रोतों को बढ़ाया जा सकता है।

हमारे व्यापारिक भागीदार

हमारे देश के साथ व्यापारिक भागीदारी मुख्यतः संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, यूनाइटेड किंगडम, अन्य पश्चिमी यूरोपीय देश, रूस और जापान आदि देशों के साथ लगभग इसी क्रम में है। खनिज तेल के आयात के लिए हम खाड़ी के देशों जैसे सऊदी अरब और इरान के ऊपर निर्भर हैं। हम अपने व्यापार का विविधीकरण करने का प्रयास कर रहे हैं और दक्षिण एशिया के देशों (सार्क) — बांग्लादेश, भूटान, नेपाल, मालदीव, पाकिस्तान और श्रीलंका के साथ अपने निर्यात को बढ़ावा दे रहे हैं। हम दक्षिण पूर्व एशिया के देशों, चीन और हिंद महासागर के किनारे स्थित देशों जैसे दक्षिण अफ्रीका, कीन्या, तंजानिया, पश्चिम एशिया, सिंगापुर और आस्ट्रेलिया के साथ भी अपना व्यापार बढ़ा रहे हैं। पूर्वी यूरोप और मध्य एशिया के देशों के साथ भी हमारा व्यापार बढ़ रहा है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए –
   (क) भारत में कच्ची सड़कों का क्या महत्व है ?
   (ख) सड़क परिवहन का महत्त्व रेल परिवहन की अपेक्षा क्यों अधिक है ?
   (ग) भारत के लिए एक शक्तिशाली नौसैनिक बेड़ा रखना क्यों अनिवार्य है ?
   (घ) भारत के किस भाग में वायु परिवहन सड़क अथवा रेल की अपेक्षा आर्थिक रूप से अधिक लाभकारी है ?
2. अन्तर बताइए –
   (क) पक्की और कच्ची सड़कें
   (ख) राज्य महामार्ग और राष्ट्रीय महामार्ग
3. निम्नलिखित कथनों के कारण बताइए –
   (क) रेलों द्वारा गन्ने के परिवहन में तीव्र गिरावट आई है।
   (ख) सीमा सड़क संगठन के विलक्षण सफलता के बिना हमारे देश की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती।
   (ग) कुछ वस्तुएँ जैसे रत्न और काजू, हमारे देश के आयात और निर्यात दोनों ही सूचियों में दिखाई देती हैं।
4. परिवहन और संचार के विभिन्न साधनों को किसी राष्ट्र तथा उसकी अर्थव्यवस्था की जीवन रेखाएँ क्यों कहा जाता है ?
5. भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की बदलती प्रकृति पर एक विवेचनात्मक टिप्पणी लिखिए।
6. निम्नलिखित बिंदुओं को सम्मिलित करते हुए भारतीय रेलों की प्रगति पर एक विशद टिप्पणी लिखिए –
   (क) रेलमार्ग और मालगाड़ियों के डिब्बों का अधिकतम उपयोग
   (ख) एक बड़ा सरकारी प्रतिष्ठान
   (ग) ऊर्जा-उपभोग में मितव्ययता
   (घ) मुंबई और कलकत्ता जैसे नगरों में उपनगरीय रेल यातायात
   (ङ) कृषि और उद्योग की उन्नति में योगदान
   (च) राष्ट्रीय एकता और आधुनिकीकरण को प्रोत्साहन।
7. भविष्य की यथार्थवादी झांकी से यह कल्पना कीजिए कि सन् 2010 तक भारत द्वारा किस प्रकार की वस्तुओं का निर्यात करने की संभावनाएँ हैं।

कक्षा में विचार-विमर्श के लिए

8. (क) अपनी संस्कृति के विनिमय द्वारा विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए भारत में पर्यटन की संभावनाएँ
   (ख) हम अपने बहुल मानवीय कुशलताओं का किस प्रकार सबसे अच्छी तरह निर्यात कर सकते हैं।

मानचित्र-कार्य

9. भारत के रेखा-मानचित्र पर जिसमें राज्य की सीमाएँ दी गई हों, निम्नलिखित दर्शाइए –
   (क) सुनहरा चतुष्कोण
   (ख) राष्ट्रीय गलियारा
   (ग) कोंकण रेलमार्ग
   (घ) दिल्ली और चेन्नई के बीच के महत्त्वपूर्ण रेल जंक्शन
   (ङ) मुंबई और कलकत्ता के मध्य महत्त्वपूर्ण रेल जंक्शन
   (च) चार अन्तर्राष्ट्रीय वायुपत्तन (एअरपोर्ट)
   (छ) जवाहर पत्तन

खंड पाँच

मानव संसाधन का विकास

अन्य प्राणियों के समान मानव भी प्रारंभ में अपने पर्यावरण का एक निरीह प्राणी था। लेकिन शीघ्र ही उसने निरीक्षण करने, सोचने, योजना बनाने, संप्रेषण करने और अपने साथियों से सहयोग करने की कुशलताएँ विकसित कर लीं। इन "समूह" की विशेषताओं के कारण आज वे इस ग्रह पर अब तक पैदा होने वाले सभी प्राणी वर्गों में सबसे अधिक प्रभावशाली बन गए हैं। अब वे अपने पारितंत्र के मात्र एक अंग नहीं रह गए हैं। वास्तव में उन्होंने अब पर्यावरण के कई तत्वों में इस हद तक जोड़-तोड़ किया है कि उनके स्वरूप को ही बदल दिया है। कभी-कभी तो ये परिवर्तन उनके लिए लाभप्रद हैं पर कभी-कभी नहीं भी।

मानवों ने कुछ जंगली पशुओं को पालतू बना लिया है और उन्हें अपनी सेवा में लगा लिया है। उन्होंने अधिक उपज देने वाले और जल्दी तैयार होने वाले अनाज, सब्जियों, फूलों, फलों और अन्य फसलों की विविध किस्मों का विकास किया है। मुर्गियों, मछलियों, पशुओं, सूअरों और कृषि कार्य में लगे अन्य पशुओं को अब मशीनों की भाँति उपयोग में लाया जाता है जैसे उनका कार्य अधिक अंडे, माँस, दूध, ऊन आदि देना हो। मनुष्य ने बुद्धिमान और शक्तिशाली यंत्रों का विकास कर लिया है जिनकी सहायता से वह चंद्रमा पर भी उतर पाया। अब उसका सपना अपने सौरमंडल के पार क्या है, यह पता लगाने का है।

इन सबके लिए आवश्यक है कि मानव अपनी अगली पीढ़ी को साक्षर बनाए और उसे अपनी जिन्दगी के लिए मूल शिक्षा देकर उन्हें योग्य बनाए। इसके साथ ही स्वास्थ्य सेवाएँ, व्यावसायिक, तकनीकी और औद्योगिकीय कुशलताएँ भी महत्त्वपूर्ण हैं। यह भी अतिआवश्यक है कि पर्याप्त बचत करके उनका निवेश आने वाली पीढ़ियों के लिए नए रोजगार पैदा करने में किया जाए। आज हमारी

जनसंख्या मात्र उपभोक्ताओं का एक समूह नहीं रह गया है। वे उत्पादक भी हैं। अत्यधिक प्रतिस्पर्धा वाली इस दुनिया में हम भारतीयों को अपने मानव संसाधनों को अच्छी तरह विकसित करना है। उन्हीं की सहायता से हम एक धनी, समृद्ध और उच्च-तकनीकी व औद्योगिक समाज बन सकते हैं। हम अपनी कुशलताओं का निर्यात कर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकते हैं, जिससे हर व्यक्ति को एक सुविधाजनक और संतोषप्रद जीवन का अवसर मिल सकता है। इसके लिए एक लंबे समय तक प्रयास करना होगा।

अध्याय 9

मानव-संसाधन आधार

एक समय था जब मनुष्य की संख्या से उसकी शक्ति का पता चलता था। अब आधुनिक तकनीक द्वारा समर्पित विविध प्रकार के औजारों, उपकरणों और यंत्रों के उपयोग से, शारीरिक अथवा अकुशल श्रम पर हमारी निर्भरता काफी कम हो गई है। यंत्रीकरण के कारण काम करने की गति में तेजी आई, दक्षता बढ़ी और गुणवत्ता का विकास हुआ। इसके परिणामस्वरूप, प्रति इकाई श्रम की उत्पादकता में कई गुना वृद्धि हुई। भारत में कुशल और कलात्मक श्रम की लंबी परंपरा रही है। हमें अपने श्रमिकों की गुणवत्ता, दक्षता और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए उनकी तकनीकी कुशलता को विकसित करना होगा और निरंतर उनका आधुनिकीकरण करना होगा। अपने विशाल और अप्रबंध योग्य मानव संसाधन को एक बड़े संभाव्य संसाधन के रूप में परिवर्तित करना हमारा वर्तमान दायित्व है। हमें अपने कुशल श्रम और विशाल संभावित बाजार का लाभ प्राप्त करने के लिए यथासंभव प्रयत्न करना चाहिए।

आइए, इस परिप्रेक्ष्य में हम अपनी जनसंख्या को नज़दीक से देखें। यह वास्तव में हमारे सर्वांगीण विकास के लिए एक संभाव्य संसाधन आधार है। यह अध्ययन इस समय बहुत ही उपयोगी है जब हम अनगिनत संभावनाओं एवं उच्च आशाओं के साथ शिखर पहुँचने के लिए दृढ़ संकल्प के साथ नई शताब्दी में प्रवेश कर रहे हैं।

हम सभी भारतीय हैं

भारत के निवासी पास और दूर से आए विभिन्न प्रजातियों के लोग हैं। सदियों से वे एक दूसरे से मिलते हैं। इस प्रक्रिया में उनकी कई मूल विशेषताएँ लुप्त हो गईं और उन्होंने नए लक्षण ग्रहण कर लिए। इस तरह आज हमें इतनी विविधता दिखती है, जो हम भारतीयों की एक विशिष्टता है। वास्तव में भारतीय संस्कृति की शोभा, समृद्धता और शक्ति इसकी विविधता में है। सहनशीलता, आदान-प्रदान और सबको अपने में मिलाने की भावनाओं के ही कारण यह संसार की विशिष्ट संस्कृतियों में से एक है। एक राष्ट्र होने के अलावा भारतीय सभ्यता कई अर्थों में अद्भुत है। भारत के लोग विभिन्न पंथो को मानते हैं, जो जातियों; प्रदेशों और राजनीतिक विचारों के परे हैं। भारत में कई धार्मिक समुदायों के लोग रहते हैं जिसमें हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, जैन, जोराष्ट्रियन और यहूदी आदि हैं। यहाँ विभिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं जिनमें 18 भाषाओं को संविधान की अनुसूची में रखा

स्वयं करने के लिए

सारणी 9.1
भारत की जनसंख्या, 1901–1991

वर्ष	कुल जनसंख्या (दस लाख में)	शुद्ध अंतर (दस लाख में) पिछले दशक में	वृद्धि दर प्रत्येक दशक में (प्रतिशत में)	औसत वार्षिक वृद्धि-दर (प्रतिशत में)
1901	230.2	--	—	--
1911	252.0	+13.7	+5.75	0.56
1921	251.3	-0.7	-0.31	-0.03
1931	278.9	+27.6	+11.00	1.04
1941	318.6	+39.7	+14.22	1.33
1951	361.0	+42.4	+13.31	1.25
1961	439.2	+78.2	+21.51	1.96
1971	548.1	+108.9	+24.80	2.20
1981	683.3	+135.2	+24.66	2.20
1991	846.3	+163.0	+23.85	2.14

(1) किस दशक में (यानि दस वर्षों की अवधि जैसे 1901 से 1911) भारत की जनसंख्या घटी ?

(2) यह एक अपवाद था या एक सामान्य नियम?

(3) किस वर्ष से भारत की जनसंख्या बिना किसी अवरोध के लगातार बढ़ती रही है?

(4) किस वर्ष दशकीय (प्रत्येक दशक में) वृद्धि-दर सर्वाधिक थी ?

(5) उसके अगले दो दशकों में क्या हुआ ?

(6) हाल के दशकों में जनसंख्या वृद्धि-दर में कमी होने पर भी कुल जनसंख्या अपेक्षाकृत अधिक तेजी से क्यों बढ़ी है ?

सारणी 9.2
संसार के सात बड़े देश, उनका क्षेत्रफल, जनसंख्या और जनघनत्व, 1991

क्षेत्र-फल के अनुसार क्रम	देश	क्षेत्रफल (वर्ग कि. मी.)	जनसंख्या (दस लाख में)	औसत जनघनत्व (प्रतिवर्ग कि.मी.)
1.	रूस	17,075,000	148.5	12
2.	कनाडा	9,976,000	26.5	3
3.	चीन	9,597,000	1134.0	118
4.	संयुक्त राज्य अमेरिका	9,373,000	249.9	27
5.	ब्राजील	8,512,000	150.3	18
6.	आस्ट्रेलिया	7,687,000	17.0	2
7.	भारत	3,288,000	846.3	267

(1) निम्नलिखित कथन की जाँच कीजिए कि क्या यह अतिशयोक्तिपूर्ण हैं —
भारत से बड़े पाँच देशों — रूस, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, एवं आस्ट्रेलिया का सम्मिलित क्षेत्रफल भारत से सत्रह गुना अधिक है, परन्तु उनकी कुल जनसंख्या भारत से कम है।

(2) भारत में जनसंख्या के उच्च घनत्व के परिणामों को ज्ञात कीजिए

सारणी 9.3

भारत सहित कुछ देशों में कुछ जनसांख्यकीय संकेतक

क्रम सं.	देश	साक्षरता दर (%)	शिशु मृत्युदर (%)	जन्म दर (%)	मृत्यु दर (%)	प्राकृतिक वृद्धि दर (%)	जीवन-प्रत्याशा पु. (वर्ष)	जीवन-प्रत्याशा स्त्री. (वर्ष)
1.	बांग्लादेश	36.4	82	27	8	1.9	59	58
2.	चीन	68.5	31	17	7	1.0	69	73
3.	भारत	49.9	72	27	9	1.8	59	59
4.	जापान	99.0	3.8	10	7	0.3	77	84
5.	श्रीलंका	89.3	16.5	19	6	1.3	70	74

(1) उच्चतम तथा न्यूनतम प्राकृतिक वृद्धि दर ज्ञात कीजिए। ये किस पर निर्भर हैं ? भारत की तुलना श्रीलंका, चीन और जापान से कीजिए।

(2) उच्चतम तथा न्यूनतम शिशु मृत्युदर का पता लगाइए। भारत की तुलना अन्य देशों से कीजिए।

गया है। भारत सरकार ने हिंदी को राजभाषा और अंग्रेजी को सहायक भाषा के रूप में स्वीकार किया है। राज्य सरकारें अपने-अपने राज्य की भाषा को सरकारी कार्य के लिए उपयोग करती है। भारत में एक एकीकृत न्यायपालिका और एकल नागरिकता है। पूरे देश में एक ही मुद्रा का उपयोग करने वाले एकल सामान्य बाजार वाली अर्थव्यवस्था है।

भारत में दैनिक जीवन में एक से अधिक भाषा का उपयोग एक बहुत सामान्य घटना है। देशभर में ऐसे विस्तृत क्षेत्र हैं जहाँ दो भाषाएँ बोली जाती हैं। ऐसा कई पुश्तों से चला आ रहा है। विभिन्न भाषाओं के बोलने वाले लोगों के मध्य विवाद होना बहुत समय से एक सामान्य बात है। हम सभी अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए प्रतिबद्ध हैं जिससे उन्हें भारतीय समाज में सही स्थान मिल सके। कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजातियों का प्रतिशत 8.08 है और अनुसूचित जातियों का 16.48 प्रतिशत।

इन सामाजिक, धार्मिक, भाषाई और प्रादेशिक विविधताओं और पहचानों के बावजूद हम सभी भारतीय हैं। हमारा समाज पंथनिरपेक्ष और अनेक संख्यक है जिसकी संस्कृति मिश्रित है। यह उस उद्यान की भाँति है जिसमें विभिन्न रंगों, आभाओं और सुगंध वाले फूल खिले हैं, जो संपूर्ण दृश्य की सुन्दरता बढ़ा देते हैं। इस प्रक्रिया में वे एक दूसरे से शक्ति प्राप्त कर रहे हैं।

हमारी जनसंख्या : एक विश्व परिप्रेक्ष्य

इस संसार में हमारा देश न तो बहुत छोटा है और न ही बहुत बड़ा। हमारे देश का क्षेत्रफल संसार के कुल भूभाग का सिर्फ 2.42% है। इसकी तुलना में देश की

जनसंख्या बहुत बड़ी है और चीन के बाद हमारा ही स्थान है। 1 मार्च, 1991 को हमारे देश की जनसंख्या 84 करोड़ 63 लाख थी। यह संपूर्ण संसार की जनसंख्या का 1/6 भाग अर्थात 16% है। दूसरे शब्दों में, संसार में हर छठा व्यक्ति भारतीय है और हर पाँचवाँ व्यक्ति चीनी। हमारी जनसंख्या उतनी विशाल है कि उसकी वैध आवश्यकताओं, आशाओं और आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें उपयुक्त तरीके से पूरा करने में कठिनाई होती है।

क्षेत्रफल में भारत सातवें स्थान पर निम्नलिखित क्रम में आता है : (1) रूस (2) कनाडा (3) चीन (4) संयुक्त राज्य अमेरिका (5) ब्राज़ील (6) आस्ट्रेलिया। चीन को छोड़कर यदि हम भारत से बड़े इन सभी देशों की जनसंख्या को जोड़ दें, फिर भी यह 60 करोड़ से कम होगी। इसकी तुलना में हमारी जनसंख्या 84.6 करोड़ है। इन देशों का संयुक्त क्षेत्रफल भारत के क्षेत्रफल से तीन गुना अधिक है। यद्यपि इसकी कृषित भूमि भारत की तुलना में कम है। परन्तु इसकी कुल सिंचित भूमि भारत से दो गुना अधिक है। फिर भी इसे इस बात से असंतुष्टि है कि संसार के कुल मीठे जल-संसाधन का केवल 7 प्रतिशत इसके पास है जिससे इस संसार की कुल जनसंख्या के 22% का निर्वाह करना पड़ता है। इसलिए यह अपनी जनसंख्या को 70 करोड़ पर लाकर स्थिर करना चाहता है।

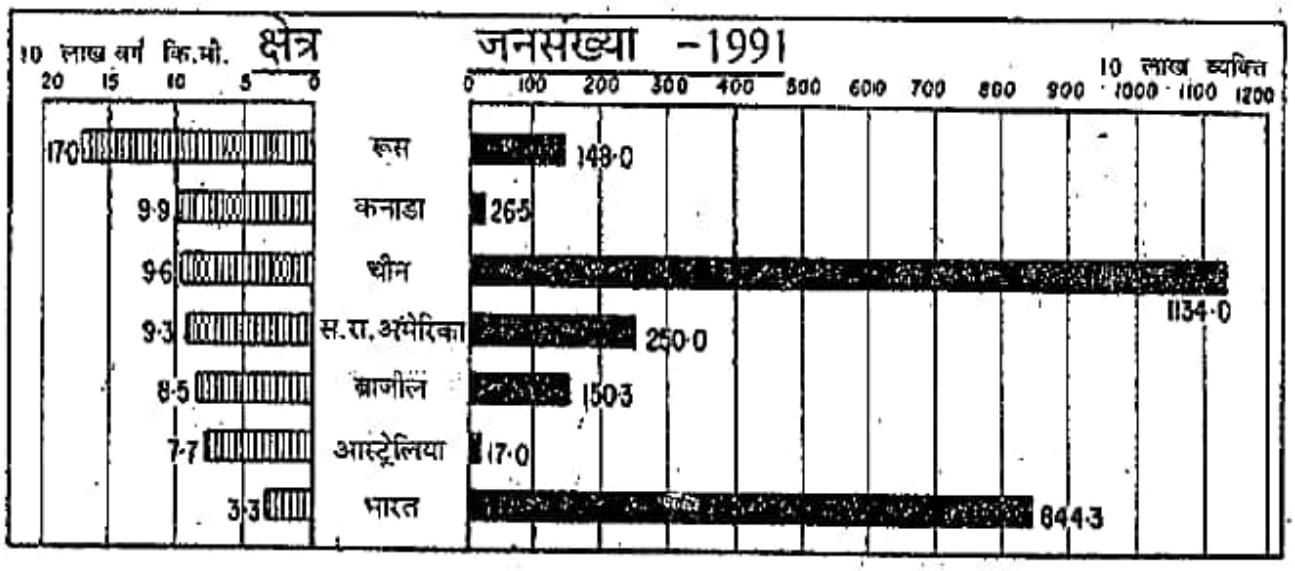

चित्र 9.1 संसार के सात सबसे बड़े देश (क्षेत्रफल के अनुसार) और उनी जनसंख्या
जनसंख्या के आधार पर सात देशों का क्रम देखिए। उन देशों के नाम बताइए जो भारत से क्षेत्रफल में बड़े हैं पर जिनकी जनसंख्या भारत से कम है।

हमारी जनसंख्या का असमान वितरण

1991 में भारत की जनसंख्या का औसत घनत्व 267 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था। अब यह 300 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। इसके आधार पर पूरे देश को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। 0 से 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर वाले प्रदेश विरल जनसंख्या के वर्ग में हैं। जहाँ जनसंख्या 100 से 200 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, वह मध्यम जनसंख्या का क्षेत्र है। वे क्षेत्र, जहाँ जनसंख्या घनत्व 200 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, घनी जनसंख्या वाले हैं।

भारत के विरल जनसंख्या वाले प्रदेश : आइए भारत के जनसंख्या-घनत्व वाले मानचित्र का अध्ययन करें। देश के उत्तरी आधे भाग की अंतर्राष्ट्रीय सीमा को देखिए। पश्चिम में, गुजरात में कच्छ का पूरा इलाका तथा राजस्थान का पश्चिमी आधा भाग निम्न से अति निम्न जनघनत्व का प्रदेश है। झेलम नदी के साथ-साथ विस्तृत कश्मीर घाटी एवं जम्मू में तावी घाटी को छोड़कर जम्मू और कश्मीर का शेष भाग अत्यधिक विरल जनसंख्या का क्षेत्र है। हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश के गढ़वाल और कुमायूँ प्रदेशों में अंतर्राष्ट्रीय सीमा के साथ लगा हिमालयी क्षेत्र भी अत्यधिक विरल जनसंख्या का प्रदेश है। अपने पड़ोसी देश नेपाल को छोड़कर सिक्किम की ओर चलें। यह भी इसी वर्ग में आता है। इसके बाद फिर भूटान को छोड़ कर, हम अपने सबसे उत्तर-पूर्वी राज्य अरुणाचल प्रदेश में प्रवेश करते हैं। भारत के इतने बड़े राज्य में जनसंख्या बहुत ही विरल है। यह सिर्फ 10 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

अब यहाँ से दक्षिण की ओर म्यंमार की सीमा के साथ आगे बढ़ने पर नागालैंड, मणिपुर और मिज़ोरम के राज्य स्थित हैं। इन सबका जनसंख्या घनत्व निम्न से अति-निम्न श्रेणी में है। इन राज्यों के कुछ क्षेत्र अधिक आबादी वाले हैं। बांग्लादेश की सीमा की ओर बढ़ने पर मेघालय राज्य आता है। यह निम्न जनसंख्या-घनत्व का प्रदेश है।

इन प्रदेशों में निम्न से अति-निम्न जनसंख्या-घनत्व होने के कारण भिन्न-भिन्न हैं। कच्छ और थार मरुस्थल में अति-निम्न जनसंख्या घनत्व का कारण वहाँ की अत्यधिक शुष्कता है। इन प्रदेशों में वर्षा बहुत कम और अनिश्चित है। यह गर्म मरुस्थल का विशिष्ट उदाहरण है जहाँ जीवन को आधार देने के लिए वनस्पति की कमी है।

जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश का उत्तराखंड, ये सभी ऐसे प्रदेश हैं जहाँ की भूमि असमान और पथरीली है तथा वे ऊँचाई पर अवस्थित हैं। उनके एक बड़े भूभाग पर वर्ष के अधिकतर महीनों में बर्फ जमी रहती है। परिणामस्वरूप वहाँ जीवन कठिन है। इसी प्रकार सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश जैसे राज्यों में पहाड़ी भूभाग होने के अलावा वर्ष के अधिकतर महीनों में अत्यधिक वर्षा होती है। कठिन परिस्थितियों के कारण ही यहाँ भी जनसंख्या विरल है।

म्यंमार और बांग्लादेश की सीमाओं से लगे राज्यों में कठिनाइयाँ अधिक ऊँचाई या बर्फ जमने की नहीं, अपितु अत्यधिक और लंबी अवधि तक होने वाली वर्षा की है। फलस्वरूप सघन वन और बाढ़ के कारण यहाँ जीवन बहुत कठिन है।

ऐसे निम्न जनसंख्या-घनत्व वाले क्षेत्र भारत के प्रायद्वीपीय खंड के उत्तरी भागों में अपेक्षाकृत छोटे पॉकेटों में पाए जाते हैं। इनमें मध्य प्रदेश का बस्तर ज़िला सर्वप्रमुख है। ऐसे अन्य प्रदेश छोटानागपुर पठार और पश्चिमी उड़ीसा में पूर्वी घाटी की पहाड़ियाँ और आंध्र प्रदेश का उत्तरी भाग हैं।

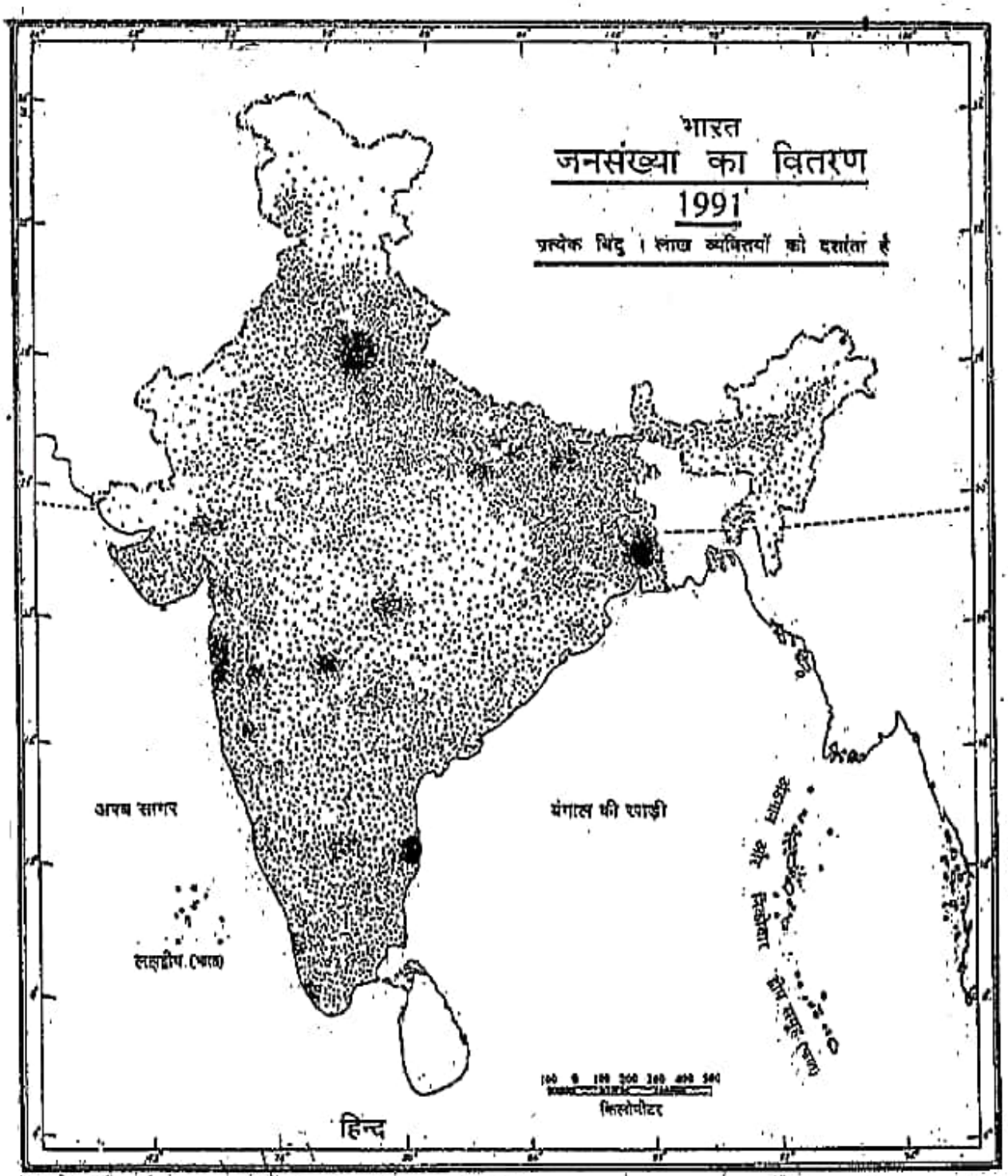

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परंतु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

चित्र 9.2 भारत—जनसंख्या का वितरण, 1991
भारत में सघन जनसंख्या वाले क्षेत्रों को देखिए। किन क्षेत्रों में जनसंख्या सबसे कम है और क्यों?

मध्यम जनसंख्या-घनत्व के प्रदेश : तमिलनाडु और पश्चिमी कर्नाटक के पठारों को छोड़कर भारत के प्रायद्वीपीय खंड का अधिकांश भाग इस वर्ग में आता है। अरावली के पूर्व राजस्थान का दक्षिणी और दक्षिण-पूर्वी हिस्सा भी इसी में सम्मिलित है। पिछले वर्ग में उल्लिखित मध्य प्रदेश के कुछ पॉकेटों को छोड़कर इस राज्य का शेष भाग इसी वर्ग में है। पश्चिमी उड़ीसा का पठार आंध्र प्रदेश में तेलंगाना और महाराष्ट्र में सह्याद्रि के पूर्वी ढाल के कुछ भाग भी मध्यम जनसंख्या-घनत्व के प्रदेश हैं।

इस प्रदेश के पश्चिमी भाग के बीच-बीच में शैलों की विशेषता निम्न वर्षा और असमान गहराई वाली काली मृदा है। पूर्वी भाग अधिक अविच्छिन्न और ऊँचा-नीचा है। यह कम गहराई वाली लाल मृदा से ढका हुआ है। कुल मिलाकर यह प्रदेश पहाड़ी और कम गहराई वाली अनुपजाऊ मिट्टी से ढका है। इस प्रकार जनसंख्या-घनत्व वर्षा की कम से मध्यम मात्रा, भूमि की पथरीली प्रकृति और मृदा की उपस्थिति पर निर्भर है।

उच्च जनसंख्या-घनत्व के प्रदेश : यह प्रदेश मुख्य रूप से उत्तरी मैदान के अनुरूप है। पश्चिम में यह पंजाब और हरियाणा से पूर्व में असम में ब्रह्मपुत्र घाटी तक फैला है। इनके बीच उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के मैदान सम्मिलित हैं। इस प्रदेश में गुजरात का मैदान, उत्तरी कोंकण और संपूर्ण केरल को सम्मिलित करते हुए मालाबार तटीय मैदान आते हैं। तमिलनाडु और कर्नाटक के पठार तथा आंध्र प्रदेश और उड़ीसा और तटीय पट्टी, जो अंततः गंगा के मैदान में मिल जाते हैं, इसी वर्ग में हैं।

कुल मिलाकर यह प्रदेश अच्छी वर्षा प्राप्त करता है। पुनः संभरणीय भूमिगत जल संसाधन का भी लाभ इसे प्राप्त है। इस प्रदेश की नदियों द्वारा यहाँ एक बड़े भाग पर सिंचाई की सुविधा भी मिलती है। यह प्रदेश अत्याधिक समतल है और बहुत गहरी जलोढ़ मृदा से ढका है। इसे भारत का अनाज-भंडार भी कहते हैं। यह प्रदेश कृषि-आधारित उद्योगों, जैसे वस्त्र-निर्माण, चीनी और खाद्य-तेल, के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ यातायात और परिवहन का जाल बिछा हुआ है। इसकी एक महत्वपूर्ण परिसंपत्ति सस्ते श्रम की बहुलता है।

इस प्रदेश में पश्चिम बंगाल सर्वाधिक जन-घनत्व (767 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर) के साथ सबसे ऊपर है। इसके बाद केरल (749), बिहार (497), उत्तर प्रदेश (473), पंजाब (403), हरियाणा (369) और असम (286) का स्थान है।

पुरुषों और स्त्रियों के मध्य जनसंख्या का वितरण

जनसंख्या में पुरुषों और स्त्रियों दोनों की संख्या सम्मिलित होती है। मार्च 1991 को भारत की कुल जनसंख्या 84.63 करोड़ थी। इसमें पुरुषों की संख्या 43.92 करोड़ और स्त्रियों की संख्या 40.71 करोड़ थी। दूसरे शब्दों में, पुरुषों की संख्या स्त्रियों से 3.21 करोड़ अधिक थी। यह संख्या आस्ट्रेलिया की जनसंख्या की दुगुनी है। इसमें दोनों के बीच का अंतर कितना अधिक है, यह स्पष्ट हो जाता है।

यह बात स्त्री-पुरुष अनुपात से और भी साफ हो जाती है। यह अनुपात प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है। भारत में, 1901 में प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या में लगातार हो रही कमी को दिखाता है। 1991 में, यह अनुपात घटकर प्रति 1000 पुरुषों पर 927 स्त्रियों की संख्या तक

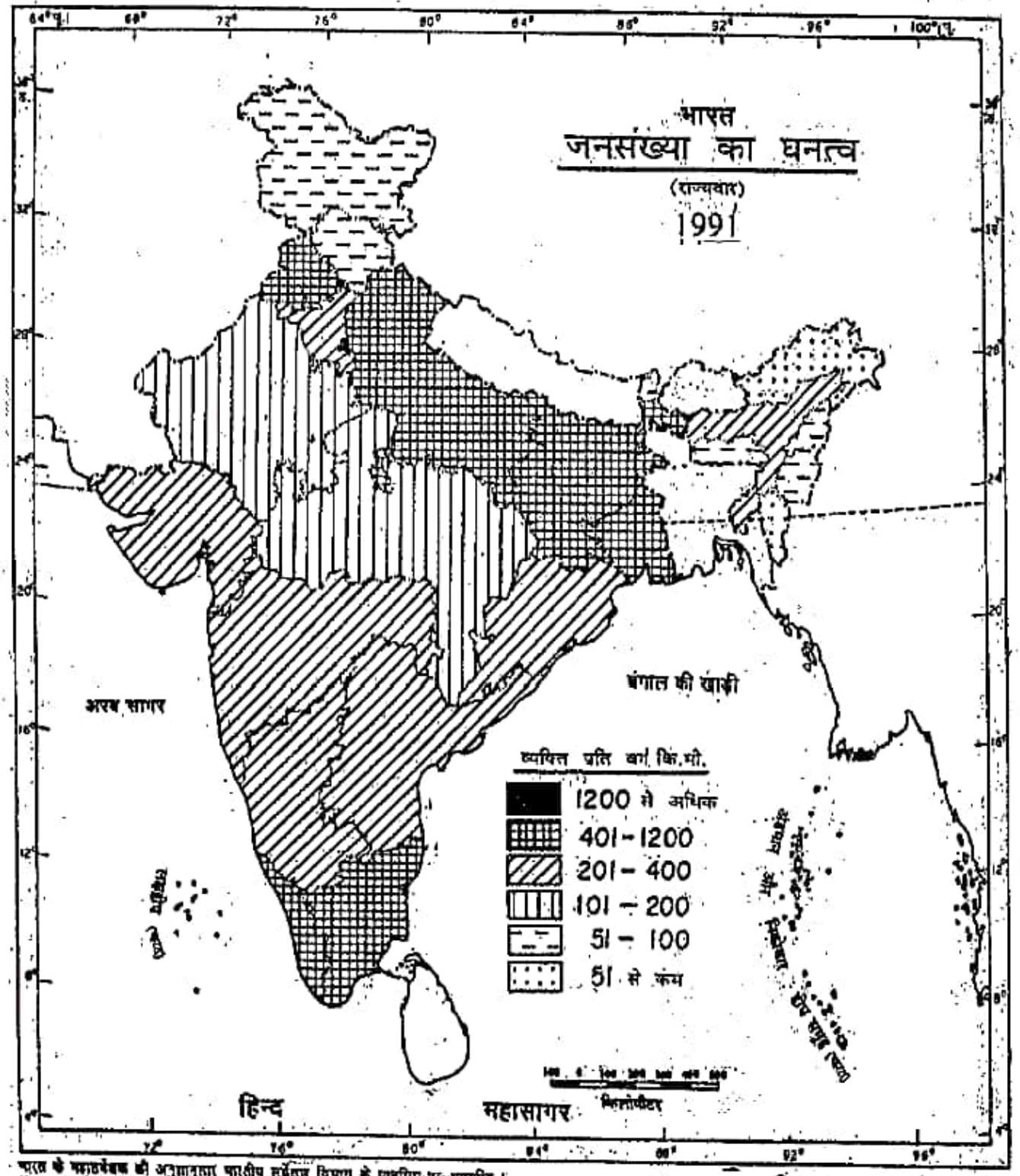

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य से दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दीर्घ अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 199[illegible]

चित्र-9.3 भारत-जनसंख्या का घनत्व (राज्यानुसार)

उन राज्यों के नाम बताइए जिनमें जनसंख्या घनत्व क्रमशः 400 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. और उससे अधिक तथा 100 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से कम है। दोनों वर्गों में कितने-कितने राज्य हैं ? उन राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों के नाम बताइए जहाँ जनसंख्या घनत्व 1200 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से अधिक है। आप क्या प्रारूप देखते हैं ?

पहुँच गया है। निरंतर प्रतिकूल प्रवृत्ति भारत में स्त्रियों के विपक्ष में जाती है। संसार के विकसित देशों में स्त्रियों की आयु पुरुषों की तुलना में अधिक है। उदाहरण के लिए, जापान में स्त्री-पुरुष अनुपात प्रति 1000 पुरुष पर 1,038 स्त्रियों की है और यहाँ स्त्रियों की औसत आयु 84 वर्ष की है जबकि पुरुषों की आयु 77 वर्ष है। हमारे केरल राज्य में भी, जहाँ स्त्रियों की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी है, स्त्री-पुरुष अनुपात लगभग जापान के बराबर है।

भारत में प्रतिकूल स्त्री-पुरुष अनुपात यहाँ स्त्रियों में निम्न साक्षरता दर, उनकी स्थिति निम्न होने का एक और सबूत है और इसके लिए उत्तरदायी कारण भी है। बहुत हाल के वर्षों में स्त्रियों की आयु-प्रत्याशा पुरुषों की तुलना में कुछ सुधरी है। यदि यह प्रवृत्ति बनी रहती है और आगे बढ़ती है तब इस अनुपात में धीरे-धीरे सुधार होगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्री-पुरुष अनुपात नगरीय क्षेत्रों की तुलना में ऊँचा है। इसका कारण श्रमिकों का ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों की ओर प्रवास की आधुनिक प्रवृत्ति है। गाँव में अपने परिवार को छोड़कर पुरुष ही नगरों में रोजगार की तलाश में प्रवास करते हैं। नगरों में काम करते हुए वे अपनी कमाई का कुछ हिस्सा गाँव में अपने परिवार को भेजते हैं।

भारत में स्त्रियों को अपने परिवार और समाज में पुरुषों के बराबर का स्थान मिलना चाहिए। जैसे-जैसे शिक्षित स्त्रियाँ संगठित श्रमबल में अपने घरों और खेतों से बाहर आकर हिस्सा लेने लगती हैं, वे अपने परिवार को छोटा रखने का निर्णय लेने में अधिक स्वतंत्र और अभिप्रेरित होती हैं। वे चाहती हैं कि प्रत्येक बच्चे को उपयुक्त प्यार, स्नेह और ऐसे अवसर मिलें जिससे उनका संपूर्ण विकास हो सके।

नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या का वितरण

हमारा समाज कृषि-प्रधान है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में कृषि और उससे संबंधित व्यवसायों में लगी हुई है। सामान्यतः नगरीय क्षेत्र वे हैं जहाँ 75% जनसंख्या गैर-कृषि कार्यों में लगी हुई है। बीसवीं सदी के प्रारंभ में यानि 1901 में प्रति 9 व्यक्तियों में से केवल 1 व्यक्ति ही नगर में रहता था। नौ दशकों के बाद परिस्थिति काफी बदल गई है। अब प्रति चार में से एक व्यक्ति नगर में रहता है। 1901 में नगरों में रहने वालों की संख्या केवल 2.6 करोड़ थी। 1991 तक यह संख्या बढ़कर 21.8 करोड़ हो गई है। यह संख्या रूस, कनाडा और आस्ट्रेलिया की संयुक्त जनसंख्या से भी अधिक है। यह तथ्य और भी परेशानी उत्पन्न करने वाला है कि हमारी कुल नगरीय जनसंख्या का दो-तिहाई भाग प्रथम श्रेणी के नगरों यानि जहाँ जनसंख्या 100,000 (एक लाख) से अधिक है, में रहता है। निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या अधिकतर अकुशल है और हमारी वर्तमान नागरिक, सामाजिक और सफाई सेवाओं के ऊपर अत्यधिक दबाव डाल रही है।

आज भारत में अत्यधिक जनसंख्या वाले 10 नगरीय ज़िले हैं — कलकत्ता, चेन्नई, बृहत्त मुंबई, हैदराबाद, दिल्ली, चंड़ीगढ़, माहे (उत्तरी केरल), हावड़ा और कानपुर शहर। देश की कुल जनसंख्या का 5% इन नगरीय जिलों में रहता है, यहाँ जनसंख्या का औसत घनत्व 6888 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। अब इस संख्या की तुलना पहले भारत की औसत जनसंख्या-घनत्व (267) और फिर अरुणाचल प्रदेश की औसत जनसंख्या-घनत्व (10) से कीजिए।

बड़े राज्यों में, महाराष्ट्र, गुजरात और तमिलनाडु अत्यधिक नगरीकृत राज्य हैं। महाराष्ट्र की कुल जनसंख्या

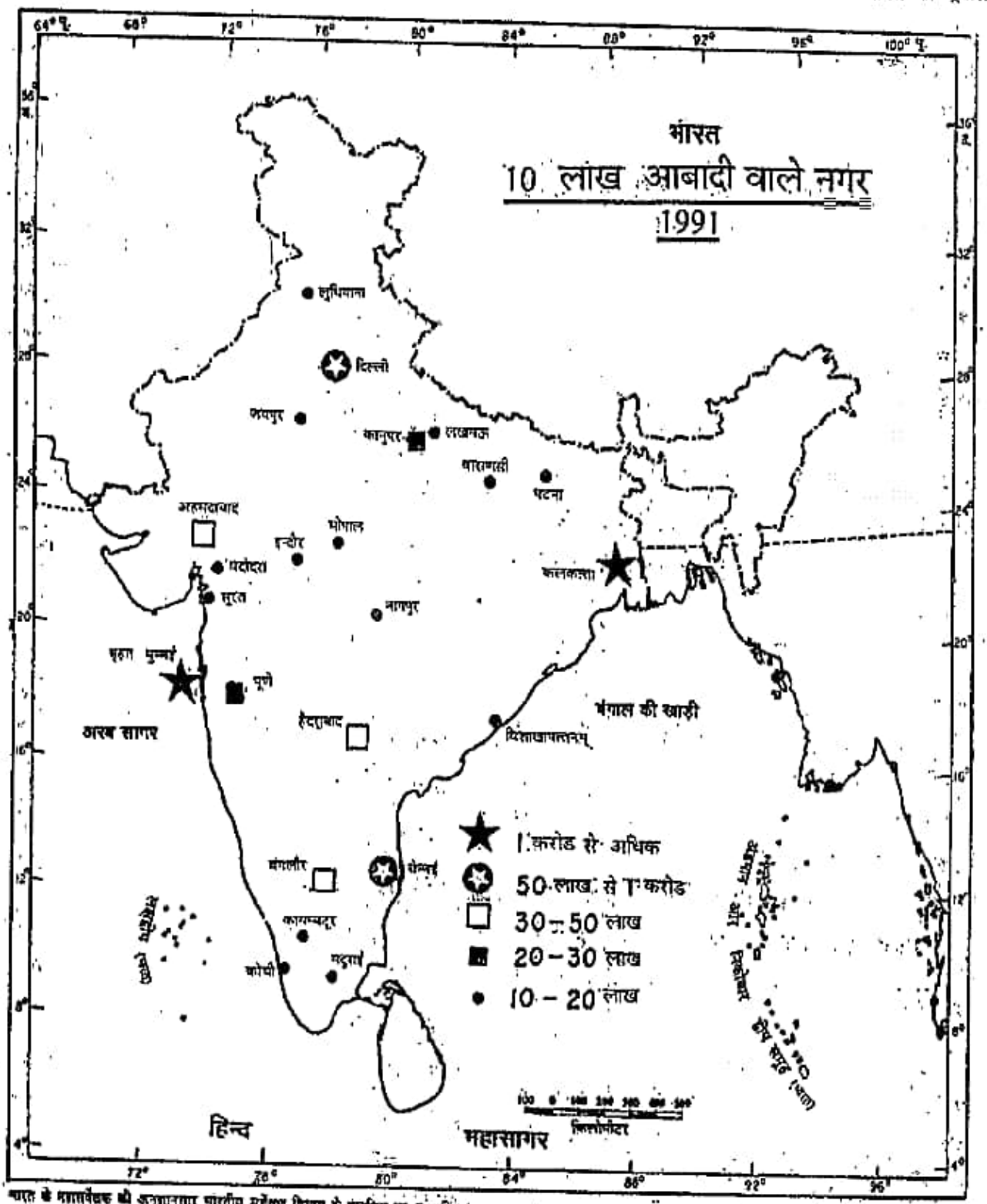

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।
आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।
इस मानचित्र में दर्शित अक्षांतिन्यास विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1996

चित्र 9.4 भारत–दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर

दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों के पांच वर्गों में आने वाले नगरों के नाम लिखिए। प्रत्येक वर्ग में कितने नगर हैं ? किस राज्य में दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर सर्वाधिक हैं ?

का 38.69% अब क्रमशः नगरों में निवास करता है। इसके बाद क्रमशः गुजरात (34.49%) और तमिलनाडु (34.15%) का स्थान है।

एक और विशेष बात दस लाख से ऊपर आबादी वाले नगरों की संख्या में तीव्र वृद्धि है। 1981 में 10 लाख से अधिक आबादी वाले 12 नगर थे, जिनका नाम इस प्रकार है — कलकत्ता, मुंबई, दिल्ली, चेन्नई, बंगलौर, हैदराबाद, अहमदाबाद, पुणे, कानपुर, नागपुर, लखनऊ और जयपुर। 1991 तक उनकी संख्या बढ़ कर 23 हो गई और उनमें सूरत, कोची, वदोदरा, इंदौर, कोयम्बतूर, पटना, मदुरै, भोपाल, विशाखापत्तनम, लुधियाना और वाराणसी का नाम जुड़ गया। जबकि मुंबई महानगर की जनसंख्या 1.25 करोड़ है, वाराणसी की जनसंख्या केवल 10.3 लाख है।

90 वर्षों से अधिक की अवधि में ग्रामीण जनसंख्या लगभग तिगुनी ही बढ़ी है — 21.3 करोड़ से 62.9 करोड़। लेकिन इसी अवधि में नगरीय जनसंख्या में आठ गुने से अधिक वृद्धि हुई है — 2.6 करोड़ से 21.8 करोड़। आज की नगरीय जनसंख्या 1901 की ग्रामीण जनसंख्या से भी अधिक है।

सारणी 9.4

मुख्य आयु-वर्गों में जनसंख्या का वितरण

आयु वर्ग	1981 (प्रतिशत में)	1991 (प्रतिशत में)
0-14	39.5	37.25
15-59	54.3	55.99
60 और उससे अधिक	6.2	6.76
कुल	100	100

जब भारत की जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही थी, उस समय कुल जनसंख्या का 44% युवा वर्ग का था। 1981 तक यह घटकर 39.5% और 1991 में 37.25% पहुँच गया है।

पिछले दशक में वृद्धों की जनसंख्या में थोड़ी वृद्धि हुई है और यह 6.2% से 6.76% हो गई है। यह इसका संकेतक है कि शिक्षा का प्रसार होने और स्वास्थ्य सुविधाओं के बेहतर होने और अधिक लोगों तक इनको उपलब्ध कराने के कारण, लोगों की औसत आयु बढ़ी है। औसत जीवन-प्रत्याशा 1951 से अब तक लगभग दोगुनी से अधिक हो गई है। स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिए यह अब 60 वर्ष से ऊपर पहुँच गई है।

बच्चे और वृद्धों दोनों ही वर्गों की विशिष्ट मांगें विशेष रूप से स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधाओं की होती हैं। आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या के संसाधनों पर बच्चों की शिक्षा की भी मांग होती है। ये दोनों ही वर्ग, मध्य आयु-वर्ग (15-59 वर्षों) के ऊपर आश्रित होते हैं। आश्रित-अनुपात निकालने के लिए आश्रित जनसंख्या को अर्जक जनसंख्या से भाग देकर 100 से गुणा करते हैं। 1981 में यह अनुपात भारत में 83 था, जबकि जापान में 48.8 था। 1991 में भारत में स्थिति कुछ सुधरी है और यह अनुपात घटकर 78 हो गया है। आगे आने वाले कुछ दशकों में यह अनुपात और भी घट सकता है जब जन्म दर और नीचे आएगा। हमें उन वृद्ध आयु-वर्ग को कुछ और संसाधन उपलब्ध कराने होंगे, जिनका प्रतिशत कुल जनसंख्या में जीवन-प्रत्याशा बढ़ने के साथ-साथ बढ़ता जाएगा।

साक्षरता : इसका महत्त्व और वितरण

साक्षरता के द्वारा ही सूचनाएँ और ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यह अपने मूल्यों और जीवन के तरीकों, विशेष रूप से सफाई और पोषण में परिवर्तन लाने का प्रमुख द्वार है। यह एक माध्यम है जिसके द्वारा व्यावसायिक

तकनीकी और प्रौद्योगिकी कुशलताएँ प्राप्त की जा सकती हैं, जिसके द्वारा व्यक्ति-विशेष की आर्थिक और सामाजिक उत्पादकता का विकास होता है।

1951 में भारत में कुल साक्षरता दर केवल 18.33% था। 1991 में यह बढ़कर 52.21% हो गया जो तीन गुने से कुछ कम की वृद्धि दर्शाता है। यदि हम उसी अवधि में केवल पुरुष साक्षरता को देखें, यह 27.16% से बढ़कर 64.03% तक पहुँच गई है। दूसरे शब्दों में, प्रति तीन पुरुषों में दो अब साक्षर हैं। स्त्रियों की स्थिति इस अवधि में पाँच गुनी अधिक अच्छी हुई है। उनका प्रतिशत 8.86 से बढ़कर 29.29 हो गया है। परन्तु इसके बाद भी पुरुषों से यह बहुत कम है। और इस दिशा में प्रयास जरूरी है। आज प्रति पाँच स्त्रियों में से सिर्फ दो ही साक्षर हैं। स्त्रियों की साक्षरता का दूरगामी प्रभाव होता है। महात्मा गांधी का कहना था कि यदि एक स्त्री को साक्षर बनाया जाए तो पूरा परिवार साक्षर हो जाता है। परन्तु पुरुषों के लिए यह आवश्यक नहीं है।

साक्षरता में भी ग्रामीण क्षेत्र पर्याप्त संसाधनों और अभिप्रेरण के अभाव में पिछड़ जाते हैं। केरल में पुरुष और स्त्री साक्षरता दरों में कोई विशेष अंतर नहीं है। इसी प्रकार यहाँ ग्रामीण और नगरीय साक्षरता दरों में भी कोई खास अंतर नहीं है। दूसरी ओर, बिहार और राजस्थान जैसे राज्य हैं जो निम्नतम स्तर पर हैं। उदाहरणस्वरूप बिहार में पुरुष साक्षरता 52.49% है और स्त्री साक्षरता मात्र 22.89% है। ग्रामीण क्षेत्र में तो 1991 में स्त्री साक्षरता केवल 11.59% थी।

स्त्री साक्षरता में वृद्धि और लड़कियों की स्कूली शिक्षा की अवधि बढ़ाने से उनके विवाह की आयु में भी वृद्धि होती है। इससे मातृ-मृत्यु एवं शिशु-मृत्यु दरों में कमी होने की संभावनाएँ बढ़ती हैं, जो छोटे परिवार की योजना के लिए पूर्व शर्त है।

व्यावसायिक संरचना

हमारे देश की व्यावसायिक संरचना में बड़ा असंतुलन है। आज भी हमारी जनसंख्या का 64% कृषि पर आश्रित है। जिसमें मत्स्यन, वानिकी एवं पशुपालन भी सम्मिलित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में कुल जनसंख्या का 5% ही ऐसे कार्यों में लगा हुआ है। जापान में यह संख्या कुछ अधिक है, फिर भी वह 10% से कम ही है। यह खंड प्राकृतिक संसाधनों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। अर्थव्यवस्था का द्वितीयक खंड प्राकृतिक संसाधनों को विनिर्मित वस्तुओं के रूप में परिवर्तित करता है। विकसित देशों में उनके श्रम का लगभग एक-चौथाई विनिर्माण उद्योगों में लगा हुआ है। यह खंड विशेष महत्त्व का है क्योंकि यह अकेले मूल्य-अभिवृद्धि के लिए प्रत्यक्ष रूप से संबंध रखता है। इसी के द्वारा राष्ट्रीय संपत्ति और आय में वृद्धि होती है। भारत इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में केवल 10% ही है। पूँजी और आधुनिक प्रौद्योगिकी की कमी मुख्य बाधाएँ हैं। हमारे कुल श्रम का शेष एक-चौथाई तृतीयक सामाजिक सुविधाओं जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, यातायात, संचार, बैंक, बीमा, मनोरंजन, कला आदि में लगा हुआ है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि हमें कृषि क्षेत्र से एक बहुत बड़े भाग को जो बहुत हद तक अल्परोजगार में लगे हैं, हटाना होगा और दूसरे क्षेत्रों में लगाना होगा तभी हमारी कुल राष्ट्रीय उत्पाद—समाज द्वारा जनित कुल राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी। अपने देश में लोगों के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने का यही एकमात्र तरीका है।

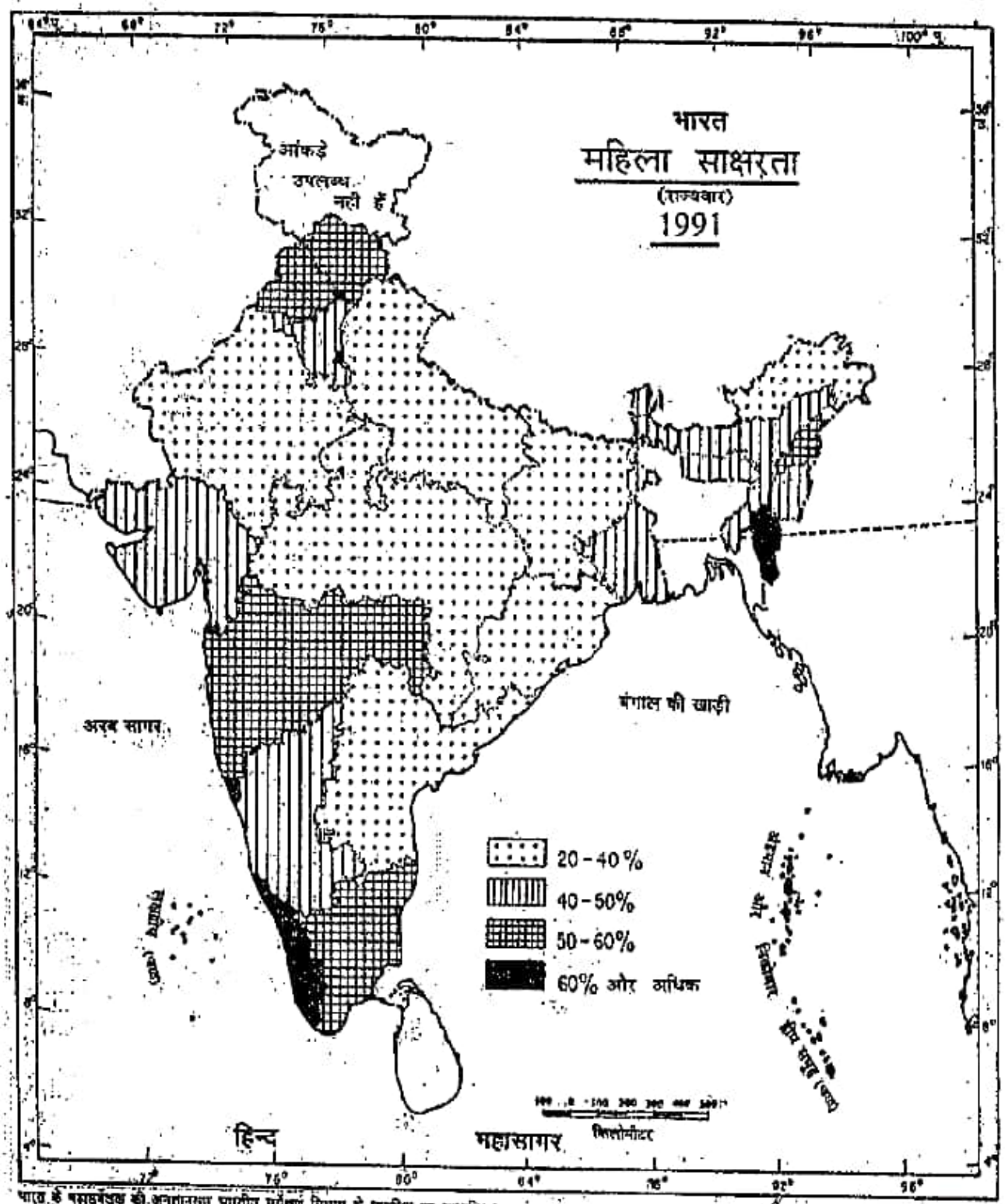

भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

समुद्र में भारत का जलप्रदेश, उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।

इस मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश, असम और मेघालय के मध्य में दर्शायी गयी अन्तर्राज्य सीमा, उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वाचनानुसार दर्शित है, परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

आन्तरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

इस मानचित्र में दर्शित अक्षांश/देशांतर विभिन्न स्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1996

चित्र 9.5 भारत—स्त्री-साक्षरता का वितरण (राज्यानुसार)

उन राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को देखिए जहाँ स्त्री-साक्षरता दर 60 प्रतिशत और उससे अधिक है। उन राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों के भी नाम बताइए जहाँ स्त्री-साक्षरता 40 प्रतिशत से कम है।

जनसंख्या वृद्धि तीव्र कैसे होती है ?

किसी प्रदेश में जनसंख्या स्थिर रह सकती है यदि जन्म दर और मृत्यु दर दोनों एक दूसरे को संतुलित करते रहें और दोनों प्रकार के प्रवासनों को इससे अलग रखा जाए। ऐसा कई विकसित देशों में बहुत है। कुछ देशों में जन्म दर मृत्यु दर से कम हो गई है। ऐसे देशों में जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि दर में कमी आई है। लेकिन भारत जैसे बहुत से विकासशील देशों में मृत्यु दर की अपेक्षा जन्म दर अधिक है और इसलिए प्राकृतिक वृद्धि दर भी अधिक है।

सारणी 9.5

भारत—जन्म दर, मृत्यु दर और प्राकृतिक वृद्धि दर 1901—1997

दशक	जन्म दर (प्रति हजार)	मृत्यु दर (प्रति हजार)	एक दशक में प्राकृतिक वृद्धि	वार्षिक वृद्धि दर (%)
1901-11	49.2	42.6	6.6	0.6
1911-21	48.1	47.2	0.9	0.09
1921-31	46.2	36.3	10.1	1.01
1931-41	45.2	31.2	14.0	1.40
1941-51	39.9	27.4	12.5	1.25
1951-61	41.7	22.8	18.9	1.89
1961-71	41.2	19.0	22.2	2.22
1971-81	37.2	15.0	22.2	2.22
1981-91	29.5	9.8	19.7	1.97
1991-97	27.2	8.9	18.3	1.83

भारत में 1901 और 1921 के बीच, जन्म दर और मृत्यु दर दोनों ही बहुत ऊँचे थे जिससे दोनों एक दूसरे को काट रहे थे। 1911-21 में प्राकृतिक वृद्धि दर बहुत कम (0.09% प्रति वर्ष) थी। यदि हम मृत्यु दर को देखें तो 1901 से 1997 तक आते-आते यह कम होकर 8.9 प्रति हजार व्यक्ति तक पहुँच गई है। लेकिन इसी अवधि में जन्म दर उसी गति से कम नहीं हुई। 49.2 प्रति हजार से कम होकर यह 27.2 प्रति हजार हो गई है परन्तु यह उसका आधा भी नहीं है। जन्म दर और मृत्यु दर के बीच सर्वाधिक अंतर 1961-71 के दशक में था। उस समय वार्षिक प्राकृतिक वृद्धि दर 2.22% था। उस समय से 1991-97 तक यह धीरे-धीरे कम होकर 1.83% प्रति वर्ग पहुँच गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि मृत्यु दर से आई कमी का कारण हमारी स्वास्थ्य सुविधाओं एवं शिक्षा के विस्तार एवं जन-जागृति के लिए किए गए प्रयास हैं।

अब ऐसी प्रवृत्ति बन गई है कि भारत की कुल जनसंख्या में अगले कुछ वर्षों तक वृद्धि होगी, परन्तु प्राकृतिक वृद्धि दर की गति में कमी होगी। यह वृद्धि दर जो 1971 में 2.22% प्रति वर्ष थी, घटकर 1997 में 1.83% प्रति वर्ष हो गई है। कुल जनसंख्या में वृद्धि होने के साथ-साथ प्रत्येक दशक के अंत में जनसंख्या-आधार बड़ा हो रहा है और इसलिए प्राकृतिक वृद्धि दर यदि थोड़ी भी बढ़ती है तो कुल जनसंख्या में जुड़ने वाली वास्तविक संख्या तेजी से बढ़ती है। 1981-91 में 16.3 करोड़ लोगों की शुद्ध संख्या जुड़ी थी जो उसके पिछले दशक में जुड़ी संख्या (15.52 करोड़) से अधिक थी जबकि प्राकृतिक वृद्धि में कुछ कमी आई थी।

जनसंख्या और पर्यावरण

विशाल और तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए हमारा पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण सरोकार छोटे-बड़े सभी के भोजन की आवश्यकता को पूरा करना है। हमें पूरे विश्व की आधुनिक प्रवृत्ति के अनुरूप सबको पर्याप्त, पोषक और संतुलित आहार उपलब्ध कराने की योजना बनाना और उसे कार्यान्वित करना है। हमारे परिश्रमी किसानों, कृषि वैज्ञानिकों और प्रशासकों के लिए यह बहुत बड़ी चुनौती है। हमारी मुख्य आवश्यकता इस समय सिर्फ अधिक उत्पादकता को निरंतर बढ़ाए रखने की है। हमारे पास कृषि के अंतर्गत लाने योग्य अतिरिक्त भूमि शायद ही बच पाई है। वास्तव में कृष्य-भूमि का एक बहुत बड़ा भाग आवासीय और अन्य उपयोगों में बदल रहा है। ऐसा अपने समाज के यथाशीघ्र औद्योगिक होने के उद्देश्य से बदलते स्वरूप के कारण हो रहा है। हमें ऐसे बीजों को विकसित करने की आवश्यकता है जो अधिक उत्पादन देते हैं और जल्दी तैयार हो जाते हैं। उन्हें आनुवांशिक तरीके से विकसित करने की जरूरत है और इस प्रक्रिया में लंबा समय लगता है।

हमारा देश जून 2000 में एक अरब जनसंख्या वाला देश हो गया और अगले चार दशकों में डेढ़ अरब की संख्या पार कर जाएगा। स्वतंत्रता के समय 5-5.5 करोड़ टन से बढ़कर हमारा खाद्यान्न उत्पादन 20 करोड़ टन हो गया है। वर्तमान जनसंख्या विस्फोट का सामना करने के लिए हमें इस उत्पादन को 10 करोड़ टन और बढ़ाने की आवश्यकता है। इससे हम केवल अपने पोषण के स्तर को आज के स्तर पर बनाए रखने में समर्थ होंगे।

हमें प्रत्येक प्रकार के खाद्यान्न और अन्य फसलों — अनाज, दालें, तेलहन, सब्जियाँ, फल, गन्ना, पेय फसलें, रेशेवाली फसलें, एवं रबर का उत्पादन और प्रति हैक्टेयर उपज बढ़ाने की आवश्यकता है।

इस समय जब हम देश के धरातल और भूमिगत दोनों जल संसाधनों में संतृप्ति स्थिति के नज़दीक पहुँच चुके हैं, हमें अपनी भूमि का अधिक से अधिक क्षेत्र सिंचाई के अंतर्गत लाना है। इसके लिए और अधिक बांधों, कुओं और नलकूपों की आवश्यकता होगी। नई और कल्पनाशील कृषि पद्धतियों — औजारों, उपकरणों और नियंत्रणीय मशीनों का विकास करना और उन्हें लोकप्रिय बनाना होगा। इसके लिए बहुत बड़ी मात्रा में पूँजी निवेश और प्रोत्साहन की आवश्यकता है। बेहतर पीड़क जंतु प्रबंध, भंडारण और प्रशीतन सुविधाओं का प्रसार, फसलों के कटने के बाद के चरण में होने वाली क्षति से बचाव, किसानों को ऋण और बाज़ार की बेहतर सुविधाएँ तथा फसलों के लिए लाभकारी मूल्य सुनिश्चित करना, ऐसे कुछ काम हैं जिन्हें हमें करना है।

कृष्य भूमि का प्रति व्यक्ति हिस्सा एक पुश्त से दूसरे पुश्त में निरंतर बहुत तेजी से कम होता जा रहा है। अधिक से अधिक लोग भूमिहीन की श्रेणी में आ रहे हैं। चरागाहों और वनों में अतिक्रमण होने से हमारी अर्थव्यवस्था ही नहीं अपितु पहले से ही नाजुक पारिस्थितिकी संतुलन को भी भारी नुकसान पहुँचा है। तीव्र नगरीकरण और आद्योगीकरण के कारण हर प्रकार का प्रदूषण—मृदा, जल, वायु और ध्वनि, बढ़ा है। हमारे भूमि और जल संसाधन असीमित नहीं हैं। हम बहुत तेजी से उस सीमा तक पहुँच रहे हैं। संभव है हम उस स्थिति पर पहुँच जाएँ, जब भूमि से ह्रासमान प्रतिफल मिलने लगें।

खनिज संसाधनों का विकास वैज्ञानिक और प्रबुद्ध तरीके से करने की जरूरत है। ज्ञात जीवाश्म ईंधनों विशेष रूप से खनिज तेल और प्राकृतिक गैस के निचय समाप्त होने के कगार पर हैं, जिससे हमें कोयले के उपभोग के लिए फिर से बाध्य होना पड़ा है। हमें औद्योगिक प्रदूषण के लिए भी तैयार रहना होगा।

हमारी बहुत तेजी से बढ़ती अपेक्षाएँ और बदलती जीवन-शैली के कारण हमारा समाज उपभोक्तावाद और अप्रत्ययपूर्ण जीवन-शैली की ओर बढ़ रहा है। अगले कुछ दशकों में इनका दूरगामी प्रभाव हमारे पर्यावरण और पारिस्थितिकी संतुलन को नुकसान पहुँचाने के रूप में, सामने आ सकता है। इसके लिए हमें स्त्री और पुरुष दोनों में नेतृत्व का विकास करना है, और अपने पर्यावरण को हर प्रकार से सुरक्षित रखने के लिए स्थानीय तृणमूल स्तर से ऊपर की ओर कार्य-योजना बनाना है।

अभ्यास

पुनरावृत्ति प्रश्न

1. भारत और चीन की तुलना निम्नलिखित के संदर्भ में कीजिए —
   (1) कुल क्षेत्रफल (2) कुल जनसंख्या (3) संसार की जनसंख्या में इनका हिस्सा (4) औसत जन-घनत्व।
2. संसार के ताजे जल संसाधन और जनसंख्या के संदर्भ में चीन की क्या स्थिति है ?
3. भारत में तीन अत्यधिक विरल जनसंख्या के क्षेत्रों के उदाहरण दीजिए और प्रत्येक के लिए उत्तरदाई विशिष्ट कारण बताइए।
4. पश्चिम बंगाल भारत का सर्वाधिक जन-घनत्व वाला राज्य क्यों है ? तीन कारण बताइए।
5. 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में स्त्री और पुरुष जनसंख्या का वास्तविक अन्तर करोड़ में बताइए।
6. 1901 और 1991 में नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत की तुलना कीजिए।
7. तमिलनाडु, गुजरात और उत्तर प्रदेश, प्रत्येक से तीन-तीन "दस लाख से ऊपर" नगरों के नाम बताइए।
8. पर्यावरण और उपलब्ध नागरिक सुविधाओं पर नगरों की संख्या में तीव्र वृद्धि का क्या प्रभाव पड़ा है ?
9. आश्रित-अनुपात क्या है ? जापान और भारत में इस अनुपात की तुलना करने से क्या निष्कर्ष निकलता है?
10. स्त्री साक्षरता में वृद्धि होने से परिवार को नियोजित करने में किस प्रकार सहायता मिलती है ?
11. हमें अपने लोगों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के लिए विनिर्माण उद्योगों का विकास करना क्यों आवश्यक है।
12. निम्नलिखित कथन को सही अंश चुनकर पूरा कीजिए —
    भारत की जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है क्योंकि
    1. जन्म दर में निरंतर वृद्धि हुई है।
    2. दस लाख से ऊपर के नगरों में निरंतर वृद्धि है।
    3. उच्च जन्म दर और निम्न मृत्यु दर बेमेल है।
    4. शिशु मृत्यु दर अत्यधिक निम्न है।

13. अपने अनुभव के आधार पर दैनिक जीवन से तीन उदाहरण दीजिए कि किस प्रकार बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण की प्रकृति और गुण को प्रभावित करती है।

14. निम्नलिखित प्रत्येक कथन के लिए एक पारिभाषिक शब्द बताइए —

1. प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या
2. कुल क्षेत्रफल के प्रति वर्ग किलोमीटर पर व्यक्तियों की औसत संख्या
3. एक वर्ष में प्रति हज़ार जीवित पैदा हुए शिशुओं में एक वर्ष के भीतर मरने वाले शिशुओं की संख्या
4. 10 लाख से अधिक जनसंख्या का नगर
5. एक वर्ष में प्रति हज़ार जनसंख्या में मरने वालों की संख्या।

मानचित्र-कार्य

15. भारत के मानचित्र पर निम्नलिखित दिखलाइए —

1. क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा राज्य
2. सर्वाधिक जन-घनत्व वाला राज्य
3. जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़ा राज्य
4. सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि दर वाला राज्य/संघ शासित प्रदेश
5. सर्वोच्च साक्षरता दर वाला राज्य/संघ शासित प्रदेश

शब्दावली

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार (*International Trade*): राष्ट्रों के बीच, अपने उत्पादों के विनिमय के लिए, किया जाने वाला व्यापार।

अपतट बेधन (*Off shore drilling*): खनिज-तेल निकालने के लिए तट के समीप उथले सागर के तल में गहरे बेधन द्वारा खुदाई।

आधारभूत उद्योग (*Basic industry*): लोहा व इस्पात एवं सल्फ्यूरिक अम्ल जैसे रसायन बनाने वाले उद्योग, जो अन्य उद्योगों के आधार हैं। कभी-कभी इस पारिभाषिक शब्द का उपयोग राष्ट्रीय महत्त्व के भारी उद्योगों के लिए भी किया जाता है।

आयात (*Imports*): दूसरे देशों से अपने देश में लाया जाने वाला माल।

औद्योगिक क्रांति (*Industrial Revolution*): अठारहवीं सदी के मध्य में इंग्लैंड में विनिर्माण-उद्योग में हुआ परिवर्तन जिसमें हाथ से चलने वाले उपकरणों का स्थान शक्ति संचालित मशीनों ने ले लिया।

उपमहाद्वीप (*Subcontinent*): एक बड़ी भौगोलिक इकाई जो शेष महाद्वीप से हटकर विशिष्ट दिखता है।

कृषि भूमि या कृषि योग्य भूमि (*Arable land*): वह भूमि जो वर्तमान समय में जोती जा रही है और जिसपर फसलें उगाई जा रही हैं। इसमें जोती हुई कृषि भूमि और कुछ समय के लिए छोड़ी गई परती भूमि भी शामिल की जाती है।

कृषि (*Agriculture*): भूमि को जोतने, फसलें तथा पौधे उगाने तथा पशुओं को पालने की कला और विज्ञान। इसे खेती भी कहते हैं।

कृषि संसाधन (*Agricultural resources*): प्रकृति की देन जिसमें उपजाऊ मृदा, सिंचाई के लिए पानी तथा पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल जलवायु सम्मिलित हैं।

खनन (*Mining*): भूगर्भ से व्यावसायिक स्तर पर मूल्यवान खनिजों के निष्कर्षण (बाहर निकालने की प्रक्रिया) से संबंधित आर्थिक कार्य।

खनिजकूप (*Shaft Mine*): कोयला, बहुमूल्य पत्थर तथा लोहा जैसे खनिज और खनिज-अयस्कों को निकालने के लिए भूमि के अन्दर गहरी खोदी गई खान। ऐसी खानों में ऊर्ध्वाधर और तिरछे कूप और विभिन्न स्तरों पर बनी क्षैतिज सुरंगें होती हैं।

खनिज (*Mineral*): भूपर्पटी से प्राप्त होने वाला वह पदार्थ जो सामान्यत: शैलों के विपरीत एक निश्चित रासायनिक संघटन वाला होता है।

खनिज-अयस्क (*Mineral Ore*): भूमि के अंदर से निकाले गए धातु जो अपनी कच्ची अवस्था में होते हैं।

खनिज-ईंधन (*Mineral fuel*): कोयला तथा पेट्रोलियम जैसे अधात्विक खनिज जिनका उपयोग ईंधन के रूप में होता है।

खनिज-तेल (*Mineral Oil*): भूगर्भ में पाया जाने वाला ठोस, द्रव या गैस रूपीय हाइड्रोकार्बनों का मिश्रण। इसे साधारणतया पेट्रोलियम कहते हैं।

खरीफ (*Kharif*): भारत में दक्षिण-पश्चिम मानसून (जून-जुलाई) के प्रारंभ होते ही बोई जाने वाली फसलें जिन्हें शरद ऋतु में काटा जाता है।

गौण उद्योग (*Secondary Industry*): वे उद्योग जो प्राथमिक उद्योगों से प्राप्त पदार्थों को मानव जाति के लिए प्रत्यक्ष रूप से अधिक उपयोगी वस्तुओं के रूप में परिवर्तित करते हैं।

छोटे पैमाने के उद्योग (*Small Scale Industries*): वे उद्योग जिनकी प्रत्येक इकाई में अपेक्षाकृत कम संख्या में कर्मचारी नियुक्त होते हैं या जिनमें पूंजी निवेश अपेक्षाकृत कम है॥

जनगणना (*Census*): सरकार द्वारा किसी क्षेत्र के निवासियों की एक निर्धारित तिथि को की जाने वाली गणना, जिसमें कुछ सामाजिक और आर्थिक आँकड़े भी जमा किए जाते हैं। यह गणना एक दशक के अंतराल पर की जाती है।

जन्म-दर (*Birth rate*): एक वर्ष में प्रति 1000 व्यक्तियों में जीवित पैदा हुए शिशुओं की संख्या।

जनसंख्या का घनत्व (*Density of Population*): किसी प्रदेश के एक इकाई क्षेत्रफल (जैसे एक वर्ग किलोमीटर) में रहने वाले लोगों की औसत संख्या।

जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि दर (*Natural growth rate of Population*): एक दिए गए क्षेत्र में एक वर्ष में प्रति 1000 व्यक्तियों में जन्म-दर और मृत्यु-दर के बीच का अंतर।

जलवायु (*Climate*): एक लंबी अवधि (सामान्यतः 30 वर्षों या उससे अधिक) में पृथ्वी के धरातल पर एक बड़े क्षेत्र की औसत मौसमी दशाएँ।

जलविद्युत (*Hydro-electricity*): प्रवाहित या ऊपर से गिरते जल के बल के उपयोग से प्राप्त विद्युत।

जलवायु विभाजक (*Climatic divide*): उच्चावच का एक स्थूल लक्षण जो अपने दोनों ओर के भिन्न जलवायु प्रदेशों को अलग करता है।

जलोढ़ मैदान (*Alluvial plain*): किसी नदी द्वारा लाए गए जलोढ़ या अति सूक्ष्म शैल पदार्थों से निर्मित एक समतल भूभाग।

ढाल की प्रवणता (*Gradient of slope*): किसी क्षैतिज दूरी और उसकी तुंगता या ऊँचाई में आई ऊर्ध्वाधर गिरावट का अनुपात।

तरूण पर्वत या युवा पर्वत (*Young mountain*): वे वलित पर्वत जिनका निर्माण भूपर्पटी के वलित होने की सर्वाधिक नवीन अवस्था के दौरान हुआ है। उदाहरण के लिए हिमालय, आल्प्स, एंडीज और रॉकी।

ताप-विद्युत (*Thermal electricity*): नियंत्रित दशाओं में कोयला और पेट्रोलियम को जलाने अथवा परमाणु खनिजों के विखंडन से उत्पन्न की गई विद्युत।

देश की जीवन-रेखाएँ (*The lifelines of a country*): परिवहन और संचार के आधुनिक साधन जो लोगों को एक दूसरे के निकट लाते हैं और आर्थिक विकास-राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा देश की रक्षा में सहायता पहुँचाते हैं।

नगरीकरण (*Urbanisation*): छोटे ग्रामीण और कृषि समुदायों या गाँवों से लोगों का शहरों की ओर विविध कार्य क्षेत्रों जैसे सरकार, व्यापार, परिवहन और विनिर्माण उद्योग में रोजगार के लिए जाने की एक सतत प्रक्रिया। इससे शहरों और बड़े नगरों में संकेन्द्रित कुल जनसंख्या के बढ़ते हुए अनुपात का पता चलता है।

नलकूप (*Tubewell*): भूमि में गहरा छेद करके बनाया गया कुआँ जिसमें पाईप या नली लगाकर अवमृदा के विशाल जल भंडार से पानी को बिजली की सहायता से निकाला जाता है।

निर्माण-उद्योग (*Manufacturing Industry*): व्यवस्थित उत्पादन जिसकी विशिष्टता श्रम का विभाजन और मशीनों का व्यापक उपयोग है।

निर्यात (*Export*): एक देश से दूसरे देश को भेजा गया माल और सेवाएँ।

निर्वाह-कृषि (*Subsistence agriculture*): वह कृषि जिसमें उत्पादित वस्तुओं का उपभोग किसान मुख्य रूप से अपने ही घर में कर लेता है। इसके विपरीत व्यापारिक कृषि के उत्पादों का बड़ी मात्रा में व्यापार होता है।

पत्तन (*Port*): पोताश्रय का वह व्यापारिक भाग जहाँ जहाजों पर सामान चढ़ाने, उतारने और रखने तथा यात्रियों के चढ़ने व उतरने की सुविधाएँ होती हैं।

परती भूमि (*Fallow land*): कृषि योग्य भूमि जो एक ऋतु या उससे अधिक समय के लिए फसल उगाने के काम में नहीं लाई गई हो।

परमाणु ऊर्जा (*Atomic energy*): नियंत्रित दशा में परमाणु के विखंडन से प्राप्त की गई ऊर्जा परमाणु में नाभिकीय परिवर्तन लाकर यह ऊर्जा प्राप्त की जाती है। इसीलिए इसे परमाणु ऊर्जा कहते हैं।

पर्यावरण (*Environment*): किसी व्यक्ति या वस्तु के आसपास का परिवेश या दशाएँ जिसके अधीन उन व्यक्ति या वस्तु की विशिष्टता विकसित होती है। इसके अंतर्गत भौतिक और सांस्कृतिक दोनों तत्व आते हैं।

पोताश्रय (*Harbour*): समुद्र तट पर अंशत: स्थल भाग से घिरा गहरे पानी का वह विस्तृत भाग जहाँ जहाज लंगर डालकर सुरक्षित रुक सकते हैं। यह आश्रय स्थल प्राकृतिक या कृत्रिम हो सकता है।

प्राकृतिक गैस (*Natural gas*): गैसीय अवस्था में उन्मुक्त हाइड्रोकार्बन, जो सामान्यत: कच्चे खनिज-तेल के साथ भूपर्पटी में प्राकृतिक रूप में मिलता है।

प्राकृतिक संसाधन (*Natural resources*): प्रकृति द्वारा दी गई संपदा जिसमें खनिज निक्षेप, उर्वर मृदा, वन, जल, मत्स्य और वन्य जीवन आदि सम्मिलित हैं।

बड़े पैमाने के उद्योग (*Large scale industry*): वह उद्योग जिसकी प्रत्येक इकाई में बहुत बड़ी मात्रा में श्रमिकों की नियुक्ति और पूँजी निवेश किया जाता है।

बंध बनाना (*Bunding*): फसलों का उत्पादन बढ़ाने के लिए मिट्टी या पत्थरों से बंध-निर्माण की प्रक्रिया जिससे मृदा और जल का संरक्षण हो सके।

भारतीय मानक समय (*Indian Standard Time*): भारत की मानक मध्याह्न रेखा (82° 30° पू॰) का स्थानीय समय, जो पूरे देश के लिए मानक समय है। यह ग्रीनिच समय से साढ़े पाँच घंटे आगे है।

भारी उद्योग (*Heavy industry*): वे उद्योग जिनके कच्चे माल और तैयार उत्पाद दोनों ही भारी तथा अधिक जगह घेरने वाले होते हैं और इसलिए इनका परिवहन-व्यय भी अधिक होता है।

भूमि-जोत की चकबंदी (*Consolidation of holdings*): कृषि-भूमि की छोटी-छोटी जोतों को मिलाने की प्रक्रिया जिससे कृषि आर्थिक दृष्टि से लाभकारी बन सके।

भूमिगत जल या भौम जल (*Ground water*): पृथ्वी के धरातल के नीचे की मृदा और आधार शैल के रंध्रों और दरारों में संचित जल।

महानगर (*Metropolis*): किसी देश या जिले में जनसंख्या के बड़े समूहन वाला स्थान या एक बहुत बड़ा नगर, जो प्रशासनिक, व्यापारिक, अथवा औद्योगिक किसी भी प्रकार के क्रिया-कलाप का मुख्य केन्द्र हो। सामान्यत: यह एक बड़े महानगरीय क्षेत्र या पश्चभूमि को सेवा प्रदान करता है।

मानसून (*Monsoon*): ऐसी जलवायु जिसमें एक बड़े भू-भाग पर एक निश्चित क्रम में पवनों की दिशा पूरी तरह से उलटने से ऋतुओं में परिवर्तन होता है।

मिश्रित खेती (*Mixed forming*): एक प्रकार की कृषि जिसमें फसलें उगाना और पशु पालना दोनों ही कार्य साथ-साथ होते हैं। ये दोनों कार्य अर्थव्यवस्था में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

मृत्यु-दर (*Death rate*): एक वर्ष में प्रति हजार जनसंख्या पर हुई मृत्यु।

रबी (*Rabi*): भारत में शीत ऋतु में बोई जाने वाली फसलें, जिन्हें वसंत ऋतु में काटा जाता है।

राष्ट्रीय पार्क (*National park*): प्राकृतिक वनस्पति, प्राकृतिक सुंदरता और वन्य-जीवन को संरक्षित रखने के लिए आरक्षित किया गया क्षेत्र।

रासायनिक उर्वरक (*Chemical fertilisers*): प्राकृतिक या कृत्रिम तरीके से प्राप्त वे पदार्थ जिनमें फास्फोरस, पोटाशियम और नाइट्रोजन जैसे रासायनिक तत्व पाए जाते हैं और जो पौधों के जीवन के लिए आवश्यक हैं। ऐसे पदार्थों को मृदा में डालकर उनकी उत्पादकता बढ़ाई जाती है।

रोपण कृषि (*Plantation agriculture*): बड़े पैमाने पर की गई एक ही फसल की खेती जो फैक्टरी-उत्पादन की भाँति है। सामान्यत: इसकी विशेषताएँ हैं— बड़ा एस्टेट, विशाल पूँजी निवेश, खेती की आधुनिक और वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग और व्यापार।

लकड़ी काटना (*Lumbering*): वनों में लकड़ी काटने का मुख्य व्यवसाय। इसके अंतर्गत पेड़ काटना, लट्ठे बनाना और उन्हें ढोना जैसी क्रियाएँ सम्मिलित हैं।

लिंग अनुपात (*Sex ratio*): प्रति हजार पुरुषों की संख्या पर स्त्रियों की संख्या का अनुपात।

व्यापार-संतुलन (*Balance of trade*): किसी देश के कुल आयात और कुल निर्यात, आयात से अधिक निर्यात, अनुकूल व्यापार-संतुलन का संकेत देता है।

वनरोपण (*Afforestation*): ऐसे क्षेत्र को, जहाँ सामान्यतः पहले वृक्ष नहीं रहे हों, वन में रूपांतरित करने की प्रक्रिया। वनरोपण मृदा अपरदन को रोकने और जलसंरक्षण के लिए किया जाता है।

वर्धन काल (*Growing season*): किसी क्षेत्र में वर्ष का वह भाग जब वनस्पति या फसलों की वृद्धि अनुकूल तापमान, पर्याप्त वर्षा और हानिकारक पाले से मुक्ति के कारण संभव हो।

वस्त्र उद्योग (*Textile industry*): रेशेदार कच्चे माल को कताई और बुनाई द्वारा संसाधित करके वस्त्र बनाना।

विदेशी मुद्रा (*Foreign exchange*): विभिन्न राष्ट्रीय मुद्रा प्रणालियों के अंतर्गत संचालित होने वाले दो स्थानों के बीच भुगतान की प्रक्रिया जो वास्तविक रूप में मुद्रा या सोना दिए बिना प्रभावी होती है।

विश्वजनीन नगर (*Cosmopolitan city*): एक नगर जहाँ विभिन्न राष्ट्रीयता के लोग एक साथ रहते हों।

शस्यावर्तन (*Rotation of crops*): भूमि के किसी टुकड़े पर विभिन्न फसलों का किसी विशेष क्रम में उगाए जाने की प्रक्रिया जिससे मृदा की उर्वरता बनी रहे।

शुष्क खेती या वर्षाधीन खेती (*Dry farming*): अपर्याप्त या कम वर्षा के क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली कृषि पद्धति जिसमें सिंचाई की सुविधाओं की कमी की पूर्ति मृदा की नमी को संरक्षित करके और सूखे की स्थिति को बर्दास्त करने वाले फसलों को उगा कर किया जाता है।

स्थानांतरी कृषि (*Shifting agriculture*): ऐसी कृषि पद्धति जिसमें जमीन के एक भाग पर उस समय तक खेती की जाती है जब तक उसकी उर्वरता खत्म नहीं होती अथवा उस पर अधिक खर-पतवार नहीं उग जाते। इसके बाद इस भूभाग को प्राकृतिक वनस्पति के अंतर्गत छोड़ दिया जाता है और खेती के लिए अन्य स्थान ढूँढ़ लिया जाता है।

समोच्च रेखीय जुताई (*Contour ploughing*): पहाड़ी ढालों या ढालू भूमि पर समोच्च रेखाओं के साथ-साथ या समान्तर जुताई जिससे मृदा तथा जल का संरक्षण हो सके।

सार्वजनिक क्षेत्र (*Public sector*): अर्थव्यवस्था का वह क्षेत्र जिसमें राज्य या उसकी एजेन्सियाँ आर्थिक क्रियाएँ अपने हाथ में रखती हैं और उत्पादन और वितरण के साधनों पर नियंत्रण रखती हैं।

सिंचाई (*Irrigation*): फसलों का उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषि भूमि पर कृत्रिम तरीके से पानी का वितरण।

हरित क्रांति (*Green revolution*): हमारे देश में कृषि के क्षेत्र में साठ के दशक के बाद हुई प्रगति। इसके अंतर्गत नए प्रकार के बीज, खाद और रासायनिक उर्वरकों और निश्चित जल आपूर्ति की व्यवस्था के कारण उत्पादों, विशेषकर कुछ अनाजों, मुख्यतः गेहूँ की पैदावार में काफी वृद्धि हुई है।

हल्के उद्योग (*Light industry*): वे उद्योग जिसके कच्चे माल और तैयार उत्पाद अधिक भारी नहीं होते और जिनमें महिला श्रम भी कार्यरत हैं।

हिमनदी या हिमानी (*Glacier*): हिम या बर्फ पिंडों की नदी जो अपने जमाव स्थल से धीरे-धीरे ढाल पर खिसकती हुई अपने रास्ते में एक चौड़ी और खड़े ढालवाली घाटी का निर्माण करती है।

हैक्टेयर मीटर (*Heciare-metre*): एक हेक्टेयर समतल भूमि पर विस्तृत एक मीटर गहरे पानी का आयतन। यह 10,000 घन मीटर का होता है।